निर्मल वर्मा और
एम.टी. वासुदेवन नायर के कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन

NIRMAL VARMA AUR

M.T. VASUDEVAN NAIR KE KATHASAHITHYA KA THULANATMAK ADHYAYAN

Thesis submitted to
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
for the award of the degree of

DOCTOR OF PHILOSOPHY

By

PRANEETHA P.

Supervising Teacher

Prof. (Dr.) M. SHANMUGHAN

DEPARTMENT OF HINDI
COCHIN UNIVERSITY OF SCIENCE AND TECHNOLOGY
KOCHI-682 022

2001

Certificate

This is to certify that this thesis is a bonafide record of work carried out by **Smt. Praneetha. P**, under my supervision for Ph.D and no part of this has hitherto been submitted for a degree in any university.

Department of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Cochin-682 022

Dr. M. SHANMUGHAN
Professor
Supervising Teacher

Date: 20.12.2001

ACKNOWLEDGEMENT

This work was carried out in the Department of Hindi, Cochin University of Science and Technology, Kochi-682 022 during the tenure of fellowship awarded to me by the Cochin University of Science and Technology. I sincerely express my gratitude to the Cochin University of Science and Technology for this help and encouragement.

PRANEETHA. P.

Dept. of Hindi
Cochin University of Science and Technology
Cochin-22

Date: 20 12 2001

भूमिका

दरअसल भारतीय साहित्य विभिन्न प्रांतीय भाषाओं में रचित साहित्य का संघात है । इसी वजह भारतीय संदर्भ में तुलनात्मक साहित्य का अपना खास महत्व एवं वर्चस्व भी हैं । सीमित भाषिक दायरे से हटकर प्रत्येक भाषा की विभिन्नता तथा एकता के तत्वों को परिचित कराने में तुलनात्मक साहित्य की अहम भूमिका रही है । विद्वानों द्वारा अभीप्सित इसी उद्देश्य से ही मैं ने हिन्दी के विख्यात रचनाकार निर्मल वर्मा और मलयालम के प्रतिष्ठित रचनाकार एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य की तुलना करने की विनम्र कोशिश की है । अपनी मातृभाषा की सर्जनात्मक संभावनाओं की तलाश भी इसके पीछे कार्यरत है ।

आधुनिक युग में अपने देश की ही नहीं, अन्य देशों में होते सामाजिक राजनीतिक परिवर्तनों से परहेज रहना किसी भी जनता केलिए संभव नहीं है । यूरोप में द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद एक नये भावबोध का उदय हुआ था । भारतीय साहित्य में भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद आधुनिक भावबोध का पल्लवन हुआ । इसने समग्र मानवीय संवेदना को बदल दिया । मनुष्य की आस्था, चिंतन एवं समझ में सर्वांगीण परिवर्तन आया । व्यक्ति अपने स्वत्वबोध से काफी सतर्क रहने लगा । अज्ञेय, मोहन राकेश, निर्मल वर्मा, राजेन्द्र यादव, कमलेश्वर, मन्नू भंडारी जैसे प्रतिभाधनी रचनाकारों ने इस भावबोध की अभिव्यक्ति दी है ।

मलयालम में ओ. वी. विजयन, काक्कनाडन, आनन्द, एम. टी. वासुदेवन नायर आदि की रचनाएँ इसी कोटी में आती हैं । इनमें एम. टी. और निर्मल वर्मा की रचनाएँ सर्जनात्मकता के विविध आयामों के संदर्भ में समांतर चलती हैं । दोनों की रचनाएँ अन्तर्मुखी मानव की व्यथा, एकाकी मानव की बेचैनी, उसके तनाव और आन्तरिक संघर्ष की अभिव्यक्ति केलिए बेताब है । आज भी ये दोनों बाज़ारू संस्कृति की शर्तों से समझौता न करके अपनी कलात्मक गरिमा को अक्षुण्ण रखते हुए सृजनरत रहते हैं ।

मैं ने पहले ही एम. टी. की कई रचनाओं का अध्ययन किया थां । निर्मल वर्मा की कुछ रचनाएँ भी मैं ने पढ़ी थी । उनकी कुछ रचनाएँ मुझे बेहद पसन्द भी आयी थी । फिर मलयालम के मशहूर साप्ताहिक "मातृभूमि" में प्रकाशित ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता साहित्यकार डॉ. अनन्तमूर्ति का एक प्रस्ताव मैं ने पढा । उन्होंने कहा था कि निर्मल वर्मा और एम. टी. के साहित्य में काफी समानताएँ हैं । एकाएक मेरा मन उस ओर आकृष्ट हो गया । फिर मेरे पथप्रदर्शक आदरणीय डॉ. षण्मुखन ने भी इसकी ओर इशारा किया ।

यह सही है कि अब तक निर्मल वर्मा का काफी मूल्यांकन हुआ है । मलयालम में एम. टी. पर भी काफी मात्रा में लिखा गया है । पर जहाँ तक मेरा विश्वास है, दोनों के साहित्य के तुलनात्मक अध्ययन अभी तक नहीं हुआ है । मेरा ही पहला प्रयास है ।

"निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा-साहित्य का तुलनात्मक अध्ययन" शीर्षक इस शोध निबन्ध को अध्ययन की सुविधा के वास्ते पाँच अध्यायों में विभक्त किया गया है ।

पहला अध्याय है -"निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के सृजनात्मक परिवेश और सर्जनात्मक व्यक्तित्व"। इसमें दोनों का जन्म, बचपन का वातावरण, सर्जन की बाह्य एवं आन्तरिक प्रेरणाएँ, सर्जनात्मक व्यक्तित्व के स्थायन में भूमिका निभानेवाले सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक परिवेश आदि का विश्लेषण किया गया है । साथ ही साथ दोनों के रचना-संसार का परिचय भी दिया गया है ।

दूसरा अध्याय है -"निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा-साहित्य में अभिव्यक्त दार्शनिक आयाम" । इसमें दोनों के कथा-साहित्य में परिलक्षित अस्तित्ववादी दर्शन के संघटक तत्वों - अकेलापन, स्वतंत्रता-बोध, विसंगति एवं मृत्युबोध का विश्लेषण किया गया है ।

तीसरा अध्याय है - "निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा-साहित्य में अभिव्यक्त रागात्मक संबन्ध" । इसमें दोनों के कथा-साहित्य में अभिव्यक्त स्त्री-पुरुष प्रेम, अन्य रागात्मक संबन्ध, प्रकृति और मानव का आपसी सरोकार, कृतिकार के आत्मांश आदि का विश्लेषण किया गया है ।

चौथा अध्याय है - "निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा-साहित्य में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना" । इसमें दोनों की रचनाओं में अभिव्यक्त सामाजिक बदलाव की अभीप्सा, बदलते सामाजिक परिवेश का चित्रण, भूख एवं गरीबी, बेकारी, युद्ध एवं रंगभेद आदि सामाजिक सच्चाईयों का विश्लेषण किया गया है ।

पाँचवाँ अध्याय है -"निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा-साहित्य की शिल्पगत विशिष्टताएँ" । इसमें दोनों की रचनाओं के समूचे गठन, उसकी कलात्मक बुनावट आदि का विश्लेषण किया गया है ।

उपसंहार में दोनों की विवेचित सर्जनात्मक रचनाओं के परिप्रेक्ष्य में समानता एवं असमानता का संक्षिप्त आकलन किया गया है ।

प्रस्तुत शोध प्रबन्ध विज्ञान व प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कोचिन के हिन्दी विभाग के प्रो. डॉ. एम. षण्मुखन के निर्देशन में संपन्न हुआ है । उनके बहुमूल्य सलाहों एवं सुझावों से ही यह अध्ययन पूर्ण हो पाया है । उनके प्रति मैं सदैव आभारी हूँ । मैं प्रो. डॉ. एन. मोहनन जी के प्रति भी अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करती हूँ, जिन्होंने मेरे इस शोधकार्य की संपूर्ति में सहयोग दिया है । मेरे अन्य गुरुजनों के प्रति भी मैं आभार प्रकट करती हूँ ।

हिन्दी विभाग के पुस्तकालय के कर्मचारियों के प्रति भी मैं आभारी हूँ, जिन्होंने प्रबन्ध तैयार करने में मेरी सहायता की है ।

मैं यह शोध प्रबन्ध विद्वानों के सामने अवलोकनार्थ सविनय प्रस्तुत कर रही हूँ । इसमें शायद अनजाने आयी गलतियों एवं खामियों के लिए क्षमा प्रार्थी भी हूँ ।

हिन्दी विभाग,
विज्ञान व प्रौद्योगिकी
विश्वविद्यालय, प्रणीता पी.
कोचिन.
तारीख

I

विषय प्रवेश

पृष्ठ संख्या

पहला अध्याय – निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के सृजनात्मक परिवेश और सर्जनात्मक व्यक्तित्व 1 – 51

निर्मल वर्मा के बचपन का वातावरण, सृजन की शुरुआत – रचना संसार ।
एम. टी. वासुदेवन नायर की जीवन रेखा और सृजनात्मक परिवेश, फिल्मी क्षेत्र में प्रवेश, रचना संसार ।
निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के रचनाकालीन बाहरी परिवेश – राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक परिस्थितियाँ – निष्कर्ष

दूसरा अध्याय – निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य में अभिव्यक्त दार्शनिक आयाम 52 – 104

दर्शन का मतलब – पश्चिम की परिस्थिति – भारतीय परिस्थिति – केरलीय परिस्थिति – अस्तित्ववादी दर्शन के संघटक तत्व
निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनाओं में अकेलापन – स्वतंत्रता बोध और मृत्युबोध का चित्रण – दोनों की रचनाओं में चित्रित संत्रास एवं निराशा – निष्कर्ष

पृष्ठ संख्या

तीसरा अध्याय - निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य में व्यक्ति और रागात्मक संबन्ध 105 - 145

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनाओं में स्त्री-पुरुष के आपसी आकर्षण का चित्रण - दोनों की रचनाओं में चित्रित स्वच्छन्द एवं भावात्मक प्रेम - दोनों की रचनाओं में अभिव्यक्त आत्मांश - दोनों की रचनाओं में चित्रित अतीत प्रेम और प्रकृति प्रेम - निष्कर्ष

चौथा अध्याय - निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के उपन्यासों में अभिव्यक्त सामाजिक चेतना 146 - 170

निर्मल वर्मा की रचनाओं में युद्ध एवं रंगभेद का चित्रण - बेकारी का चित्रण
एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनाओं में भूख एवं गरीबी का चित्रण - अन्य सामाजिक समस्याओं का चित्रण

पृष्ठ संख्या

पाँचवाँ अध्याय - निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के
कथा साहित्य की शिल्पगत विशिष्टताएँ 171 - 225

निर्मल वर्मा की रचनाओं का "कथानक ह्रास" -
निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनाओं में
उपलब्ध दृश्य बिंब - गंध बिंब - स्वर बिंब आदि ।
दोनों की रचनाओं में चित्रित प्रतीकात्मकता -
दोनों की रचनाओं में उपलब्ध संगीतात्मकता -
दोनों की चेतना-प्रवाह शैली ।
शिल्प के क्षेत्र में निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के
कतिपय विशिष्ट प्रयोग

भाषा निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर की
भावानुकूल, काव्यात्मक, अलंकृत एवं परिवेशगत
भाषा - निष्कर्ष

उपसंहार - रचनाओं की पृष्ठ भूमि में दोनों हस्ताक्षरों की
सर्जनात्मकता की समानता एवं विषमताओं का
संक्षिप्त विवेचन 226 - 236

संदर्भग्रन्थ सूची 237 - 267

पहला अध्याय -

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के

सृजनात्मक परिवेश और सर्जनात्मक व्यक्तित्व

साहित्य-सृजन का, सृजनकार के व्यक्तित्व से किनारा करके मूल्यांकन संभव नहीं है । वैसे ही व्यक्तित्व को परिवेश एवं अर्जित संस्कारों से भी पृथक् नहीं किया जा सकता । यानी किसी भी साहित्यिक कृति को रचनाकार की वैयक्तिक छाप से रहित नहीं माना जा सकता । रचनाकार का व्यक्तिगत जीवन, कृति के यदि प्रत्येक कोने में नहीं झाँकता है, तो भी किसी न किसी झरोखे में ज़रूर नज़र आता है । रचनाकार के अध्ययन की दिशा, अनुभव की गहराई और चिन्तन की सूक्ष्मता का विश्लेषण करना इस दृष्टि से अनिवार्य होता है कि कृतित्व और व्यक्तित्व दोनों अन्योन्याश्रित हैं । पश्चिम के अस्तित्ववादी साहित्यकारों ने अपने निजी अनुभवों को आत्मनिष्ठ शैली में अभिव्यक्त करने की कोशिश की थी । पात्र के रूप में स्वयं अवतरित भी हुए थे । उन्होंने उनकी सहमति भी दी है । अपने उपन्यास "नौसिया" के रचना परिवेश का उल्लेख करते हुए सार्त्र ने स्वयं कहा है कि नौसिया का नायक 'रक्वोन्तिन' वे स्वयं हैं ।[1]

हिन्दी लेखकों ने भी यह पद्धति अपनायी । हिन्दी उपन्यास साहित्य में खुले रूप में निजी अनुभवों की अभिव्यक्ति की कोशिश अज्ञेय द्वारा "शेखर एक जीवनी" में ही होती है । नन्ददुलारे वाजपेयी ने "शेखर एक जीवनी" को लेखक की छद्म और साथ ही असफल जीवनी माना है ।[2] इसका उल्लंघन अवश्य अज्ञेय ने किया है लेकिन परोक्ष रूप में

---

1. As a militant, I wanted to save myself through works; as a mystic, I tried to unveil the stillness of existance through a counteracting murmur of words, and above all, I confused things with their names: that is belief. I was dim of sight. As long as that lasted, I was out of trouble. I pulled of this noble achievement at that age of thirty : describing in La Naus'ee. Most sincerely, I can assure you - the unjustified, brackish existance of my fellow creatures and vindicating my own. I was Roquent in; in him I exposed, without self satisfaction, the web of my life" - Words - Sartre - P: 156.

2. [सं] डॉ. विश्वनाथ प्रसाद तिवारी - "अज्ञेय" - पृ: 108

इसका समर्थन भी अज्ञेय द्वारा हुआ है । "शेखर एक जीवनी" की भूमिका में अज्ञेय लिखते हैं - "अपनी रचना के संबन्ध में कुछ कहने का अधिकार मुझे नहीं है, लेकिन शेखर की महानता और इसीमें उसकी दीनता है ।" यों रचनाकार के अध्ययन की दिशा, अनुभव की गहराई और चिन्तन की सूक्ष्मता का विश्लेषण करना इस दृष्टि से अनिवार्य होता है कि कृतित्व और व्यक्तित्व दोनों अन्योन्याश्रित हैं । बचपन में आत्मसात् किये गए घरेलु परिवेश के संस्कार किशोरावस्था तक आते आते विचारों और अनुभवों की धूप सेंककर तप्त होने लगते हैं, जिन्हें यौवन, संघर्ष और व्यावहारिकताएँ एक निश्चित शिल्प में ढलकर विभिन्न स्वाकर प्रदान करती है । इसीलिए निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनात्मकता को जानने से पूर्व उनके वैयक्तिक जीवन परिवेश से परिचित होना आवश्यक है ।

बचपन का वातावरण

निर्मल वर्मा का जन्म 3 अप्रैल सन् 1929 को शिमला में हुआ था ।

निर्मल वर्मा को विद्वत्ता की कोई साहित्यिक परम्परा वारिस में प्राप्त नहीं थी । लेकिन साहित्य से दिलचस्प रखनेवाले परिवार के सदस्य होने के नाते उनके मन में भी साहित्य के प्रति रुचि सुप्त पडी थी । उनके दादाजी और बडी बहन ने उन्हें साहित्योन्मुख बनाने में हाथ बॅटाया था । निर्मल वर्मा ने खुद बताया है कि कालेजी डिग्री के हिसाब से, दादा बहुत कम पढ़े लिखे थे । लेकिन किताबों के प्रति उनका अगाध प्रेम था । उन्होंने स्पष्ट लिखा है - "हमारे दादा ने सबसे पहले किताबों के प्रति मेरी आसक्ति को जगाया होगा । वे मुझे रिश्वत देते थे कि अगर तुम एक पेज पढोगे, तो मैं तुम्हें एक चवन्नी दूँगा । चवन्नी के लालच में मैं एक पेज पढ़ जाता ।

---

§1§ अज्ञेय - शेखर एक जीवनी - पृ: 12

लेकिन पढ़ते-पढ़ते कभी-कभी मैं उसमें इतना लिप्त हो जाता कि मुझे याद ही नहीं रहता था कि मेरे चार आने का काम समाप्त हो गया है और मैं एक के बाद दूसरा और तीसरा पेज भी पढ़ता जाता ।"§1§ उनकी बडी बहन ने साहित्य संबन्धी अनेक विषयों से उन्हें अवगत कराए । वह बहुत मेधावी छात्रा थी । हर साल पुरस्कार में उन्हें कई पुस्तकें मिलती थीं, जिनसे सबसे पहले निर्मलजी परिचित होते थे । इसके अलावा "कल्याण", "सरस्वती", "वीणा", "माधुरी", जैसी पत्रिकाएँ उनके घर आती थीं और घर के लोग बहुत उत्सुकता से उनकी प्रतीक्षा किया करते थे । इस प्रकार एक साहित्योन्मुख वातावरण में उनका बचपन गुज़ारा हैं ।

उनके वक्तव्यों से पता चलता है कि स्कूली दिनों में ही अन्य लेखकों की कहानियों से प्रेरित होकर या उनकी नकल में उन्होंने कथा रचना शुरू की थी । वे बचपन से ही अंग्रेज़ी कविताएँ लिखा करता था और बेहद निकट के दोस्तों को पढ़कर सुनाया भी करता था । उनके अनुसार - "जब हम लिखना शुरू करते हैं, तो वह बहुत ही स्वाभाविक है कि हमारी संवेदनाएँ और अनुभव इतने अन्तर्गुफित एवं जटिल होते हैं कि वे केवल काव्य विधा की सघनता में ही अभिव्यक्ति पा सकते हैं । जिसे हम नेरेटिव अनुभव की श्रृंखला कहते हैं, वह इतना व्यापक होता है कि हम सोच भी नहीं पाते कि जो हमारे बहुत ही सघन और निजी अनुभव है, उनकेलिए किसी कहानी या उपन्यास का परिवेश ही बहुत ज़रूरी है । वे एक ऐसा आत्मीय मुहावरा माँगते है, जिसके अनुरूप केवल कविता ही जान पड़ती है ।"§2§

---

1. निर्मल वर्मा - दूसरे शब्दों में - पृ: 124
2. §सं§ अशोक वाजपेयी - "निर्मल वर्मा" - पृ: 39

सृजन की शुरुआत -

उन्होंने सेंट स्टीफेंस कॉलेज में पढ़ते वक्त व्यवस्थित रूप से पहली कहानी लिखी थी और उसे,भाई रामकुमार की प्रेरणा से वहाँ से प्रकाशित पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेज दिया । लेकिन उसके प्रकाशन के पहले ही पत्रिका की संपादिका की मृत्यु हुई और दूसरी बार भेजी तो उसके छपने के पहले उस पत्रिका का प्रकाशन ही समाप्त हो गया । तब उन्हें लगा कि दौर्भाग्य उनका पीछा कर रहा है । इसके बाद उनकी पहली कहानी का प्रकाशन भैरवप्रसाद गुप्त के संपादकत्व में इलाहाबाद से निकालती स्तरीय पत्रिका 'कहानी' में हुआ था । सन् 1952-1953 में "कल्पना" में बद्री विशाल पित्ती ने उनकी दूसरी कहानी प्रकाशित की । तब तक वे एम. ए. पास हो चुके थे ।

पहले-पहले उन्होंने प्रेमचन्द, जैनेन्द्र, रवीन्द्रनाथ ठाकुर एवं शरत् बाबू को पढ़ा था । वे अज्ञेय से भी प्रभावित थे । उनके अनुसार - "मैं ने जब अज्ञेय का "शेखर एक जीवनी" पढ़ा तो मैं उससे प्रभावित हुआ - उसकी शैली से और जिस आत्मपरक भाव से वह लिखा गया था, उससे ।"§1§ थोडा वयस्क होने पर चेखव, तुर्गनिव, टॉल्स्टॉय, गोर्की आदि रूसी लेखकों से वे अभिभूत हुए । दोस्तोएवस्की" को उन्होंने काफी बाद में पढ़ा था और उनके अनुसार "लिखने का व्यसन उनकी पुस्तकों से ही लगा ।" बाद के वर्षों में यूरोप के लेखकों ने, विशेषकर टॉमस मान, हर्मन हैस्स, मार्सल प्रूस्त और काफ्का ने पाठकीय अनुभव की नई दिशाएँ खोलीं । जैसे निर्मल वर्मा ने ही सूचित किया है - "अंग्रेज़ी लेखकों में सिवा वर्जीनिया वूलफ के और किसी ने उन्हें ज़्यादा आकर्षित नहीं किया ।

---

1. §सं§ अशोक वाजपेयी - निर्मल वर्मा - पृ: 18

उनकेलिए वर्जीनिया वूलफ को पढ़ना एक अद्वितीय अनुभव रहा फ्रॉसीसी अस्तित्ववादी लेखकों में कामू मुझे सर्वश्रेष्ठ जान पडे । शायद भारतीय लेखकों से कहीं अधिक प्रभाव इन्हीं लेखकों का मुझ पर पडा ।"[1]

जैसे उल्लेख कर चुका है कि शुरू से ही यूरोपियन कवियों की कविताओं से उनका गहरा लगाव था । इसके अलावा बंगला या हिन्दी कविता में जो कुछ लिखा जाता था, जो अनूदित होता था, उसे वे कथा साहित्य के ही समान दिलचस्पी से अध्ययन करता था । सन् 1950-53 का समय हिन्दी कविता में व्यापक उथल-पुथल का था । "नयी कविता" आन्दोलन का सूत्रपात हो चुका था और "दूसरा सप्तक" भी निकल चुका था । इस प्रकार एक पूरी नई संवेदना, एक बिल्कुल नया तेवर आ गया था । अशोक वाजपेयी ने संकेत दिया है कि "निर्मल वर्मा अपनी पीढ़ी के कहानिकारों से अधिक, कविता में होनेवाले परिवर्तनों के प्रति बहुत उत्सुक दिखाई देते है । उनका संबन्ध कहानीकारों से अधिक कवियों - नरेश मेहता, मनोहर श्याम जोशी, रघुवीर सहाय, श्रीकांत वर्मा आदि से था ।"[2] शुरू-शुरू में वे रिलके और इलियट से प्रभावित थे । बाद में रूसी कवियों के संपर्क में आया तो बोरिस पस्तरनाक, अन्ना आरव्मातोवा और मरीना त्स्वेतायेवा ने उन्हें प्रभावित किया । फ्रांस के सररियलिस्टिक कवि पॉल एलुआ की कविताओं के प्रति वे आकर्षित थे । उन्होंने आइसलैंड के आधुनिक कवि "स्टाइनर" की कविताओं का अनुवाद भी किया है । इसी बीच उनकी कई कहानियाँ प्रकाशित हो चुकी थीं । "सितम्बर की एक शाम", जनवरी 1957 की "कल्पना" में; "तीसरा गवाह", 1958 की "कहानी" में;

---

1. निर्मल वर्मा - दूसरे शब्दों में - पृ: 169
2. (सं) अशोक वाजपेयी - निर्मल वर्मा - पृ: 46

दहलीज' 1958 जून की "कहानी" में, 'लवर्स' 1959 मई की "कहानी" में, "परिन्दे" 1959 अक्तूबर,के "हंस" में, "एक और शुरुआत" 1960 सितंबर की "नयी कहानियाँ" में, "जलती झाडी" 1961 सितंबर-अक्तूबर की "कृति" में, "लंदन की एक रात" 1962 नवंबर की "नयी कहानियाँ" में, "पराये शहर में" 1964 के धर्मयुग में और "पिछली गर्मियों में", 1964 अक्तूबर की "सरिका" में प्रकाशित हुई थीं ।

सन् 1959 में वे पहली बार प्राग चले थे । उस वक्त चेकोस्लोवाकिया में सेंसरशिप, पुस्तकों पर पाबन्दियाँ और हर प्रकार का दमन अपनी चरम सीमा पर पहुँच गया था । जिसे हम "स्टालिनिस्टिक टेरर" कहते हैं, उसका बहुत ही भयंकर रूप उस समय मौजूद था ।

"आरिएंडल इन्स्टीट्यूट" की ओर से उनका आमंत्रण हुआ था । उनका यही काम था कि चेक भाषा सीखकर समकालीन चेक लेखकों की चुनी हुई रचनाओं का हिन्दी में अनुवाद करना । हिन्दुस्तान का संबन्ध पूर्वी देशों से मैत्रीपूर्ण रहने के कारण उन पर सरकार या सेंसरशिप अधिकारियों की उतनी कडी दृष्टि नहीं थी, जितनी कि यूरोपीय या अमेरिकी लोगों पर थी । इसलिए उन्होंने अनेक पुस्तकों का अनुवाद किया और लंबे समय तक वहाँ के साहित्य और लेखकों के संपर्क में रहे । उनका वक्तव्य है - "सन् 1961-62 के दौरान चेक साहित्य के लेक्चर्स में शामिल हुआ, तब मैं ने पहली बार पाया कि जिसे हम एक अधिनायकवादी व्यवस्था के भीतर सेंसरशिप का अस्तित्व कहते हैं, वह कितना कमज़ोर और ढीला है ।"[1]

---

1. निर्मल वर्मा - "दूसरे शब्दों में" - पृ: 140

वे कई वर्ष लंदन में रहे है और ये इनके जीवन के सुखद वर्ष रहे हैं । उनके ही अनुसार - "मैं समझता हूँ कि मैं उस शहर में आधा भूखा भी रह सकता हूँ । वहाँ पर वह भूख भी अपने में रचनात्मक हो सकती है । शहरी जीवन का अकेलापन और उसका भरपूरापन अगर कहीं मैं ने एक साथ पाया है, तो वह लंदन है । वहाँ मैं बहुत अर्से तक अकेला ही रहा हूँ । एक ऐसे समय में जब मैं शायद दिन में पाँच या छः शब्द बोलता था । कभी कभी मुझे हैरानी होती थी कि मैं सुबह से शाम तक एक आधे दर्जन शब्दों को बोलकर भी रह सकता हूँ, लेकिन मुझे वहाँ कभी वैसा अलगाव महसूस नहीं हुआ जैसा दिल्ली में महसूस होता है ।"[1]

यूरोप के लम्बे प्रवास के दौरान उन्होंने "टाईम्स आफ इंडिया" केलिए यूरोप की सांस्कृतिक, राजनीतिक समस्याओं पर लेख और रिपोर्ताज लिखे, और उसे हिन्दी में "चीडों पर चाँदनी" तथा "हर बारिश में" नामक संग्रहों में संकलित किये हैं । यूरोप से लौटने के बाद, सन् 1972 में "इंडियन इन्स्टिट्यूट आफ एडवान्सड स्टडीज़" (शिमला) में फेलो रहे, जहाँ उन्होंने "मिथक चेतना" पर काम किया । 1977 में अयोवा में आयोजित "इन्टरनेशनल राइटिंग प्रोग्राम" में सम्मिलित हुए । इसके बाद भी वे विदेशों में घूमते रहे और साहित्य सृजन में तल्लीन रहे । भोपाल में "निराला सृजनपीठ" केलिए मध्यप्रदेश सरकार का आमन्त्रण स्वीकार करके कुछ दिन वे भोपाल में रहे और फिर दिल्ली लौट चले ।

---

1. निर्मल वर्मा - दूसरे शब्दों में - पृ: 184

बहुत वर्ष पहले उनका कम्यूनिस्ट पार्टी से संबन्ध था । उसके द्वारा संचालित "कल्चरल फोरम" से भी उसे गहरा सरोकार था । लेकिन आज वे किसी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं है । दरअसल सन् 1956 में जब हंगरी में सोवियट हस्तक्षेप हुआ, तब से उनका किसी राजनीतिक दल से कोई नाता ही नहीं रहा । उनके अनुसार एक लेखक को अपनी राजनीतिक चेतना के द्वारा और एक सतर्क नागरिक की हैसियत से समाज के हर प्रश्न को समझना और तौलना-परखना चाहिए । और यह वह तभी कर सकता है, जब वह किसी राजनीतिक दल विशेष के आईने से समाज को न देखकर उसे थोडा निष्पक्ष और तटस्थ ढंग से आँकने का प्रयत्न करे । अगर वह ऐसा करता है तो वह एक लेखक के तौर पर यथार्थ की जिन विभिन्न परतों से युक्त सत्य को देखता है, उसे राजनीति के एकतरफा यथार्थ से गड्डमड्ड नहीं करेगा । इस तरह वह एक अच्छे नागरिक का दायित्व भी निभा पायेगा और एक लेखक की भूमिका भी संपन्न कर सकेगा और इन दोनों के परस्पर संबन्धों को उलझाएगा नहीं ।"[1]

वे अपने समकालीनों से भिन्न होकर काफ़ी स्वतन्त्र किस्म की ज़िन्दगी जीते हैं । अक्सर वे दिल्ली के पुस्तकालयों में नज़र आते हैं । सांस्कृतिक केन्द्रों से फिल्म के बाद बस के इन्तज़ार में खडे भी हम देख सकते है । शुरू में उन्होंने अध्यापकीय कार्य किया था । फिर उसे छोड दिया । पहले उन्होंने "लेखन" को अपना प्रोफेशन बनाने का निर्णय नहीं लिया था । दूसरे कामों में बहुत उलझे रहने के कारण उनसे मुक्ति पाने की इच्छा से वे लिखते रहते थे । वास्तव में सृजन उनकी तात्कालिक परेशानियों या दवाबों से बिल्कुल अलग कटघरे में ढला था ।

---

1. निर्मल वर्मा - दूसरे शब्दों में - पृ: 17।

एक ज़माने में जब वे पढ़ते थे या कम्यूनिस्ट पार्टी में शरीक थे, तो बहुत दबाव रहता था । पर लोगों से मिलने और व्यक्तिगत स्तर पर उनके भावात्मक संसार में घुसने की सुविधा कहानी सृजन उन्हें ज़रूर देता था । उन्होंने कहा भी है – मैं लेखन भी पूरी तेज़ी के साथ नहीं करता, जो मुझे करना चाहिए । साहित्य का अपना जगत है और वह काफी कुंठा पैदा करनेवाली दुनिया भी है । बोहेमियन ज़िन्दगी का सवाल – यह बहुत हद तक ठीक है, क्योंकि लिखने के अलावा यूँ कहा जाय कि मेरी ज़िन्दगी एक "शाश्वत छात्र" की जिन्दगी रही है, इसलिए मुझे अपने दैनिक रहन-सहन में किसी तरह का परिवर्तन अपने स्वभाव के खिलाफ जान पडता है । इसलिए 10 से 5 तक की ज़िन्दगी का प्रश्न तो अलग रहा, संपादन जैसी चीज़ें भी मुझे अपने तई अलग सी जान पड़ती है । शायद यही कारण है कि जब कभी मेरा लेखन एक प्रोफशन जैसा रूप धारण करने लगता है, वहीं मुझे बहुत वितृष्णा होने लगती है । मैं अपने लेखन को बहुत कुछ उसी तरह से अस्थाई रखना चाहता हूँ, जैसा कि मैं ने अपने लिखने के शुरू के दिनों में उसे रखा था ।"[1]

इसी प्रकार कोई उलझाव या बन्धन में पडना उन्हें अच्छा नहीं लगता । वे बिल्कुल स्वतन्त्र किस्म की ज़िन्दगी जीना पसन्द करते हैं । इसलिए "संपादन" जैसे कामों में भी वे दिलचस्प नहीं रहते । वे सचमुच वैयक्तिक एवं लेखकीय स्वतन्त्रता के हामी हैं ।

उन्होंने किसी भी विषय में पूर्वनियोजित मान्यताओं को नहीं माना है । खुद अध्ययन करके अपने मतों को प्रतिपादित किया हैं ।

---

1. निर्मल वर्मा – "दूसरे शब्दों में" – पृ: 186

"शब्द और स्मृति" में उनकी साहित्य संबन्धी दृष्टिकोण जाहिर है । उनके गद्य में कुछ ऐसा है, कि पाठक बार-बार पढ़ता जाता है । उनकी रचनाओं से उनकी धारणाओं की जानकारी ज़रूर मिल जाती है । उनका वक्तव्य है -

"साहित्य हमें पानी नहीं देता, सिर्फ वह हमें अपनी प्यास का बोध कराता है । जब तुम स्वप्न में पानी पीते हो, तो जागने पर सहसा अहसास होता है कि तुम सचमुच कितने प्यासे थे ।"[1]

"कला, हर महत्वपूर्ण कलाकृति, संयोग को अनिवार्य में बदलने की कोशिश है । जिस हद तक तुम इस दुनिया में उलझे हो, उस हद तक तुम उसे खो देते हो । कलाकार दुनिया को छोडता है, ताकि उसे अपने कृतित्व में पा सके । तुम यथार्थ को अपने पास रखकर उसका सृजन नहीं कर सकते । तुम्हें उसकेलिए मरना होगा, ताकि वह तुम्हारे लिए जीवित हो सके ।"[2]

"रिलके दुनिया को "देवदूत के भीतर" से देखते हैं, और वहाँ से मनुष्य के अधूरेपन के दुःख तक पहुँचते हैं, इसके विपरीत एक उपन्यासकार को "मनुष्य के भीतर" से दुनिया को देखना चाहिए, उसके अँधेरे की निम्नतम परतों में बैठकर ही "शाश्वत" की झलक पा सकता है, जो बाहर और परे नहीं, ठीक मनुष्य की आत्मा के बीच व्याप्त है ।"[3]

---

1. निर्मल वर्मा - डयरी के अंश - पूर्वग्रह - अंक: 27-28 - पृ: 6
2. निर्मल वर्मा - डयरी के अंश - पूर्वग्रह - अंक: 27-28 - पृ: 7, 6
3. निर्मल वर्मा - डयरी के अंश - पूर्वग्रह - अंक: 27-28 - पृ: 9

"हमारा जीवन एक स्वप्न की तरह है । किन्तु बेहतर क्षणों में हम इतना भर जाग जाते हैं कि जान सके कि यह स्वप्न है । मैं अपने को नहीं जगा सकता । मैं भरसक कोशिश करता हूँ, मेरी स्वप्न-देह हिलती है, लेकिन असली देह कोई हरकत नहीं करती ।"[1]

"मेरेलिए सफलता" एक ऐसे खिलौने की तरह है, जिसे एक अजनबी किसी बच्चे को दे देता है, इससे पहले कि वह उसे स्वीकार करें, उसकी नज़र अपने माँ-बाप पर जाती है और वह अपने हाथ पीछे खींच लेता है ।"[2]

उनके अनुसार - "कलाकृतियाँ जीवन का दर्शन हैं, उनके द्वारा किसी भी समस्या का दूसरा पहलू उजागर होता है । साहित्य आईना नहीं, जो प्रतिबिंब प्रस्तुत करे अपितु वह जीवन का पूरक है, संपूर्ति करता है ।"[3]

निर्मल वर्मा की ये धारणायें उनके जीवन एवं साहित्य में अभिव्यक्त विचारों को सही ठहराती हैं । उनके साहित्य में आधुनिक जीवन की मान्यताएँ एवं विचारधाराएँ स्पष्टतः झलकती हैं । इसलिए उनके साहित्य में वे सब ढूँढना व्यर्थ होगा, जो उनके पूर्ववर्ती साहित्य से मौजूद हैं । कृष्णा सोबती के अनुसार - "निर्मल का साहित्य आम आदमी साधारण दिल दिमाग का साहित्य नहीं हैं ।

---

1. निर्मल वर्मा - डयरी के अंश - पूर्वग्रह - अंकः 27-28 - पृः 9
2. निर्मल वर्मा - डयरी के अंश - पूर्वग्रह - अंकः 27-28 - पृः 10
3. निर्मल वर्मा - स्वदेश - 14 अक्तूबर 1980

निर्मल का रचना-संसार "सोफिस्टीकेटेड", मानसिक रूप से अतिपरिष्कृत वर्ग का साहित्य है । ऐसा कहना निर्मल की रचनात्मक सीमाओं की ओर इशारा करना नहीं है, बल्कि उसकी विशेषताओं का जायजा लेना है ।"[1] वे लिखती हैं - "निर्मल अपनी रचनाओं के अवसर तीन ड्राफ्ट करते है । निर्मल लिखते है, तो पढ़ते भी खूब हैं । उनके कमरों में ढेरों किताबें है । फर्श पर उनका बिस्तर है । कोने में छोटी सी रैक है । चाय, काफी, चीनी, कुछ बिस्कुट, चीज़, डबल रोटी और छोटी सी चौकी पर हाट-प्लेट । मेहमानों केलिए कुर्सी । एक कोने में पढ़ने की टेबल । दरवाज़े पर टिलाई से लटकता पर्दा । कहीं कुछ दिखावटी या चौकानेवाला नहीं । साधारण आदमी । रहने का सिर्फ जुगाड-भर ।"[2]

निर्मल वर्मा ने कला संबन्धी सभी विधाओं का स्पर्श किया है । अशोक वाजपेयी ने उल्लेख किया है कि साहित्य-चिंतन के अलावा सिनेमा, संगीत, चित्रकला, स्थापत्य तथा शिल्प में उनकी गहरी दिलचस्पी है ।[3] इनकी कहानी "मायादर्पण" पर फिल्म बनी है, जिसे सन् 1973 का सर्वश्रेष्ठ हिन्दी फिल्म का पुरस्कार प्राप्त हुआ था ।

निर्मल वर्मा का रचना संसार

निर्मल वर्मा का अब तक प्रकाशित साहित्य का संक्षिप्त ब्योरा नीचे दिया जा रहा है ।

---

1. कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत - पृ: 220
2. कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत - पृ: 220
3. (सं) अशोक वाजपेयी - "निर्मल वर्मा" - पृ: -

उपन्यास

1. वे दिन

सन् 1964 में प्रकाशित निर्मल वर्मा का प्रथम उपन्यास है । आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया यह उपन्यास हिन्दी उपन्यास साहित्य का एक नया मोड है । इसके सभी पात्र युद्ध से जख्मी मानसिकता से युक्त है ।

2. लाल टीन की छत

इसका प्रकाशन सन् 1974 में हुआ । इसका सृजनकाल सन् 1970 से 1974 तक है । दिल्ली, लंदन और सिमला में इसकी सर्जना हुई थी । यह उपन्यास तीन खण्डों में विभक्त हैं - "एक साँस में", "शहर से ऊपर" और "तसल्ली से परे" । एक बच्ची के औरत बनने के विभिन्न पड़ावों में उस पर किन किन का प्रभाव पड़ता हैं, किन परिवेशों से गुज़रना पडता है, कैसी पीडाएँ झेलनी पड़ती हैं, कौन सी जिज्ञासाएँ और उन सब केलिए कौन सा समाधान उसके हिस्से में आते है, इन सबका मनोवैज्ञानिक लेखा-जोखा ही इस उपन्यास का विषय है ।

3. एक चिथडा सुख

यह सन् 1979 में प्रकाशित तीसरा उपन्यास है । डायरी शैली में इसका आख्यान हुआ है । बोहेमियन जीवन बितानेवाले कलाकार ही इसका विषय है ।

4. रात का रिपोर्टर

यह सन् 1989 में प्रकाशित उपन्यास है । इसमें वे अतीत के एक विशिष्ट काल खण्ड - इमेरजेंसी - को पृष्ठभूमि के रूप में इस्तेमाल किया है । एक रिपोर्टर को केन्द्र में रखते हुए उसे जो यंत्रणा और आतंक झेलने पड़ते हैं उनका ही चित्रण हुआ है ।

5. अंतिम अरण्य

यह सन् 2000 में प्रकाशित उपन्यास है । इस उपन्यास का केन्द्रीय भाव मृत्युबोध है । पहाडी प्रदेश के बुजुर्गों के जीवन की ट्रेजेडी ही इसमें प्रस्तुत है ।

कहानी संग्रह

1. परिन्दे

इसका प्रकाशन सन् 1984 में हुआ । इसमें कुल सात कहानियाँ हैं । डायरी का खेल, माया का मर्म, तीसरा गवाह, अँधेरे में, पिक्चर-पोस्टुकार्ड, सितम्बर की एक शाम, और परिन्दे ।

2. जलती-झाडी

सन् 1965 में यह प्रकाशित हुआ । इसमें कुल दस कहानियाँ हैं । लवर्स, मायादर्पण, एक शुरुआत, कुत्ते की मौत, पहाड, पराये शहर में, जलती-झाडी, दहलीज, लन्दन की एक रात और अंतर ।

3. पिछली गर्मियों में

उनका यह तीसरा कहानी संग्रह सन् 1968 में प्रकाशित हुआ । इस संग्रह में आठ कहानियाँ संग्रहीत हैं । धागे, पिता और प्रेमी, डेढ़ इंच ऊपर, खोज, इनके कमरे, अमालिया, इतनी बडी आकांक्षा और पिछली गर्मियों में ।

4. बीच बहस में

इसमें चार लम्बी कहानियाँ - छुट्टियों के बाद, वीक एंड, दो घर और बीच बहस में ।

5. कव्वे और कालापानी

सन् 1983 में प्रकाशित इस कहानी संग्रह में कुल सात कहानियाँ हैं - धूप का एक टुकडा, दूसरी दुनिया, ज़िन्दगी यहाँ और वहाँ, सुबह की सैर, आदमी और लडकी, कव्वे और कालापानी और एक दिन का मेहमान । "कव्वे और कालापानी" सन् 1985 के साहित्य अकादमी पुरस्कार से सम्मानित है ।

6. सूखा तथा अन्य कहानियाँ

इसका प्रकाशन सन् 1995 में हुआ । इसमें कुल नौ कहानियाँ हैं - अंतराल, पहला प्रेम, सूखा, बावली, किसी अलग रोशनी में, टर्मिनस, बुखार, जाले और खाली जगह से ।

निबन्ध संग्रह

1. चीडों पर चाँदनी

इसका प्रकाशन सन् 1964 में हुआ । इसमें तीन खण्ड हैं - उत्तरी रोशनियों की ओर, चीडों पर चाँदनी और देहरी के बाहर जो स्मृति चित्र, यात्रा संस्मरण एवं साक्षात्कार हैं ।

2. हर बारिश में

इस संकलन का प्रकाशन सन् 1970 में हुआ । इसमें ग्यारह निबन्ध हैं - केन्द्रीय मानवीय स्थिति, दो संस्कृतियों के बीच, यूरोप में भारतीय, अंग्रेज़ी की खोज में, अन्धेरे में एक चीख, प्राग का आधुनिक रंग-मंच, प्राग - एक स्वप्न, अन्धेरे के खिलाफ, परम्परा और प्रतिबद्धता - एक बातचीत, रौब्ब ग्रिये के साथ एक शाम और सौन्दर्य की छायाएँ ।

3. शब्द और स्मृति

सन् 1976 में प्रकाशित निबन्ध संग्रह है । उनके अनुसार यह "पर्सनल ब्रूडिंग" के निबन्ध है । सृजन में सौन्दर्य और नैतिकता, साहित्य और लेखक की आस्था, संप्रेषण का संकट, गंध का पतन आदि महत्वपूर्ण निबन्ध हैं ।

4. कला का जोखिम

सन् 1981 में इसका प्रकाशन हुआ । रचना-चिन्तन, रचनाकार एवं रचना-यात्रा आदि शीर्षकों में इसे विभाजित किया गया है । इन निबन्धों में विभिन्न कोणों से आधुनिक सभ्यता में कला के स्थान को परखने का प्रयास किया गया है ।

5. ढलान से उतरते हुए

इसका प्रकाशन सन् 1985 में हुआ । यह भी तीन भागों में विभाजित है, जैसे - काल और कलाकृति, अवस्थाएँ और रास्ते पर ।

6. भारत और यूरोप प्रतिश्रुति के क्षेत्र में

सन् 1991 में इसका प्रकाशन हुआ । "भारतीय संस्कृति और राष्ट्र", मानववाद कुछ आत्मछलनाएँ, भारत और यूरोप प्रतिश्रुति के क्षेत्र की खोज, भारतीय जीवन की निराशाएँ आदि भाग एक में संकलित है । संस्कृति के आत्मबिंब, साहित्यिक कृति और सत्य की अवधारणा, कला की प्रासंगिकता, क्या साहित्य समाज से कट चुका है ? आलोचना के भटकाव, लेखक की स्वतंत्रता और स्वधर्म आदि लेख भाग - दो में संकलित है । परिशिष्ट के रूप में "भारतीय लेखक का स्वप्न और जिम्मेदारी" नामक लेख जोड दिया गया है । संक्षेप में भारत और यूरोप की अपनी अपनी चिंतन परम्परा के मूल आधारों को व्याख्यायित करते हुए वे यहाँ रचनात्मकता की आलोचना करते हैं ।

7. शताब्दी के ढलते वर्षों में

इसका प्रकाशन सन् 1995 में हुआ । यह तीन खण्डों में विभक्त है - "कला, साहित्य, सृजन कर्म", "समाज, संस्कृति", "आधुनिक युगबोध और रचनाकार" । बीसवीं शताब्दी के वैचारिक उतार-चढावों को इसमें पारदर्शी दृष्टि से अंकित किया गया है ।

नाटक

1. तीन एकांत

इसमें निर्मल वर्मा के तीन विख्यात कहानियों -"धूप का एक टुकडा", "डेढ़ इंच ऊपर", और "वीकएंड" का नाटक रूपांतर प्रस्तुत है । यह प्रस्तुति इस तथ्य को प्रमाणित कर देता है कि किसी भी विधा में लिखी गयी कोई भी सच्ची और सशक्त अभिव्यक्ति अन्य विधा में भी उसी सशक्तता और सच्चाई को बनाये रख सकती है । इसकी पहली मंच-प्रस्तुति "राष्ट्रीय नाट्य विद्यालय रेपर्टरी कंपनी" द्वारा विद्यालय के स्टूडियो थियेटर में मई से 6 मई, 1975 को की गयी थी ।

संकलन

दूसरी दुनिया

इसका प्रकाशन सन् 1978 में हुआ । इसमें उनके निबन्ध, कहानियाँ, नाट्य-कथा, यात्रा-संस्मरण, साक्षात्कार और डायरी संकलित हैं । यह, गद्यलेखक को उसकी समग्रता में समझने की उपयोगी कोशिश हो सकती है । और यह भी कि यहाँ उनकी गद्यकार छवि अच्छे से देखते बनती है । इस छवि में जो बात सबसे ऊपर उभर कर आती है, वह यह कि यहाँ उनकी चिंतन क्षमता उनकी सर्जन प्रक्रिया में पूरी तरह समरस हो गई है । और यही कारण है कि आधुनिक समाज में गद्य से जो विविध प्रकार की अपेक्षाएँ की जाती हैं - सूचना देने से लेकर कल्पना, सृजन और चिंतन की उच्च भाव भूमियों के साक्षात्कार तक - वे सब यहाँ एकबारगी पूरी हो सकती हैं ।

पुरस्कार

सन् 1985 में निर्मल वर्मा का "कव्वे और कालापानी" शीर्षक कहानी संग्रह केलिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला । संपूर्ण कृतित्व केलिए सन् 1993 का साधना सम्मान दिया गया । सन् 1995 में उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान का सर्वोच्च पुरस्कार "राममनोहर लोहिया अतिविशिष्ट सम्मान" केलिए चुने गए । सन् 1996 में अमेरिका के यूनिवर्सिटी आफ आकलाहोमा की पत्रिका "द वर्ल्ड लिटरेचर" के बहुसम्मानित पुरस्कार 'न्यूश्तात् अवार्ड' केलिए भारत से मनोनीत किए गए । सन् 1997 में वे भारतीय ज्ञानपीठ के 'मूर्तिदेवी पुरस्कार' से सम्मानित हुए । आखिर 10 मार्च, 2000 को उन्हें भारत का सर्वश्रेष्ठ पुरस्कार "ज्ञानपीठ" दिया गया । हिन्दी साहित्य जगत को उनकी महत्वपूर्ण एवं अविस्मरणीय देन को ध्यान में रखते हुए यह पुरस्कार दिया गया है । ये उनके बेजोड सृजनात्मकता का ही सबूत है ।

एम. टी. वासुदेवन नायर की जीवन रेखा और सृजनात्मक परिवेश

एम. टी. वासुदेवन नायर का जन्म सन् 1933 जुलाई में केरल के पालक्काडु जिले के पोन्नानी कसबा के दूर दराज़ गाँव कूडल्लूर में हुआ था । उनका अतीत के बडप्पन की स्मृतियों को संजोता एक मध्यवर्गीय परिवार था । वे तेक्केप्पाट अम्मालु अम्मा एवं पुन्नयूरक्कुलम टी. नारायणन नायर के चौथे बेटे थे । तीन बेटों की बारी के बाद माँ बाप को एक बच्ची का इन्तज़ार था । इसलिए परिवारवालों को गमगीन बनाते हुए ही उनका जन्म हुआ था । उनके पिता अध्यापक एवं डाक-तार विभाग का कर्मचारी रहे थे । किन्तु इससे पर्याप्त आमदनी न मिलने के कारण उन्होंने सिलोन जाने का निर्णय लिया ।

पचीस साल तक वे सिलोन में काम करते रहे । साल में एक बार वे अपने घर आते थे और दो-तीन महीनों के बाद वापस जाते थे ।

एम. टी. ने खुद कहा है कि घरवालों को परेशानी से बचाने केलिए उन्हें स्कूल भेजा गया था । लेकिन बाद में उन लोगों ने समझ लिया कि वह पढाई में पीछे नहीं है । होशियार विद्यार्थी होने के कारण उन्हें डबल प्रमोशन मिला था । इस प्रकार सन् 1942 में उन्हें कुमारनेल्लूर बोर्ड हाईस्कूल में भर्ती मिली । उन्होंने लिखा है कि 1942 के "भारत छोडो" आन्दोलन ने स्कूल के वातावरण को भी कलुषित किया था । संघर्षरत छात्र नेताओं को स्कूल से निकालकर गिरफ्तार किया गया था । छात्रों ने प्रधानाध्यापक की आज्ञा को ठुकराकर काले झंडे पहनकर क्लास का बहिष्कार भी किया था । इन सबके प्रति एम. टी. के मन में सहानुभूति थी और इसलिए इन सबका प्रभाव उन पर पडा था ।

उन्होंने कहा है कि उनका जन्म एक निर्धन मध्यवर्गीय किसान परिवार में हुआ, विद्वत्ता व साहित्यिक रुझान उन्हें विरासत में नहीं मिले थे । उस छोटे से गाँव में प्रगति का कोई आसार ही नहीं था । वहाँ का निकटतम बस अड्डा छः मील दूर था । रेलवे स्टेशन जाने केलिए पाँच मील पैदल चलना पडता था । हाई स्कूल तो सात मील दूर पर था । गाँववाले यही समझते थे कि जिस किसी ने एषुत्तच्छन् की "अध्यात्म रामायण" बिना रुके अटके बाँच ली, उसकी शिक्षा पूरी हो गयी । पर जब यह मान्यता घर कर गयी कि बच्चों को हाईस्कूल और कॉलेज तक पढाना ज़रूरी है, तब अपना पेट काटकर भी मेरे बुज़ुर्गों ने मुझे आगे पढ़ाकर गाँव में एक नयी परम्परा की नींव डाली ।[1]

---

1. एम. टी. वासुदेवन नायर, ज्ञानपीठ पुरस्कार समारोह तिरुवनन्तपुरम में आयोजित समारोह में दिये भाषण से ।

हाईस्कूल में प्रत्येक साल उन्हें प्रोफिशान्सी, अंताक्षरी, निबन्ध और भाषण प्रतियोगिता पुरस्कार मिलते थे ।

मलयालम की मशहूर साप्ताहिक पत्रिका "मातृभूमि" उनके घर नियत मँगायी जाती थी । बहुत रुचि से वे यह पढ़ते थे । उन्होंने कहा भी है कि पत्रिका की तस्वीरें तथा पशुपक्षीवाली कहानियों से वे बेहद आकृष्ट थे । "दारिक की लोकयात्रा" कहानी उन्हें बहुत पसन्द आयी थी । बाद में इतनी रुचि के साथ उन्होंने एक ही कृति पढी थी - अलक्सांडर ड्यूमा की "मॉंटीक्रिस्टो" । एक बार साप्ताहिक के पन्नों को उलट-पलटकर देखते वक्त "शाश्वत शांति के लिए" शीर्षक पर उनकी आँखें टिक गयीं । यह उनके बडे भाई एम. टी. जी. नायर का निबन्ध था । कुछ दिनों बाद दूसरे भाई एम. टी. बी. नायर का मिट्टी के कीडे के बारे में एक लेख भी छपकर आया । भाईयों की इस क्षमता पर वे अत्यन्त आकृष्ट हो गए और उसके बारे में सोचते रहे और भाई लोग जब कोई किताब या पत्रिका लाते उसे चाव से पढ़ते रहे ।

एम. टी. ने लिखा है - "जब कवि चङ्. म्पुझा की लंबी कविता "रमणन" समूचे केरल में लोकप्रिय बनी हुई थी, तब पास के गाँव से उसकी एक हस्तलिखित प्रति मुझे मिली । वह मुझे दूसरे ही दिन लौटाने की शर्त पर दी गयी थी । मैं देखता रहा, प्रति मिलते ही मेरे भाई और भाभी रात को सोने के बदले उसकी नकल कर रहे हैं । मुझे तब समझ में नहीं आया कि उस कविता में ऐसा क्या था, जिसकेलिए वे इतना श्रम और समय लगा रहे हैं" ।[1] इस प्रकार धीरे धीरे पारिवारिक परिवेश के प्रभाव से ही उनकी साहित्य के प्रति रुचि बढ़ने लगी ।

---

1. एम. टी. वासुदेवन नायर ज्ञानपीठ पुरस्कार स्वीकार भाषण

शुरुआत में उन्हें कविता पर ही लगाव था । इसलिए उन्होंने कविता पढ़ना शुरू किया और प्रारंभ में मलयालम के महाकवित्रय वल्लत्तोल, आशान और उल्लूर की रचनाएँ पढीं । उन्होंने खुद लिखा है -
"मेरे भाईयों ने चङ्. म्पुषा, शंकर कुरुप, वैलोप्पिल्ली, बालामणि अम्मा, एटश्शेरी और पी. कुञ्ञिरामन नायर के कविता संकलन लाकर दिये । मुझे आश्चर्य हुआ यह देखकर कि उन लोगों ने बहुत से ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है, जिन्हें मैं जानता था । लेकिन उन लोगों ने शब्दों को पंक्तिबद्ध करके जिस अद्भुत रचना संसार की सर्जना की भी वह मुझे विकट जादूगरी सी लगी । मैं ने बहुत सी कविताएँ हृदिस्थ कर लीं, जिन्हें मैं गाता पढ़ता, पहाड मैदान नापता रहता था । इसके बाद मैं ने बशीर, तकषी, पोट्टक्काट, पोनकुन्नम वर्की, कारूर केशवदेव, ललिताम्बिका - अन्तर्जनम की ढेर सारी कहानियाँ पढ़ीं । मैं मन ही मन लेखकों की पूजा करने लगा । पुरानी पत्रिकाओं से उनके चित्र काटकर घर की दीवारों पर चिपका लिया । उन दिनों अगर कोई मुझसे पूछता कि तुम क्या बनना चाहते हो तो मैं बेशक धीमी आवाज़ में यही कहता कि - "मैं लेखक बनना चाहता हूँ । मैं चाहता भी इतना ही था । मेरी यही एक प्रार्थना थी "।[1]

एम. टी. वासुदेवन नायर जब हाईस्कूल में फस्ट फारम के विद्यार्थी थे तब समकालीन प्रसिद्ध मलयालम कवि "अक्कित्तम" फोर्थ फारम में पढ़ते थे । तुंचत् एषुत्तच्छन् पर "अक्कित्तम्" ने स्कूल की साहित्यिक सभा में एक कविता पढ़ी और बाद में उसका प्रकाशन "योगक्षेम" पत्रिका में हुई । कवि है और कविताएँ प्रकाशित हो रही हैं, सिर्फ इसी कारण वह आदमी एम. टी. के आदर पात्र बन गया । सचमुच उसके प्रति एम. टी. को एक आदर मिश्रित डर था, इसलिए पास नहीं जाते थे, दूर खडे होकर ही उनकी बातें सुनते थे ।

---

(1) एम. टी. वासुदेवन नायर - ज्ञानपीठ पुरस्कार स्वीकार भाषण

एस. एस. एल. सी. क्लास में पढ़ते समय वे स्कूल की साहित्यिक सभा का सह सचिव और हस्तलिखित मासिक पत्रिका "विद्यार्थीमित्रम्" का संपादक भी बने । उनकी प्रथम कहानी "विद्यार्थी" उस पत्रिका में प्रकाशित हुई थी । वह कहानी एक गरीब विद्यार्थी की कठिनाईयों पर केन्द्रित थी । उन दिनों अक्कित्तम के मार्गदर्शन में उनके बडे भाई ने कविताएँ लिखी थीं और उनका प्रकाशन भी हुआ था । लिखने की इच्छा एम. टी. के मन में भी जाग्रत हुई और लेख लिखना शुरू किया । अंग्रेज़ी से अनुवाद और अंग्रेज़ी पर आधारित लेख भी लिखने लगे । बीच-बीच में कुछ कहानियाँ भी लिखीं । चौदह वर्ष की आयु में ही उन्होंने नियमित लिखना शुरू कर दिया था - कविताएँ, कहानियाँ, लेख यहाँ तक कि एकाँकी भी । जिन पत्रिकाओं के पता मिलते थे, उन्हीं पते पर वे रचनाएँ भेज देते थे । उनके लिए उन दिनों पोस्टेज केलिए पैसे जुटाना तक बेहद मुश्किल था । उन्होंने खुद लिखा है - "उन ताबडतोड़ गतिविधियों में मैं दुनिया को चुपचाप यह बता देना चाहता था कि मैं एक मामूली देहाती, लेखक बनने केलिए जी-जान से जुटा हूँ । तब कोई अनजानी आवाज़ आती सुनाई पड़ती - "बनो और बनकर दिखाओ ।"[1]

सन् 1948 में पहली बार उनका लेख छपा था । वास्तव में यह उनका दूसरा प्रयास था । इसके पहले एक प्रयास किया गया था, लेकिन वह सफल न निकला । "भारत का रत्न उद्योग" नामक पहला लेख गुरुवायूर से प्रकाशित होनेवाली "केरलदीपं" पत्रिका में छपा था ।

---

1. एम. टी. वासुदेवन नायर - ज्ञानपीठ पुरस्कार स्वीकार भाषण

एम. टी. ने सूचित किया है कि जब उन्हें अनुभव हुआ कि कविता का जादू भी उनके बस की बात नहीं है, तो वे कहानीविधा की ओर मुड गए, कुछ प्रकाशित भी हुईं । उनकी पहली कहानी - "उन्तुवंटी" (ठेलागाडी) थी । एक अपाहिज - जिसके दोनों पैर नहीं हैं - को गाडी में बिठाकर भीख माँगनेवाले एक आदमी ही इस कहानी का प्रेरणास्रोत था । वह अपाहिज धनोपार्जन का साधन है । उसे अपनाने केलिए दो आदमी आपस में झगडा करते हैं और विजेता ठेलागाडी लेकर सडक पर उतरता है । यही उसकी कथावस्तु है । उन्होंने दावा किया है कि अपंग आदमी के प्रति सहानुभूति प्रकट करने के उद्देश्य से नहीं बल्कि उसकेलिए दावा करनेवाले बुरे आदमियों के प्रति मन में उभरे रोष को प्रकट करने केलिए यह कहानी लिखी गयी थी ।

वे अच्छे नंबर पर एस. एस. सल. सी. परीक्षा उत्तीर्ण हो गये । उस समय उनके पिताजी सिलोन में थे । सिलोन का राजनीतिक वातावरण बदल चुका था । मलयालियों को उधर का नागरिक बनना था, नहीं तो उन्हें वापस जाना था । पैसे भेजने में भी नई पाबन्दियाँ आ गईं । रेशन कार्ड के आधार पर एक आदमी को केवल पचास रुपये बाहर भेजने की अनुमति दी गयी थी । उस समय उनका एक भाई मैंगलूर सरकारी कॉलेज में पढ़ता था । दोनों बेटों को एक साथ पढाई केलिए रुपये भेजना पिताजी केलिए दिक्कत की बात थी । इसलिए एम. टी. को कॉलेज में भर्ती न करने का निर्णय लिया गया ।

यों उन्हें एक साल गाँव में अकेले जीवन बिताने का अवसर मिला । पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ कभी कभार मिलती थीं । छह साल मील पैदल चलकर अक्कित्तम के घर से वे पुस्तकें हासिल करते थे । अकेलेपन में ये ग्रन्थ उनके साथी बने । पढ़ने के साथ वे लिखने भी लगे और तमाम पत्रिकाओं के

नाम रचनाएँ भेजते रहे । इस समय वे अंग्रेज़ी की प्रमुख कृतियाँ भी पढ़ने लगें और ना समझ भागों को बार बार पढ़कर समझने की कोशिश भी करते । गोर्की और मॉपसाङ् की कहानियों ने उन्हें बहुत अधिक आकृष्ट किया । समर्थ विद्यार्थी के तौर पर स्कूल से तीन साल उन्हें छात्र-वृत्ति मिली थी । उस रकम का अधिकांश हिस्सा उन्होंने किताबें खरीदने केलिए खर्च किया था । किताबें खरीदकर उन्हें करीने से सजाकर रखना उनकी आदत बन गयी थी । महीने में दो तीन बार वे अक्कित्तम के घर जाते, उनसे बातचीत करते और उनकी बातों में तल्लीन रहते । कला और साहित्य पर उनके बीच बहस होती । अक्कित्तम उनके लेख और कहानियों पर अपनी राय ही नहीं प्रकट करते थे, बल्कि सुधार निखार भी करते थे ।

सन् 1949 में वे पालक्काट विक्टोरिया कॉलेज को विद्यार्थी बन गये । तब तक कई पत्रिकाओं में उनकी रचनाएँ छप चुकी थीं । इसलिए सर्जनात्मक काम वे ज़ारी रखे । इस दौरान विश्व साहित्य की कई क्लासिक कृतियाँ पढ़ने का अवसर भी उन्हें मिला था । एक मामूली कॉलेज छात्र के समान खुशी मनाने का कोई कार्यक्रम जैसे जम कर खाना, सिनेमा आदि में वे रुचि नहीं रखते थे । पुस्तकालय में किताबों में डूबकर वे अपना एक अन्तरिक निजी संसार बसा चुके थे । इब्सन का नाटक "एन एनिमी आफ द पीपुल" और तालस्टाय कृत - "प्रिसिनर इन द कावस" का अनुवाद उन्होंने किया था । इंटरमीडियट परीक्षा में उन्हें प्रथम श्रेणी मिली थी । उनके कई साथी डाक्टर बनना चाहते थे । लेकिन उनके मन में एक कॉलेज अध्यापक बनने की निगूढ आकांक्षा थी । इससे कई लाभ होंगे - एक तो छुट्टी के दिन ज़्यादा मिलेंगे । सबसे बढ़कर, विशाल पुस्तकालय की सुविधाएँ भी मिलेंगी । लेकिन इसकेलिए ज़रूरी मास्टर डिग्री उन्हें हासिल नहीं थी ।

इसलिए जैसे एम. टी. ने ही कहा है - "यों मैं किताबों की ओर ज़्यादा मुड गया । किताबों से मुझे आश्रय और आश्वास मिलते रहे । अर्थ के नये आयामों से मेरा परिचय हो गया, नई पहचान भी मिली । इससे मेरे मन में एक विश्वास पैदा हो गया - यानी कि मैं कुछ नई चीज़ें अर्जित कर रहा हूँ और शब्दों के विस्मय ने मुझे सृजन के ताज्जुब भरी संसार की ओर पहुँचा दिया ।"[1]

सन् 1952 अक्तूबर में उनका पहला कहानी - संकलन प्रकाशित हो गया - "खून से सनी मिट्टी" । युवा मित्रों के कलास्वादन संघ के नेतृत्व में इसका प्रकाशन हुआ था । केरल के प्रमुख अखबारों तथा उच्च आलोचकों ने उस पर स्तरीय राय प्रकट की थी । एक साल में उसकी लगभग सात सौ प्रतियाँ बिक गयी । सन् 1953 की बी. एस. सी. परीक्षा में उन्हें द्वितीय श्रेणी मिली । उसके बाद नौकरी की खातिर की आपाधापी के बीच वे कुछ समय पटांबी जिला बोर्ड हाईस्कूल में अध्यापक रहे । उनके अनुसार "निराशा और वेदना के कई अनुभव मेरे जीवन में बिखरे पडे हैं । किन्तु जब हार्दिक भाषा में उनकी अभिव्यक्ति होती है, तब इस पीडा के दौरान भी आनंद का एहसास ही होता है ।"[2] एक नौकरी के सिलसिले में फिर वे साक्षात्कार के वास्ते मद्रास गए और लौट आये । वह प्रयास भी असफल निकला । तब उन्हें गहरी निराशा हुई थी । इस निराशा से प्रेरित कहानी है - "मरीना की एक रात" ।[3] उन्होंने अपनी व्यक्तिगत पीडाओं से प्रेरित होकर अनेक कहानियाँ लिखी है और जैसे उन्होंने कहा - "आत्मनिष्ठ व्यथा को समेटती कहानियों को मैं ज़्यादा पसंद करता हूँ ।"[4]

---

1. एम. टी. वासुदेवन नायर - "शब्दों का ताज्जुब्ब" - पृ: 22
2. एम. टी. वासुदेवन नायर - "शब्दों का ताज्जुब्ब" - पृ: 22
3. एम. टी. वासुदेवन नायर - आत्मनिवेदन - मातृभूमि - 26-12-1954
4. एम. टी. वासुदेवन नायर - आत्मनिवेदन - मातृभूमि - 26-12-1954

जनता प्रकाशन कंपनी मद्रास ने, "धूप और चाँदनी" नामक उनका दूसरा कहानी संग्रह प्रकाशित किया । उनकी बहुत ही मशहूर कहानी सन् 1953 अप्रैल में लिखी गयी थी । यह कहानी "मातृभूमि", "न्यूयोर्क हेराल्ड" तथा "दि हिन्दुस्तान टाईम्स" के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित विश्व-कहानी प्रतियोगिता में सर्वप्रथम आ गयी थी । सेरकस के कलाकारों का त्रासद जीवन इस कहानी की थीम है । उन्होंने खुद कहा भी है - "पालक्काट में प्रदर्शित सेरकस कई बार देखने का मौका मुझे मिला था । उनके जीवन का निरीक्षण मैं ने नज़दीकी से किया था । उस निरीक्षण से प्राप्त जानकारी को ध्यान में रखकर मैं ने "पालतू जानवर" लिखी थी ।"[1]

सन् 1957 में उन्होंने "मातृभूमि" में "सह संपादक प्रशिक्षक" पद केलिए आवेदन भेजा । तब तक वे पालक्काट के एम. बी. टूटोरियल कॉलेज से मिलते नाममात्र वेतन से ज़िन्दगी गुज़ारते थे । नसीब ही कहिए, उन्हें वह पद मिल गया । वहाँ के कार्यकलाप के संबन्ध में एम. टी. ने लिखा है - "अखबार के कार्यालय का संसार - पुस्तक और साहित्य का सान्निध्य, वरिष्ठ अधिकारी एन. वी. कृष्णवारियर की छत्रछाया । हालाँकि मैं कॉलेज अध्यापक बनना चाहता था, लेकिन इस दुनिया से मेल जोल साबित करने में मुझे कोई तकलीफ महसूस नहीं हुई ।"[2] वे सन् 1968 में मातृभूमि साप्ताहिक पत्रिका के संपादक नियुक्त किये गये और 1981 में उसे छोड भी दिया । लेकिन सन् 1989 में वे मातृभूमि परिवार के सभी साप्ताहिक पत्रिकाओं के संपादक के रूप में पुनः मातृभूमि लौट आये और 1999 में उस संस्था से अलविदा कह दिया । अब वे 'केरल साहित्य अकादमी' एवं "तुंचन स्मारक न्यास" के अध्यक्ष हैं ।

---

1. एम. टी. वासुदेवन नायर, आत्मनिवेदन - मातृभूमि - 26-12-1954
2. एम. टी. वासुदेवन नायर - डी. लिट. उपाधी स्वीकार भाषण

फिल्मी क्षेत्र में प्रवेश

एम. टी. वासुदेवन नायर ने सर्वप्रथम सन् 1963 में फिल्मी क्षेत्र में प्रवेश किया था । उनकी पहली पटकथा "ममिया बहन" {मुरप्पेण्णु} है । इसमें सौन्दर्य, कला एवं आर्थिक तौर पर फिल्म की विजय केलिए ज़रूरी फार्मुला का अद्भुत मिश्रण हुआ है । सन् 1973 में फिल्म निर्देशन में अपने पहले ही प्रयास "अर्पण" {निर्माल्यम्} केलिए एम. टी. ने राष्ट्रपति का स्वर्णपदक जीत लिया । अपनी ही कहानी "तलवार और पायल" - {पल्लिवालुं कालचिलम्बुं} पर आधारित उनकी उक्त फिल्म पटकथा केलिए भी पुरस्कृत हुई थी । पटकथा केलिए राष्ट्रीय स्तर पर पाँच बार पुरस्कृत हुए हैं ।

अपनी रचनाओं के आधार पर ही उन्होंने अधिकांश पटकथाओं की रचना की है । "ममिया बहन" {मुरप्पेण्णु}, "अन्धेरे की आत्मा" - {इरुट्टिन्टे आत्मावु}, "दिन के सपने" {पकल किनावु}, "नगर को धन्यवाद" {नगरमे नन्दी}, "तरंग और तट" {ओलवुं तीरवुं}, "कुट्टी दीदी" - {कुट्टियेट्टत्ती}, "मुखबिर" {माप्पुसाक्षी}, "बीज" {वित्तुकल}, "अर्पण" {निर्माल्यम}, "बन्धन", "एकाकिनी", "पगडंडी की बिल्ली: खामोश बिल्ली" {इटवषियिले पूच्चा: मिन्टा पूच्चा}, "नीलकमल" - {नीला तामरा}, "बडी दीदी" {ओप्पोल}, "पालतू जानवर" {वलरत्तु-मृगङ्गल्}, "हाथीबंध" {वारिक्कुषी}, "आरूढं", "भीड में अकेला" - {आलक्कूट्टत्तिल तनिये}, "असुरबीज" {असुरवित्तु}, "अर्द्ध रात और दिन की रोशनी" {पातिरावुं पकलवेलिच्चवुं}, "तुषार" {मञ्ञु} आदि उनकी कहानियों पर आधारित है ।

अन्य रचनाकारों की रचनाओं पर आधारित पाँच पटकथाएँ भी उन्होंने लिखी है । "मिट्टी की सीने में" (मण्णिन्टे मारिल्) का आधार मलयालम के मशहूर कथाकार चेरुकाड की रचना है । "पानी" (वेल्लं) एन. एन. पिषारडी की कहानी पर आधारित है । अंग्रेज़ी लेखिका डाफ्ने दुमोरिये की कहानी "रेबेक्का" पर आधारित है - "नौघाट" (कटवु) । एम. टी. के निदेशन में बनायी गयी यह फिल्म सिंगपूर एवं टोकियो अंतराष्ट्रीय फिल्म समारोहों में पुरस्कृत हुआ है । "एक छोटी सी मुस्कान" नामक उनका नवीनतम फिल्म भी बहुचर्चित है ।

एम. टी. वासुदेवन नायर का रचना संसार

एम. टी. का अब तक प्रकाशित साहित्य का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार हैं :-

उपन्यास

1. हवेली (नालुकेट्टु)

यह एम. टी. के प्रथम चर्चित उपन्यास है, जो सन् 1958 आगस्त में प्रकाशित हुआ था । नष्ट-भ्रष्ट होनेवाली हवेली से स्वतंत्र होकर उदित होनेवाले व्यक्ति की आकांक्षाओं और अभिलाषाओं का एम. टी. ने इसमें वाङ्मय दिया है । इसका केन्द्रीय पात्र अप्पुण्णी है ।

2. अर्द्धरात और दिन की रोशनी (पातिरावुं पकलवेलिच्चवुं)

सन् 1958 में इस उपन्यास का प्रकाशन हुआ । यह एक रूमानी उपन्यास है । अपक्व प्रेम एवं भीति के संयोग से अपनी मुट्टी से घिसक जानेवाला जीवन ही इस उपन्यास की विषयवस्तु है । परंपरागत रूढियों पर अटल रहनेवाले समाज के सम्मुख चंचल होनेवाले कायर गोपी इस का नायक है ।

3. अरब सोना (अरबि पोन्नु)

इसका प्रकाशन सन् 1960 में हुआ । मलयालम के रचनाकार एन. पी. मुहम्मद से मिलकर उन्होंने इस उपन्यास की रचना की है । एक ज़माने के केरल में प्रचलित नाज़ायस सौदे के चालों व नतीजाओं के आधार पर रचित उपन्यास है यह । इसमें "कोया" नामक पात्र का उतार-चढ़ाव इस सौदा से जोड़कर प्रस्तुत किया गया है ।

4. असुर बीज (असुरवित्तु)

सन् 1962 में इस उपन्यास का प्रकाशन हुआ । ह्रासोन्मुख संयुक्त परिवार और सामन्तवाद ही "असुर बीज" की पृष्ठभूमि है । परिवार की जीर्ण-जर्जर दशा में 51 वर्ष की आयु में माँ की कोख से जनी गोविन्दन कुट्टी को परिवारवाले दुर्भाग्य मानते हैं । यों पुराने सामाजिक और पारिवारिक प्रथा की दीवारों से टकराकर घायल होनेवाले व्यक्ति-मानव का चित्रण ही इस उपन्यास का विषय है

5. तुषार (मञ्ञु)

इसका प्रकाशन सन् 1964 में हुआ । यह उनकी बहु चर्चित एवं प्रख्यात लघु उपन्यास है । उनकी अन्य रचनाओं की अपेक्षा शिल्प तथा संवेदना की दृष्टि से इसका विशिष्ट स्थान है । एकाकी विमला की अतृप्त और भग्न अनुभूतियों की करुणाद्र कहानी है यह ।

6. कालम्

सन् 1969 में इसका प्रकाशन हुआ । इनके अन्य उपन्यासों की अपेक्षा आधुनिक बोध को अधिक उजागर करनेवाला उपन्यास है -"कालम्"। "कालम्" का सेतु मोहभंग और कुंठा से ग्रसित स्वातंत्रोत्तर पीढ़ी का प्रतिनिधि है ।

7. विलापयात्रा

इसका प्रकाशन सन् 1978 में हुआ । इस उपन्यास में मृत्यु को पृष्ठभूमि के रूप में चुना है । पिता की मृत्यु के दिन बेटों के मन में उत्पन्न होनेवाले विचारों और स्मृतियों के रूप में इस उपन्यास की रचना हुई है ।

8. दूसरी बारी §रण्टामूष्म§

इस उपन्यास का प्रकाशन सन् 1984 में हुआ । यह उपन्यास भीमसेन के दृष्टिकोण से महाभारत का पुनराख्यान है । यह उपन्यास आठ खण्डों में विभक्त हैं । वे हैं - "यात्रा", "आँधी का मर्मर", "वनवीथियाँ", "अक्षहृदयम", "पाँच रंगों के फूल", "विराटं", "जीर्ण कपडे", एवं "पैतृकं" ।

कहानी संकलन

1. खून से सना बालू §रक्तं पुरण्टा मणल तरिकल§

इसका प्रकाशन सन् 1952 में हुआ । इसमें कुल पाँच कहानियाँ हैं - "मोक्ष का द्वार" §मोक्षत्तिन्टे पटिवातिल§, "टूटते संबन्ध" §अट्टु पोकुन्न बन्धड.ल§, "अर्थहीन सपना" §पोरुलिल्लात्ता किनावु§, "अभिलाषाएँ" - §अभिलाषड्.ल§, "खून से सना बालू" आदि ।

2. धूप और चाँदनी §वेयिलुं निलावुं§

इसका प्रकाशन सन् 1954 में हुआ । इसमें चार कहानियाँ संकलित हैं - जैसे "धूप और चाँदनी", "अभिलाषाएँ" §अभिलाषड्.ल§, "अर्थहीन सपना" §पोरुलिल्लात्ता किनावु§, "पवित्र नगरी" §परिशुद्धमाया नगरं§ आदि ।

3. वेदना के फूल (वेदनयुटे पूक्कल)

इसका प्रकाशन सन् 1955 में हुआ । इसमें सात कहानियाँ हैं - "पटाखे" (पडक्कं), "पवित्र नगरी" (परिशुद्धमाया नगरं), "तलवार और पायल" (पल्लिवालुं कालचिलम्बुं), "प्रेम और पारकर पेन" (प्रमवुं पारकर पेनयुं), "बहिन की शादी" (पेड्. लुटे कल्याणम्), "भूल गलती" (तेंटुं तिरुत्तुं), "मुसावरी बंगला" (मुसावरी बंगलाव्) आदि ।

4. तेरी याद में (निन्टे ओरमक्क्)

इसका प्रकाशन सन् 1956 में हुआ । इसमें छः कहानियाँ हैं - "एक जन्म दिन की याद में" (ओरु पिरन्नालिन्टे ओरमक्क्), "मृत्यु की गलती" (मरणत्तिन्टे कैत्तेट), "किले की छाया" (कोट्टयुडे निष़ल्), "दीदी" (ओप्पोल) आदि ।

5. तरंग और तट (ओलवुं तीरवुं)

इसका प्रकाशन सन् 1957 में हुआ । इसमें छः कहानियाँ हैं - "नील कागज़" (नील कडलास), "टूटी हुई कडियाँ" (नुरुंगुन्न श्रृंखलकल्), "मुट्ठी भर गुंना" (ओरु पिडि कुन्निक्कुरु), "एक दिन बीत गया" (ओरु - दिवसं कष़िन्नु), "लाडले का खत" (पुन्नार मोन्टे कत्तु), "तरंग और तट" - (ओलवुं तीरवुं) आदि ।

6. अँधेरे की आत्मा (इरुटिन्टे आत्माव्)

सन् 1957 में प्रकाशित इस कहानी संग्रम में कुल आठ कहानियाँ है - जैसे - "अँधेरे की आत्मा", "अन टूटी कडी" (अटु पोकात्त ओरु कण्णि), "हँसी की कीमत" (चिरियुटे विला), "रात में न गलती एक परछाई" - (रावित् अलियात्ता ओरु निष़ल), "एक कच्चा रिस्ता" (मूप्पु कुरन्ञा बन्धं),

"गेंदा फूल" (जमन्ति पूक्कल), "एक अध्यापक जनमता है" (ओरु अध्यापकन् जनिक्कुन्नु), "अक्कलदामा में फूल खिलते वक्त" (अक्कलदामयिल् पूक्कल - विडरुम्बोल) आदि ।

7. कुट्टी दीदी (कुट्टीयेट्टत्ती)

इसका प्रकाशन सन् 1959 में हुआ । इसमें पाँच कहानियाँ हैं - "कुट्टी दीदी", "सान्ध्य प्रकाश" (अन्तिवेलिच्चं), "कागज़ के नौके" - (कडलासु तोणिकल्), "सूखे पत्तों से ढकी राहें" (करियिलकल् मूटिया - वषित्तारकल्), "प्यार के चेहरे" (स्नेहत्तिन्टे मुखड.ल्) आदि ।

8. खोए हुए दिन (नष्टप्पेट्ट दिनङ्.ल)

सन् 1960 में प्रकाशित इस कहानी संग्रह में पाँच कहानियाँ हैं । वे हैं - "बीज" (वित्तुकल्), "पर्दा" (मूटुपटं), "ओडियन", "दुःख की तराइयाँ" (दुःखत्तिन्टे ताषवरकल्), "पडोसी" (अयलक्कार) आदि ।

9. बन्धन (बन्धनं)

सन् 1963 में प्रकाशित इस कहानी संग्रह में कुल पाँच कहानियाँ हैं । वे हैं - "बन्धन", "भीरु", "नीली पहाडी" (नीलक्कुन्नु), "काँटों का ताज" (मुलकिरीटं), "शान्तिपर्व" आदि ।

10. पतन (पतनं)

इसका प्रकाशन सन् 1966 में हुआ । इसमें कुल चार कहानियाँ हैं । वे हैं - "पतन", "सियार का ब्याह" (कुरुक्कन्टे कल्याणम्), "जोक्कर", "महानगर की पृष्ठभूमि में" (महानगरत्तिन्टे पश्चात्तलत्तिल्) आदि ।

11. घरौंदा (कलिवीडु)

संग्रह

सन् 1966 में प्रकाशित इस कहानी/में चार कहानियाँ हैं । वे हैं - "वधु की आवश्यकता है" (वधुवे आवश्यमुन्ट), "नयी दावपेंच" - (पुतिया अटवुकल), "पानी का बुल्ला" (नीरपोलकल), और "माता" (माताव्) ।

12. हाथीबंध (वारिक्कुषी)

सन् 1967 में प्रकाशित इस संकलन में कुल पाँच कहानियाँ हैं । वे हैं - "हाथीबंध", "वर्षा" (कर्किटकं), "मृत्यु" (मरणं), "काला चांद" - (करुत्ता चन्द्रन्), "अभयं" आदि ।

13. एम. टी. की चुनी हुई कहानियाँ

सन् 1968 में प्रकाशित इस संकलन में कुल 46 कहानियाँ हैं ।

14. दार-ए-सलां

इसका प्रकाशन सन् 1972 में हुआ । इसमें नौ कहानियाँ हैं । वे हैं -"अज्ञात का अनबना स्मारक" (अज्ञातन्टे उयरात्ता स्मारकं), "थल पुराण" (स्थल पुराणम्), "लाल रेत" (चुवन्ना मणल्), "बारह वर्ष सोये फूल (पंत्रन्टु वर्षं उरडि. या पूक्कल), "दार-ए-सलां", "वे" (अवर), "शत्रु", "बिना रेखाओं का चित्र" (रेखयिल्लात्त चित्रम्), "पगडंडी की बिल्ली;, खामोश बिल्ली" (इटवषियिले पूच्चा; मिन्टा पूच्चा) आदि ।

15. अज्ञात का अनबना स्मारक (अज्ञातन्टे उयरात्ता स्मारकं)

इसका प्रकाशन सन् 1972 में हुआ । इसमें कुल चार कहानियाँ हैं - "अज्ञात का अनबना स्मारक; "थल पुराण" (स्थल पुराण), "लाल रेत" (चुवन्न मणल), "बारह वर्ष सोये फूल" (पंत्रन्टु वर्षं उरडि. या पूक्कल) आदि ।

16. अभय खोजकर फिर से (अभयं तेडि वीन्टुं)

इसमें तीन कहानियाँ हैं - "अभय खोजकर फिर से", "पुराकथा" (पुरावृत्तं), और "कहीं ओर की ओर एक रास्ता" (एविडेक्को ओरु वषि) ।

17. जन्नत खुलने का वक्त (स्वर्गं तुरक्कुन्ना समयं)

इसका प्रकाशन सन् 1980 में हुआ । इसमें कुल छः कहानियाँ हैं । वे हैं - "बिक्री" (विल्पना), "फिर शरण खोजकर (अभयं तेडि वीन्टुं), "पुराकथा" (पुरावृत्तं), "कहीं की ओर एक रास्ता" (एविडेक्को ओरु वषि), "होरा", "जन्नत खुलने का वक्त" आदि ।

18. वानप्रस्थ (वानप्रस्थं)

सन् 1992 में प्रकाशित इस संग्रह में कुल चार कहानियाँ हैं । वे हैं - "वानप्रस्थं", "छोटे-छोटे भूकंप (चेरिया चेरिया भूकंपङ्ङल्), "सुकृतं", "मुसलधार" "बारिश के अगले दिन" (पेरुमषयुडे पिटेन्नु) आदि ।

19. षेरलक्

सन् 1995 में प्रकाशित इस संकलन में कुल चार कहानियाँ हैं । वे हैं - "षेरलक", "शिलालेख" (शिलालिखितं), "कडुगण्णाव - एक यात्रा संस्मरण" (कड्गण्णाव - ओरु यात्रक्कुरिप्पु), "कल्पान्त" आदि ।

निबन्ध संग्रह

1. कहानीकार की कार्यशाला (काथिकन्टे पणिप्पुरा)

इसका प्रकाशन सन् 1963 में हुआ । "क्यों लिखता हूँ", "कहानीकार से कहानी की ओर", "उपन्यास के बारे में",

"एक कहानी का जन्म", "एकान्त पथिका", "कहानीकार का प्रारंभिक पाठ", आदि छः निबन्धों के द्वारा कथा-साहित्य संबन्धी अपने विचारों को प्रकट किया है ।

2. हेमिड्.वे एक भूमिका (हेमिड्.वे ओरु मुखवुरा)

इसका प्रकाशन सन् 1968 में हुआ । इसमें उन्होंने अपने आराध्य हेमिड्.वे के जीवन की झलक प्रस्तुत की है ।

3. कहानीकार की कला (काथिकन्टे कला)

सन् 1984 में इस संकलन का प्रकाशन हुआ । "सत्य के उस पल की प्रतीक्षा में", "आम रास्ते की यात्रा", "दृष्टिकोण", "अलिखित पन्ने की कहानी", "अस्तित्वरूपी त्याग", "कहानी की खोज करनेवाला यात्री", निरे मानव का परिवेश आदि सात निबन्ध संकलित हैं, जिसमें कहानी नामक विधा कीशक्ति, सौन्दर्य और प्रासंगिकता संबन्धी उनकी मान्यताएँ प्रकट है ।

4. झरोखे से (किलिवातिलिलूडे)

इस संकलन का प्रकाशन सन् 1992 में हुआ । मानव जीवन के यथार्थ को खींच देनेवाले चौवालीस निबन्धों को इसमें संकलित किया हैं ।

5. एकांकियों के शब्द (एकांकिकलुटे शब्दं)

इस संकलन का प्रकाशन सन् 1996 में हुआ । यह भीड में अकेले चलनेवाले एम. टी. के सत्रह निबन्धों का संकलन हैं । जैसे "राहियों केलिए एक गीत", "शंकित तोमास", "पागल सपने", "खेमों के पीछे", "एकाकियों के शब्द", "अडलट्स ऑली", "सोलसेनिन्ट्स और स्मिरनोफ वोडका", "नोबेल और जापान", "यादों की अल्पायु", "कल्पना की स्वतंत्रता"

यात्रा संस्मरण

1. मानव; परछाइयाँ {मनुष्यर; निषुलुकल}

इस संकलन का प्रकाशन सन् 1960 में हुआ । "फिनिष गाँव में एक दिन", "अलेक्सि रोबिन" और "अँधेरा और रोशनी" के द्वारा उन्होंने अपने फिन्लेंड यात्रा का संस्मरण प्रस्तुत किया है ।

2. भीड में अकेला {आल्क्कूट्टत्तिल तनिये}

इस संकलन का प्रकाशन सन् 1972 में हुआ । इसमें व्यस्तता, मशीनीकरण, बिगडते पारिवारिक संबन्ध रंगभेद आदि अमरीकी जीवन की अन्तर्धारा को बहुत ही बारीकी से चित्रित किया है ।

3. रमणीय एक काल

इसका प्रकाशन सन् 1998 में हुआ । यह पाँच भागों में विभक्त हैं - पहला भाग है -'रमणीय एक काल'। इस भाग में पन्द्रह निबन्ध संकलित है । दूसरा भाग है -'नानी की कहानी का शेष'।

इसमें तीन निबन्ध हैं। तीसरा भाग हैं -'बहुजनों की माँग के वजह'। इसमें तीन लेख हैं । चौथा भाग है - दया भामला । इसमें आठ निबन्ध संकलित हैं । पाँचवाँ भाग है - सत्य की खोज करनेवाली यात्राएँ । इसमें तीन निबन्ध संकलित हैं ।

नाटक

गोपुर के द्वार पर {गोपुरनटयिल}

यह उनका एक मात्र नाटक है । वाणिज्य नाटकों की फोरमुला से बिल्कुल भिन्न इस नाटक को सन् 1978 का केरल सरकार अवार्ड मिला है ।

इन सबके अलावा इन्होंने कई बाल साहित्य कृतियों की रचना भी की हैं ।

पुरस्कार

पुरस्कारों के ज़रिए मलयालम का कोई भी अन्य साहित्यकार इतना कभी भी सम्मानित नहीं हुआ है । सन् 1953 में "न्यूयोर्क हेराल्ड", "दि हिन्दुस्तान टाइम्स" तथा मातृभूमि के संयुक्त तत्वावधान में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय कहानी प्रतियोगिता में उन्हें प्रथम पुरस्कार प्राप्त हुआ । इसके बाद सन् 1959 में अपने उपन्यास "हवेली" केरल साहित्य अकाडमी का अवार्ड प्राप्त हुआ । तब वे अवार्ड जीतनेवाला कनिष्ठतम व्यक्ति थे । इसके बाद "वानप्रस्थम्" कहानी संकलन केलिए और तीसरी बार नाटक "गोपुरनटयिल" केलिए सन् 1982 में केरल साहित्य अकाडमी अवार्ड मिला । उनके उपन्यास "कोलम" को सन् 1970 में केंन्द्रीय साहित्य अकाडमी अवार्ड मिला और "दूसरी बारी" को वयलार साहित्य अवार्ड प्राप्त हुए थे । सन् 1995 में उनकी समग्र देन केलिए ज्ञानपीठ पुरस्कार भी प्राप्त हैं । इन सब के अलावा वे अनेक देशी और विदेशी संस्थाओं द्वारा भी पुरस्कृत हैं ।

रचनाकालीन बाहरी परिवेश

साहित्यकार जैसे उपर्युक्त कहा भी गया है, एक हद तक अपने परिवेश की भी उपज हैं । पारिवारिक माहौल ही नहीं, अपने गाँव, कस्बे व देश की सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियाँ साहित्यकार की सर्जनात्मक दुनिया के रूपायन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है । रचनाओं के कथ्य पर इनका ज़बरदस्त प्रभाव भी पडता है । किसी भी रचनाकार की सर्वांगीण आलोचना एवं उनकी सर्जनात्मक हैसियत के मूल्यांकन केलिए इन परिस्थितियों की छानबीन बहुत ज़रूरी है । पर निर्मल वर्मा के संदर्भ में यह गौर करने की बात हैं कि उनकी सर्जनात्मक रचनाओं में राजनीतिक, सामाजिक व सांस्कृतिक घटनाओं का सीधा प्रभाव पडा नहीं है । इसका स्पष्ट कारण यह है कि वे आत्मोन्मुख कलाकार रहे हैं । उनकी दृष्टि व्यक्ति और व्यक्ति-मानस की गहराई में गड़ी हुई है । यानी व्यक्ति-मन की अनंत परतों को उघाडकर प्रस्तुत करना ही उनकी समूची सर्जनात्मकता की विशिष्टता है । बहुत सालों तक वे प्रवासी रहे थे । इसलिए भारतीय परिवेश से निरपेक्ष रहना उनकी मज़बूरी था । लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि वे राजनीतिक घटनाओं से बिल्कुल परहेज़ रहे है । भारत का आपात्काल - जो भारतीय इतिहास पर पड़ा काला धब्बा रहा है - का प्रखर प्रभाव "रात का रिपोर्टर" में हुआ है । रिपोर्टर जो सदमा झेलता है, वह सचमुच प्रत्येक भारतीय नागरिक का ही तजुरबा रहा है ।

स्वतंत्रता के बाद भारत के सामाजिक जीवन में जो परिवर्तन आए, संबन्धों में जो विघटन हुए, व्यक्ति जिस अयाचित स्थिति से गुज़रने केलिए मज़बूर हो गया, इन सबका अप्रत्यक्ष प्रभाव निर्मल वर्मा की सर्जनात्मकता पर पड़ी है ।

स्वतंत्रता के पूर्व भारतवासी जिस स्वर्णिम सामाजिक व्यवस्था का सपना संजोए थे, वह सपना ही रह गये । स्वातंत्रोत्तर युग सुख-शान्ति, समृद्धि तथा उन्नति का न होकर मोहभंग, विभाजन और टूटते हुए जीवन मूल्यों का युग बन गया । समाज की राहें हिपोक्रसी की धुंध से गुमराह हो गयीं । सारी संस्थाएँ धांधली का अड्डा हो गयीं । इसके साथ तकनीकी आन्दोलन और औद्योगीकरण के कारण भारतीय नगरों में एक विशेष संस्कृति और सभ्यता भी उद्भूत हो गयीं । विदेशी नगर सभ्यता से मिलती जुलती एक यंत्रवत् समाज और ज़िन्दगी का प्रस्फुटन हुआ । इस समाज में आदमी भी मशीन की तरह हो गया । वह यन्त्र का स्वामी न रहकर उसका गुलाम हो गया । इस तकनीकी तानाशाही से व्यक्ति का अस्तित्व तक खतैर में पड़ गया । उसका व्यक्तित्व विभाजित हो गया । दैनिक जीवन की "बोरियत" उसे व्यक्तित्वहीन बनाने में सहायक सिद्ध हो गयी । यहाँ तक कि व्यक्ति की स्वतंत्रता को दबाने की चेष्टा भी हुई ।

विघटन और बिखराव ने गाँव तथा शहरों में अनेक समस्याओं को जन्म दिया । औद्योगीकरण से नगरीकरण हुआ और नगरीकरण से समाज के परम्परागत ढाँचे में परिवर्तन आया । परिवार से हटकर व्यक्ति के दायरे में समाज सीमित हो गया । डॉ. नित्यानंद तिवारी के अनुसार - "व्यक्तिगत हितसाधना ने निर्णय के मूल्य बदल दिये । नौकरी का निर्णय, बच्चों के भविष्य का निर्णय माता-पिता तक सीमित हो गया और बडे होने पर बच्चे स्वयं समर्थ मानने लगे । तकनीकी विकास ने भीड समाज को पैदा किया, जिसमें उत्पादन और उपभोग के विकास के अतिरिक्त और किसी चीज़ की गुंजाइश नहीं रही ।"§।§ संवाद-हीनता की इस दशा में व्यक्ति की ज़िन्दगी नीरस एवं निरर्थक हो गयी । सब अलग होकर अपने अपने

---

§।§ डॉ. नित्यानंद तिवारी - आधुनिक साहित्य और इतिहास बोध - पृ 59

दायरे में, दम-घुटने लगे । इसलिए वह "मिसफिट" था अवसंगत होने के भाव से सत्रस्त रहने लगे । इस बेहूदी हालत में मनुष्य को अपना अस्तित्व ही निरर्थक लगता है । फालतूपन का अहसास उसे निगलता है और अपने को कहीं भागीदार न बन पाने की बेबसी में वह सबसे "एलिनेटड" हो जाता है । निर्मल वर्मा की अधिकांश रचनाओं में यही भाव उदात्त अवस्था तक पहुँच गया है ।

एम. टी. वासुदेवन नायर के रचनाकालीन परिवेश

राजनीतिक परिस्थिति

जब भारत भर में स्वतन्त्रता-संग्राम ज़ोरों पर चल रहा था, तभी एम. टी. का जन्म हुआ था । केरल में स्वतन्त्रता संग्राम एवं मज़दूर राजनीतिक संगठन का शक्ति केन्द्र मलबार था । यह तो हैरानी की बात है कि एम. टी. की कृतियों में इसका उतना स्पष्ट चित्रण मयस्सर नहीं है । केरल के राजनीतिक इतिहास में मलबार के अनेक नेताओं ने अपनी छाप अंकित की थी । कॉंग्रस दल की स्थापना, जनता में राष्ट्रीय चेतना एवं संगठन की उद्भावना केरल में सबसे पहले मलबार में हुई थी । मलबार में गठित संगठन ही बाद में केरल भर में फैल गया था जैसे कॉंग्रस दल, सोष्यलिस्ट-कम्यूनिस्ट दल, किसान दल, ट्रेड यूनियन आदि ।

सन् 1908 में मलबार में कॉंग्रेस कम्मेटी की स्थापना हुई थी । गाँधीजी के नेतृत्व में भारत भर में अहिंसा-क्रान्ति की लहरें उठ रही थीं । "नमक आन्दोलन" एवं "असहयोग आन्दोलन" केरल में भी ज़ोरों पर चले । इसके साथ युवा जनों के विद्रोही स्वर भी बुलन्द होने लगा था । इसने जनता को दो दलों मितवादी एवं तीव्रवादी (क्रान्तिकारी) खेमे में बाँट दिया ।

मतभेद की वजह कांग्रेस कम्मेटी में जो भिन्नता हुई उसके फलस्वरूप मितवादी कांग्रेस में ही रहे और क्रान्तिकारियों के हाथों प्रगतिशील दल का नेतृत्व आ गया, जो अक्सर किसानों और मज़दूरों केलिए आवाज़ बुलन्द करते थे । सन् 1934 में कॉम्रेड पी. कृष्णपिल्ला, ए. के. गोपालन एवं ई. एम. शंकरन नंपूतिरीपाट के नेतृत्व में सोष्यलिस्ट पार्टी की स्थापना हुई । तब से मज़दूर लोगों का संगठन अस्तित्व में आया और ट्रेड यूनियनों की शुरुआत भी हुई । समाजवादी पार्टी के नेतृत्व से कोटन मिल हडताल, फरोक हडताल, गरीबों की जुलूस आदि ने जनजीवन को जागरित, उद्वेलित एवं गतिशील भी किया था ।

यों मलबार का राजनीतिक वातावरण कलुषित एवं आक्रान्त हो गया था । जनता में बेचैनी और भविष्य की आशंका बढ रही थी । सिर्फ केरल में ही नहीं, भारत भर में अशांति, अकाल, हडताल, जुलूस एवं संघर्ष रोजमर्रा घटनाएँ बन रही थीं । हालांकि 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध का अंत हुआ था, पर दुनिया भर के लोग अणुबंम की भीति से त्रस्त थे । सन् 1946 के "वयलार पुन्नप्रा" संघर्ष केरल के राजनीतिक इतिहास की जाज्वल्यमान घटना थी । मलबार के कई गाँवों में पीडित एवं शोषित किसान पूँजीवादी ज़मीन्दार प्रथा के विरुद्ध लडकर शहीद हो गये । तलशेरी, मट्टन्नूर, मोराष़ा और कय्यूर में किसानों की तरफ से जो क्रान्ति मचायी गयी उसकी अनगूंज आज भी ध्वनित है ।

इसप्रकार के बाहरी परिवेश में पलने पर भी एम. टी. की कृतियों में, जैसे सूचित किया गया, ये घटनाएँ, हू-ब-हू प्रतिफलित नहीं है । दरअसल एम. टी. आत्मोन्मुखी कलाकार है । अपने पारिवारिक परिवेश ही उन्हें गहराई से प्रभावित किया था । स्वभाव में भी वे संकुचित है; उतने मिलनसार नहीं है । सृजन के संदर्भ में उन्होंने कोई बाहरी नज़रिए से

ज़्यादा अपने वैयक्तिक दृष्टिकोण को ही महत्व देते हैं । अपनी सर्जनात्मकता के संबन्ध में उन्होंने खुद लिखा है - सृजन के क्षणों में, मैं तमाम प्रकार की परतंत्रताओं से छुटकारा पाता हूँ । इस क्षण में ही मेरा अस्तित्व पूर्ण बन जाता है । सृजन के निमिष में मेरा मन आनंद से ओतप्रोत हो जाता है । अतृप्त आत्मा को कभी कभार हासिल होते खुशी के असुलभ पलों के वास्ते, यानी उस स्वतंत्रता केलिए मैं लिखता हूँ । वो स्वतंत्रता या संतोष नहीं हैं तो मैं सिर्फ जनगणना का एक अंक मात्र रह जाता ।§।§

हकीकत यह है कि एम. टी. अवश्य विद्यार्थी जीवन के दौरान राष्ट्रीय स्वतंत्रता आन्दोलन से आकृष्ट थे । स्वातंत्रोत्तर भारतीय राजनीतिक परिवेश एवं घटनाएँ जनता की आशाओं को झकझोरनेवाली थीं । संघर्ष, गरीबी एवं महामारी की गिरफ्त में दम घुटी ज़िन्दगी जीती जनता में नयी आकांक्षाएँ एवं उम्मीदें भरी थी । विडम्बना की बात है कि जनता को सत्ता एवं राजनीतिक दलों ने मोहभंग के गहरे गर्त में ढकेल दिया । लोगों ने समझ लिया कि सरकार चाहे कांग्रेस हो, या समाजवादी, आम भारतीय की हालत में कोई फरक नहीं आता । इस प्रकार विचारवान व्यक्ति केलिए राजनीति माखौल की चीज़ बन गयी । एम. टी. की सोच भी एक हद तक ऐसी ही थी ।

आर्थिक परिस्थिति

एम. टी. की रचनाओं का एक प्रमुख विषय गरीबी है । अपनी जवानी के दिनों में वे महसूस कर रहे थे कि सारी दुनिया बडे आर्थिक

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर, कहानीकार की कार्यशाला, पृः ।2

संकट से गुज़र रही है । "मलबार" में रोज़ाना एक बार तक खाना पकाते घरों की संख्या बहुत कम थी । संयुक्त परिवार में एक से अधिक रसोई की व्यवस्था भी थी । घर में कुछ बच्चों को खाना मिलता था, कतिपयों को नहीं । सन् 1943 का अकाल पूरे देश को चकनाचूर कर दिया था । बेकार युवकों की संख्या ज़्यादातर हो गयी थी । खेतों को बिना बोये बेकार छोड दिया गया था । इस वातावरण में वामपंथी राजनीतिक विचार धारा का ज़ोरों पर प्रचार हुआ । "गरीबी जुलूस" निकाले गये । इन सबकी वजह कई युवक नौकरी की तलाश में विदेश चले गये । कई लोग असम में मज़दूरी करने गये तो, कई फौज में दाखिल हो गये । अपने देश में जो बचे थे, वे हैजा, मलेरिया आदि महामारियों के चपेट में आ गए । श्री. ई. एम. शंकरन नंपूतिरीपाट ने उल्लेख किया है कि इनसे लगभग एक लाख लोग मारे गये । द्वितीय महायुद्ध के दौरान लोगों को जो पीडाएँ झेलनी पडीं, हैजा जैसे भीषण बीमारियों से कीडों की भाँति कुलबुलाती आम जनता की पीडाओं का चित्रण एम. टी. ने अपने उपन्यास "असुरवित्तु" में किया है ।

श्री. ई. एम. शंकरन नंपूतिरीपाट ने लिखा है – "दूसरे विश्वयुद्ध के पहले ही केरल की स्थिति बहुत दयनीय थी । उस वक्त "कोची सरकार" द्वारा किये आर्थिक सर्वे केअनुसार अधिकांश लोगों की आय प्रतिवर्ष सौ रुपये से कम थी । समाज का उच्चवर्ग ही मानव की बुनियादी ज़रूरतों का निर्वाह कर सकता था ।"§1§ इसी विपन्न माहौल में द्वितीय विश्वयुद्ध, अकाल एवं महामारी का भीषण आक्रमण हुआ था ।

---

§1§ ई. एम. शंकरन नंपूतिरीपाट – केरल मलयालियों की मातृभूमि

इन सबके अलावा अंग्रेज़ों ने बडी तादाद में सैनिकों को नौकरी से निकाल भी दिया । वे अपने देश लौटकर इधर-उधर भटकने लगे । यह हालत मध्यवर्ग को बुरी तरह संभ्रान्त किया था । ज़िन्दगी गुज़ारने के वास्ते नौकरी की तलाश में लोग सिंगपूर और श्रीलंका की ओर निकल पडे । एम. टी. के कथा संसार के पिताजी जो श्रीलंका में कार्यरत है - दरअसल इसी आर्थिक परिस्थिति की उपज एवं ऐसे हज़ारों नौकरी पेश लोगों के प्रतिनिधि है ।

सामाजिक परिस्थिति

एम. टी. के रचना समय की सामाजिक परिस्थिति के विचार के संदर्भ में "नायर" समाज में बरकरार रही संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था का विश्लेषण अवश्यंभावी है । नायर जाति केरल का एक मुख्य वर्ग है । यह मातृसत्तात्मक व्यवस्था नायर जाति में ही नहीं, "ईळवा", "वेल्लाला", मलबार के "माप्पिल्लै" आदि केरल के प्रायः समुदायों में मौजूद थी । इस व्यवस्था केअनुसार परिवार का पूरा अधिकार "मामा" पर अधिष्ठित है, जिसे "कारणवर" पुकारा जाता है । परिवार के अन्य सदस्यों को कोई अधिकार नहीं था । "कारणवर" के सामने आने तक केलिए वे लोग डरते थे । सदस्यों से खुला संवाद नहीं होता था । प्रत्येक हफ्ते बखार से खर्च का धान तौलकर देने से उनका काम समाप्त होता था । बहनों और भाँझों के "वैवाहिक संबन्ध" करवा देने का अधिकार भी इन पर था । इन बुज़ुर्गों (कारणवर) की ऐसी अधिनायकवृत्ति थी कि पारिवारिक सदस्यों की इच्छा के बगैर संबन्ध एवं संबन्ध-विच्छेद करवा देते थे । मलयालम के विख्यात लेखक चंतुमेनन, तकषी, केशवदेव आदि केउपन्यासों में इन हालतों का सविस्तार चित्रण हुआ हैं ।

इस व्यवस्था के अनुसार तीन पीढ़ियों के गुज़रने के बाद ही पारिवारिक संपत्ति का बँटवारा संभव था । लेकिन खानदान के ऐश्वर्य एवं महिमा की रक्षा के बहाने "कारणवर" तब भी सहमति नहीं देता था । इस व्यवस्था में सबसे अधिक दुर्दशा स्त्रियों की थी । परिवार में उनकी कोई हैसियत नहीं थी । कारणवर की इच्छाओं के मुत्ताबिक उन्हें नाचना पड़ता था । एम. टी. के उपन्यास की कुन्झोप्पोल, {आसुरीबीज}, मीनाक्षी, मालु, {हवेली} सब इस बदहालत की शिकार हैं । "कारणवर" द्वारा नियुक्त पुरुषों के साथ सोना और उनके कहने पर संबन्ध-विच्छेद करना - स्त्रियाँ वाकई कारणवर की गुलाम थी । कारणवर जो धान तौलकर देता था, उससे परिवार के सभी लोगों को खिलाना पडता था । इसलिए कभी-कभी स्त्रियों और बच्चों को भूखा रहना पडता था । युवकों की हालत भी बुरी थी । उन्हें अपनी अनिवार्यताओं तक केलिए कारणवर के आगे हाथ पसारना पडता था । अपने ही परिवार में इनकी कोई जड या सुरक्षा नहीं थी । इसलिए ये हरदम अस्वस्थ रहते थे ।

मातृसत्तात्मक व्यवस्था की शुरुआत में "कारणवर" अपनी पत्नी को साथ नहीं रखता था । स्त्रियाँ अपने ही परिवार में रहती थीं । लेकिन बाद में स्थिति बदल गयी । पत्नी को साथ रखने की प्रथा का प्रारंभ हुआ । परिवार के अन्य सदस्यों को यह भाता नहीं था । क्योंकि वे कारणवर की पत्नी का भी सम्मान करने केलिए मजबूर थे । धीरे-धीरे पत्नी, पति के अधिकार में हाथ डालने लगा तो संयुक्त परिवार के सदस्यों में आपसी अनबन और तनाव बढ़ने लगे । व्यवस्था के अनुसार कारणवर की पत्नी को परिवार की संपत्ति पर कोई अधिकार नहीं था । इसलिए कारणवर पत्नी को संपत्ति दान में देने लगा । धीरे-धीरे यह एक अलिखित नियम सा हो गया । साथ ही साथ जो पत्नी माइके रहती थी

कारणवर अपने बच्चों के परिवरिश की खातिर पैसे माइके भेजने लगे । संयुक्त परिवार में मातृ वारिसों की संख्या बढ़ने पर खेती संभालने केलिए वारिसों को सौंपने की रीति थी । इन्हें फसल काटने का अधिकार तो था, लेकिन भूमि पर कोई हक नहीं था । इतना ही नहीं कारणवर जब चाहे खेतीकरने की सुविधा भी वापस ले सकता था । चंतुमेनन के उपन्यासों में ऐसी घटनाओं का चित्रण दृष्टव्य है ।

समय गुज़रते कारणवर की बढ़ती तानाशाही और अन्यायों से तंग आकर नौजवान उसके विरुद्ध आवाज़ उठाने लगे ।

मन्नत्त् पद्मनाभन के तत्वावधान में बने "नायर सरवीस सोसाइटी" ने इस व्यवस्था का अन्त करने केलिए अगुआ की भूमिका निभाई थी और अनेक संघर्ष भी चलाये थे । इसके फलस्वरूप सन् 1920 में "तिरुवितांकूर प्रथम नायर आक्ट" अमल में लाया गया । इसके अनुसार पुरुष की संपत्ति का आधा भाग बेटों को और बाकी हिस्सा भांजे-भांजी को देना पडता था । कुछ हेर-फेर के साथ सन् 1925 में दूसरा नायर आक्ट अमल में आया । इसके अनुसार परिवार के सदस्यों की संख्या के अनुसार संपत्ति बाँट देनी पडती थी । "कोची नायर आक्ट" के द्वारा "नायर विवाह" को कानूनी सहमति मिली । यों पत्नी और बच्चों की परिवरिश की जिम्मेदारी पति पर निर्भर हो गयी । पारिवारिक संपत्ति की बँटवारा अवश्यंभावी हो गया ।

इसके पहले केरल में नायर स्त्रियों का नंपूतिरी पुरुषों के साथ विवाह संबन्ध रखने का रिवाज़ था । नायर स्त्रियों के बच्चों का, चाहे वह नंपूतिरी का हो या नायर का, संरक्षण का दायित्व पिता पर नहीं था ।

उक्त नियम के लागू होने तक यह प्रथा प्रचलित रही । सन् 37-38 में और एक विधायक पारित हो गया, जिससे "कारणवर" पर अधिष्ठित सारे अधिकार निकाल दिये गये । इससे पुरुष की मृत्यु पर उसकी संपत्ति पर हक पत्नी और बच्चे का हो गया । नाबालिग भी संपत्ति के हकदार थे । इसीप्रकार धीरे-धीरे केरल में प्रचलित मातृसत्तात्मक व्यवस्था, पितृसत्तात्मक व्यवस्था में परिणत हो गयी । इसकी वजह लगभग सन् 1967 तक आते केरल में अणुपरिवार व्यापक तौर पर साबित हो गए । यह संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था और उसके परिवर्तन से जुड़ी सभी आयामों का बारीकी वाङ्मय एम. टी. के कथा संसार का अनिवार्य हिस्सा है ।

केरल के पारिवारिक जीवन में घटित यह परिवर्तन केवल एक बाह्य घटना नहीं थी । प्रत्येक परिवार एवं व्यक्ति पर यह बुरी तरह हावी थी । यह महत्वपूर्ण बात है कि नायर परिवार के प्रत्येक अंग को वैयक्तिक स्वतन्त्रता मिल गयी । यद्यपि नये माहौल में नव जीवन की आशा-आकांक्षा प्रत्येक के मन में उभर रही थी; फिर भी सब के आगे भविष्य एक प्रश्न-चिह्न बनकर खडा था । खेती की विशाल भूमि छोटे-छोटे टुकडों में बँट गयी थी । खेती-बारी, संयुक्त परिवार में ऐशो-आराम से जीवन बिताये युवकों की वश की बात नहीं थी ।

यों एम. टी. की रचनाओं में पैदायशी माहौल, पारिवारिक वातावरण एवं सामाजिक परिवेश का जबरदस्त प्रभाव पड़ा है । राजनीतिक घटनाओं का तीव्रतर प्रभाव उनके साहित्य में उतना नहीं है । इसके कारण भी है ।

संयुक्त परिवार की अधिनायक मनोवृत्ति का आघात बच्चों के मन में कितनी गहराई से पड़ती है, इसके ज्वलंत सबूत है एम. टी. की कहानियाँ ।

"हवेली", "आसुरीबीज", "कालम्", "विलापयात्रा" आदि उपन्यासों में चित्रित पारिवारिक वातावरण से तत्कालीन यथार्थ परिवेश बिल्कुल भिन्न नहीं है । इतना ही नहीं, इन रचनाओं से गुज़रते वक्त हम जिन पिता, बेटा, माँ और मामा से परिचित होते है, वे सब मलबार के गाँवों के अपने ही हैं ।

बहुत समय तक अपने एक निजी एवं विशिष्ट वातावरण में पलित समाज एकाएक अपनी सीमित दुनिया के दायरे से बाहर आना पसंद नहीं करता है, अपनी अतीत में तल्लीन रहना चाहता है । एम. टी. ने यह स्वीकार भी किया है । उनको अतीत ज़िन्दगी पर लिखी गयी अपनी कहानियाँ ही अधिक प्रिय हैं । एम. टी. ने लिखा हैं - "कूटल्लूर गाँव की छोटी सी दुनिया से मैं अपने आपको अलग नहीं कर सकता । इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि बाहर नहीं जाता । मैं हमेशा नवीनता की तलाश में हूँ । फिर भी मैं फिर यहाँ वापस आता हूँ । शायद यह मेरी कमज़ोरी होगी । लेकिन न जाने कुदरत के अज्ञात अनुभवों को अपनी कोख में समेटती अनजान महासागरों के अनंत विविधता की अपेक्षा मैं अपने चिरपरिचित निला नदी को ही ज़्यादातर पसन्द करता हूँ ।"[1]

बर्नाड षा ने उल्लेख किया है कि अपने आप और अपने समय के बारे में लिखनेवाला ही वास्तव में सबके बारे में एवं सभी समय के बारे में लिखता है ।[2] लेकिन एम. टी. इस बात पर पूरा खरा उतरते नहीं है ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - "चुनी हुई कहानियाँ" की भूमिका, 1978 - पृ: 9

[2] "The man who writes about himself and his own times is the only man who writes about all people and about all time!" George Bernard Shaw preface to:- "The Sanity of Art" - 1932 - P: 284

इसके कारण भी है । उनके मन में गहरी निराशा एवं हताशा के भाव जमे हुए थे, जो समकालीन स्थाई भाव रहे थे । एम. टी. ने लिखा है - "हमें स्वतन्त्रता मिली । हर साल वार्षिक आंकडे में ज़रूर इसका जिक्र होगा कि हमारे यहाँ कितनी कच्ची और पक्की सडकें हैं । इसका ब्योरा भी होगा कि कितनी दूरी का रेलवे लाइन होना चाहिए । पर इस महान देश में आज भी लोग भूख से मरते हैं । आज के राजनीतिक नेता मानव को कोई महत्व ही नहीं देता है । नाज़ुक मानवीय संबन्धों को वे नज़र अन्दाज़ कर देते हैं । उनकी इनसानियत सोख गयी हैं । इसप्रकार की सामाजिक एवं राजनीतिक व्यवस्था से गुज़रने पर चिन्तनशील व्यक्ति के मन में अतृप्ति की उपज स्वाभाविक ही है ।"[1] एम. टी. ने इस प्रकार अपनी रचनाओं की सामाजिक एवं पारिवारिक प्रेरणा का संकेत देते हुए इस हद तक लिखा है कि - "समाज कहानीकार या कलाकार का अभिभावक या धाय माँ नहीं है, वह दरअसल उसका मित्र है ।"[2]

निष्कर्ष

यों निर्मल वर्मा और एम. टी. के सृजनात्मक परिवेश और सर्जनात्मक व्यक्तित्व का विश्लेषण करने पर पता चलता है कि दोनों को कोई साहित्यिक परंपरा प्राप्त नहीं थी । लेकिन दोनों के घरेलु परिवेश मन में सुप्त पडे साहित्य के प्रति रुचि को बढावा देनेवाले थे । लेखन की शुरुआत में कविताओं के प्रति दोनों का बेहद लगाव थे ।

---

[1] एम. टी. , इब्राहीम बेवीन्ज़ा से साक्षात्कार - वीक्षण - 1980 जून 29

[2] एम. टी. , आरसू से साक्षात्कार

जवानी के प्रारंभ में ही वे दोनों विश्व साहित्य के प्रकृष्ट कृतियों का अध्ययन कर चुके थे । निर्मल वर्मा ने लिखा हैं कि चेखव, तुर्गनिव, टाल्स्टाई, गोर्की आदि रूसी लेखकों और टॉमस मान, मार्सल प्रूस्त और काफ़्का उनको पाठकीय अनुभव की नयी दिशाएँ खोलीं । वर्जीनिया वुल्फ और कम्यू को पढ़ना एम. टी. केलिए भी एक अद्वितीय अनुभव था । यूरोप के लम्बे प्रवास के दौरान निर्मल वर्मा को मुक्त वातावरण में रहने का अवसर मिला और वे घूमते रहे । साथ साहित्य सृजन में भी तल्लीन रहे । अरसों पहले इन दोनों का कम्यूनिस्ट पार्टी से संबन्ध था । लेकिन वे दोनों ही किसी राजनीतिक दल का सदस्य नहीं बने । एक सतर्क नागरिक की हैसियत से समाज के हर प्रश्न को समझना और तौलना परखना ही एक लेखक का कर्तव्य है । उन दोनों का मत यह है । किसी राजनीतिक दल विशेष के आईने से समाज को न देखकर उसे थोडा निष्पक्ष और तटस्थ ढंग से आँकने पर ही यह संभव हो जायेगा । ये दोनों ही साहित्य का कोई सामाजिक सरोकर नहीं मानते । जैसे एम. टी. ने कहा है - समाज कहानीकार या कलाकार का अभिभावक या धाय माँ नहीं है । वह दरअसल उसका मित्र है ।"§1§ निर्मल वर्मा ने भी कहा है - साहित्य आईना नहीं, जो प्रतिबिंब प्रस्तुत करे, अपितु वह जीवन का पूरक है, संपूर्ति करता है ।"§2§ यों निर्मल वर्मा और एम. टी. के सृजनात्मक व्यक्तित्व में समान विशेषताएँ है ।

---

§1§ एम. टी. , आरसू से साक्षात्कार

§2§ निर्मल वर्मा - अशोक वाजपेय से साक्षात्कार

दूसरा अध्याय -

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य में अभिव्यक्त दार्शनिक आयाम

दर्शन

मानव के समक्ष प्रकृति का अस्तित्व सदा निगूढ़ एवं अपूर्ण रहा है । प्रकृति को पूर्णतः समझने की मानवीय अभीत्सा युगों से होकर आज भी जारी है । प्रकृति को समझने के श्रम के साथ ही अपने अस्तित्व और प्रकृति से अपने संबन्ध के प्रति भी मनुष्य हमेशा सचेत रहा है । इस प्रकार जगत् संबन्धी और जगत के साथ अपने संबन्ध के प्रति मनुष्य की समाकलित धारणा ही दर्शन है ।§1§ दार्शनिक बाह्य जगत् को समग्र रूप में ग्रहण करके अपने बुद्धि के बल और तर्कों के आधार पर उनके सामान्य रूप की व्याख्या करता है और बौद्धिक सत्य की खोज करके मनुष्य जीवन को गति, दिशा, सार्थकता और महत्ता प्रदान करता हैं,"§2§ यों जिस प्रकार जीवन और दर्शन का अटूट संबन्ध है, उसी प्रकार साहित्य और दर्शन का भी संबन्ध अटूट है ।

विश्व साहित्य के प्रायः सभी ग्रन्थ किसी न किसी ठोस दार्शनिक धरातल पर ही अधिष्ठित हैं । जिसप्रकार जीवन के उदात्तीकरण केलिए दर्शन की आवश्यकता होती है, उसीप्रकार साहित्य को औदात्य और स्थायित्व प्रदान करने केलिए दार्शनिक चिन्तन का स्पर्श अपेक्षित है । साहित्य का लक्ष्य आनन्दमय आत्मानुभव है । दर्शन का लक्ष्य प्रकाशमय आत्मानुभव है । जहाँ दोनों का समन्वय हो, वह रचना निश्चय ही श्रेष्ठ है । जब दर्शन साहित्य और उनके माध्यम से जीवन से संपर्क स्थापित करता है, देश और काल के अनुरूप दार्शनिक चिन्तनधाराएँ भी न्यूनाधिक रूप से बदलती गयी हैं और नित्य नये दर्शनों का उदय भी हुआ है । इन दर्शनों का प्रभाव मानव-जीवन के हर आयाम पर पडता भी है ।

---

§1§ K.Damodharan - Indian Thought a Critical Survey, P: 75

§2§ Hector Hawton - Philosophy for Pleasure, P: 13

अनेक आलोचकों ने इस बात का उल्लेख किया है कि निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के उपन्यासों में अस्तित्ववादी दर्शन के विभिन्न आयामों का प्रभाव पडा है । इसके बारीकी विश्लेषण केलिए इसका उल्लेख अवश्यंभावी है कि अस्तित्ववादी दर्शन के रूपायन में पश्चिम में किन किन परिस्थितियों ने भूमिका निभाई थी, भारत और केरल का परिवेश इस प्रस्ताव को आत्मसात करने में किस हद तक उर्वर रहा था । इसके साथ अस्तित्ववादी दर्शन के संघटक तत्वों का भी संक्षिप्त परिचय लाजिमी है, ताकि उनके आधार पर निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनाओं का विश्लेषण किया जाय ।

पश्चिम की परिस्थिति

फ्रांसीसी राजक्रान्ति, दोनों विश्वयुद्ध और विज्ञान के बढ़ते हुए प्रभाव के कारण यूरोप में अस्तित्ववादी विचारधारा का उदय हुआ था । अस्तित्ववादी दर्शन में व्यक्ति के अस्तित्व को समाज के अस्तित्व की तुलना में ज़्यादातर महत्व दिया गया है । इस व्यक्तिवादी हैसियत की अवधारणा इसके पहले भी समाज में घनीभूत हुई थी । फ्रांस की राजक्रान्ति के पूर्व दो और क्रान्तियाँ घटित हो हुई थीं - अमरीकी की स्वतन्त्रता संग्राम और औद्योगिक क्रान्ति । क्रम के अनुसार सर्वप्रथम अमरीका का स्वतन्त्रता संग्राम घटित हुआ, जिसने ब्रिटीश राजतन्त्र को छिन्न भिन्न कर दिया और ब्रिटेन के अधिकार को निश्शेष बना दिया । अन्त में फ्रांसीसी राजक्रान्ति ने राजनीतिक, सामाजिक और धार्मिक क्षेत्रों में महत्वपूर्ण और समयोजित परिवर्तन किये । यद्यपि व्यक्ति-स्वातंत्र्य की प्राप्ति में इन तीनों क्रान्तियों का समान योग है, किन्तु फ्रान्सीसी राजक्रान्ति ही वह महत्वपूर्ण कडी है, जिसने सभी धार्मिक अन्धविश्वासों, रूढियों, बन्धनों

और अत्याचारों के विरुद्ध नारा लगाकर मनुष्य को स्वतन्त्र और समान घोषित किया ।"§1§ यों नवजागरण के उस युग में पश्चिमी यूरोप मध्ययुगीन बन्धनों से मुक्त हो गया और चर्च का महत्व घट गया । साथ ही साथ व्यक्तिचेतना का विकास हुआ, समाज में प्रचलित आडम्बरों, अलौकिकता के प्रति मोह आदि के विरुद्ध विद्रोह प्रकट हुआ ।

अस्तित्ववाद के उदय, प्रचार और प्रसार का दूसरा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण कारण दो विश्वयुद्धों की विभीषिका से उत्पन्न आर्थिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक एवं सामाजिक विद्रूपता, वैषम्य, अस्थिरता एवं निराशा की भावना है ।"§2§ सन् 1914 और सन् 1936 के बीच की चौथाई शताब्दी में धरती को हिला देनेवाली अनेक घटनाएँ हुई - विश्वयुद्ध, कई देशों में घटित हिंसात्मक राजनीतिक क्रान्तियाँ और उसके फलस्वरूप बनी गंभीर आर्थिक मन्दी ।§3§ युद्ध के दिनों में मनुष्य ने क्षण भर में अपनी संपत्ति नष्ट होते देखी, नित्य प्रति अपने मित्रों, परिजनों और बन्धुओं को मरते देखा । बमों की गडगडाहट, आकाश से होनेवाली अग्निवृष्टि, लोगों का हवाई हमलों के बीच रक्षा प्राप्ति केलिए भाग दौड, हर प्रकार की आवश्यक वस्तुंओं का अभाव और इसीप्रकार के कई यन्त्रणाओं को सहना पडा । युद्ध से किसी भी समस्या का स्थाई रूप से हल नहीं हुआ था इसके साथ युद्ध ने भविष्य केलिए आपत्ति का बीज भी बो दिया । "युद्ध के बाद इतनी बडी आर्थिक गडबडी हुई कि दुनिया के दूरतम कोनों में रहनेवाले लोगों को भी युद्ध का गहरा अनुभव हुआ । इसके साथ ही हर देश में बेरोज़गारों की संख्या बढ़ चली थी । गरीबी के शिकार करोडों असहाय लोग ऐसे नेताओं को ढूँढने लगे थे, जो किन्हीं उपायों से उन्हें रोज़ी दे सके, ताकि वे अपनी आजीविका उपार्जित कर सकें ।"§4

---

§1§ Gustave de Bon, The Psychology of Revolution, P: 159
§2§ J von Rintelen, Beyond Existentialism (Introduction) P:9
§3§ एलिस मैजेनिस, जौन कौनरेड ऐपल, संसार का इतिहास, पृ: 9
§4§ एलिस मैजेनिस, जौन कौनरेड ऐपल, संसार का इतिहास, पृ: 482

इन विभीषिकाओं के परिणाम स्वरूप मानव को भलाई और नेक पर आस्था ही नहीं रह गयी । सब कहीं निराशा, वेदना और करुणा का वातावरण छा गया । अतीत और भविष्य को लेकर मानव-जीवन में स्वर्णिम कल्पनाएँ होती रहीं, युद्ध की भयंकर परिणामों ने उनकी निस्सारता को प्रकट कर दी । "युद्धों के पश्चात् व्यक्ति के पास केवल उसका अपना अस्तित्व रह गया । मनुष्य का अपना अस्तित्व ही असंदिग्ध रह गया । वह अस्तित्व को आधार बनाकर जीवन की समस्याएँ सुलझाने में व्यस्त हो गया । फलस्वरूप लोगों की प्रवृत्ति आत्मपरक चिन्तन की ओर अधिक झुकने लगीं । उनके सामने उस समय उन्हीं की मार्मिक वेदनाएँ साकार रूप में विद्यमान थी ।"§।§

विज्ञानवाद ने यान्त्रिक सभ्यता का प्रचार किया । यन्त्र ने मनुष्य के मनुष्यत्व तक को नष्ट कर दिया । इसी वैज्ञानिकता ने उन सर्व संहारी आणविक अस्त्रों को जन्म दिया, जो मनुष्यों को कीडे मरोडों की भाँति मार डालते है । इसप्रकार मनुष्य की मृत्यु भी नैसर्गिक नहीं रही । यों विश्वयुद्ध तथा विज्ञान के निरन्तर विकास से उत्पन्न निराशा, वेदना, शोक, विद्रूपता और विभीषिका के फलस्वरूप व्यक्ति के अस्तित्व और संकट पर चिंतित अस्तित्ववादी दर्शन का प्रादुर्भाव हुआ ।

भारतीय परिस्थिति

यूरोपीय जिस स्थिति से गुज़र रहे थे, लगभग वैसी ही स्थिति से भारतीय भी आक्रान्त थे । भारत में स्वतंत्रता संग्राम चल रहा था ।

---

§।§ डॉ. लालचन्द गुप्त मंगल - अस्तित्ववाद और नयी कहानी - पृ: 32

ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने, काँग्रेसी मन्त्रिमंडल से सलाह मशविरा किए बिना ही भारतवर्ष को भी युद्ध में सम्मिलित कर दिया, जिससे भारतीय नेता विक्षुब्ध तथा बेचैन हो उठे ।[1] विश्वयुद्ध की समाप्ति पर जब भारत वर्ष को स्वतन्त्रता न मिली तो 8 आगस्त 1942 को महात्मागांधी के नेतृत्व में बंबई काँग्रेज़ अधिनिवेशन ने "भारत छोडो" के नारे का तहे दिल से स्वीकार किया । यह नारा सारे देश में गूँज उठा । देश भर में भयंकर संघर्ष छिड़ गया । ब्रिटिश सरकार ने दमन-चक्र को और तेज़ कर दिया । नेताओं को जेल में ठूस दिया । फलतः जनता संगठन और नेतृत्व से वंचित हो गईं । निस्सहाय जनता को गोलियों से भून दिया गया । इसी दौरान देश को कई दुर्भिक्षों का भी सामना करना पडा था । "सन् 1944 के बंगाल का अकाल समाजद्रोही व्यापारियों की लोलुपता एवं ब्रिटीश साम्राज्यवादियों की उदासीनता का परिणाम था ।"[2] भारतीय जनमानस पर इसका गंभीर प्रभाव पड़ा और जनता निराशा, कुंठाग्रस्त एवं असहाय बन गयीं, सर्वत्र निराशा की लहर लहराने लगी ।

पाकिस्तान और अन्तरिम सरकार के निर्माण के प्रश्न पर इस समय काँग्रेज़ी और मुस्लीम लीगी नेताओं में मतभेद उत्पन्न हो चुके थे । फलस्वरूप कलकत्ता में भीषण हत्याकांड छिड़ गया । संगठित मुसलमानों ने हिन्दुओं पर हमला बोल दिया । हज़ारों व्यक्ति मारे गये, हज़ारों बे-घर बार हो गए, करोडों रुपये की संपत्ति नष्ट हुई । अन्त में भारत-पाक विभाजन की घोषणा हुई । हालात और बदत्तर हो गए । लाखों लोगों की नृशंस हत्या हुई । अनगिनतों को अपने घर बार छोडने पडे ।

---

[1] जवाहरलाल नेहरू - हिन्दुस्तान की कहानी - पृ: 582

[2] डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी कहानी उद्भव और विकास - पृ: 420

आगजनी की घटनाएँ सौगुनी हो गयीं, लूटमार, भूखमरी और बेकारी ने तो लोगों को खोखला हताश और जर्जर बना दिया । जो दुर्निवार स्थिति प्रथम एवं द्वितीय महायुद्ध के बाद यूरोप में उत्पन्न हुई थी, लगभग वैसी हालत से भारतीयों को गुज़रना पड़ा था ।"§1§

स्वतन्त्रता के पश्चात् भारतवर्ष ने उन्नति तो की, लेकिन कतिपय लोग ही इसके हकदार बने । आम जनता के सामने धीरे धीरे स्वतन्त्रता की यथार्थता सामने आयी । देश, स्वार्थी, रिश्वतखोर, धनलोलुप तथा दुराचारी लोगों का अड्डा बन गया और ईमानदार, उत्साही प्रतिभावान आदमी को किनारा कर दिया गया । बेरोज़गारी, गरीबी और सामाजिक वैषम्य दिन-प्रतिदिन बढ़ते गये, फिर भी नेताओं के द्वारा भाषणों, लम्बे-लम्बे दावों, कागज़ी आँकडों से सांत्वना देने की चेष्टा होती रही । फलस्वरूप "नई पीढी में कुंठा, वर्जना, घुटन, पीडा, निराशा तथा एक विचित्र सी आशंका का जन्म होना स्वाभाविक ही नहीं, विषम परिस्थितियों की अनिवार्यता भी थी ।"§2§ सीमित मात्रा में ही सही, भारत में भी वैज्ञानिक आविष्कारों ने व्यक्ति मानव को भी यन्त्र का पुर्जा बना दिया था । इसका सीधा प्रभाव मानव संबन्धों पर भी पडा । अपने हिताहित को सोचता समझता व्यक्ति आत्मकेन्द्रित हो गया । परिणाम स्वरूप पारिवारिक, सामुदायिक और राष्ट्रीय ढाँचे चरमराकर टूट गये, बिखर गये और यह टूटना और बिखरना निरन्तर ज़ारी भी है । व्यक्ति संबन्धों का विघटन बडे पैमाने पर होने के कारण आज आदमी के सामने सबसे बडी समस्या यह है कि न तो वह किसी का बन सका है और न किसी को अपना बना सका है ।§3§

---

§1§ डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी कहानी उद्भव और विकास - पृ: 549
§2§ डॉ. लक्ष्मी नारायण वाष्णेय - आधुनिक कहानी का परिपार्श्व - पृ: 204
§3§ नित्यानंद तिवारी - हिन्दी कहानी की दिशा - पृ: 68

केरलीय परिवेश

भारत-भर में व्याप्त स्वतंत्रता-संग्राम का असर केरल में भी पडा था । जैसे पहले अध्याय में बताया जा चुका है, केरल के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिवेश बहुत ही खराब था । केरल की जाति व्यवस्था, ज़मीन्दार प्रथा, देशीय स्वतंत्रता संग्राम, पल्लवित होती व्यावसायिक सभ्यता ने व्यक्ति-बोध को जगाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी, सन् 1967 तक आते-आते केरल में व्यापक रूप से अणुपरिवारों का उदय भी हुआ । समाजिक सोच व्यक्तिन्मुख हो गयी, समाज और व्यक्ति के बीच का रिस्ता अटूट नहीं रह गया । इस नये परिवेश ने साहित्य के क्षेत्र में भी एक नये भावबोध को जन्म दिया ।

मलयालम के मशहूर आलोचक के. एम. तरकन ने बताया है कि - "आधुनिक भारतीय परिस्थितियों में अपने स्वत्व को खोजनेवाले अन्तर्मुखी रचनाकारों को पाश्चात्य अस्तित्ववादी दर्शन ने अपनी ओर आकृष्ट किया था । वे अपने अनुभवों को प्रस्तुत करना चाहते थे । उन्हें निदर्शन के तौर पर काफ्का, कामू और सार्त्र की रचनाएँ उपलब्ध हो गयीं । अस्तित्ववादी दर्शन की प्रपत्तियों से लैस रचनाएँ सन् 1960 के बाद मलयालम साहित्य में प्रकट होने लगी थी ।"(1) डॉ. राघवन पिल्लै ने भी सूचित किया है कि - औपचारिक जीवन की आदत्तों से अलग रहकर, एक आन्तरिक हलचल, व्यर्थ व अलक्षित कर्म को ढोनेवाले एकांकी पात्रों की सृष्टि तक ही मलयालम साहित्य इस दिशा में आगे बढा है ।"(2) ओ. वी. विजयन के - "खसाक का इतिहास"(1969), काक्कनाडन की "उष्णमेखला"(1969), एम. टी. के "कालम" (1969), आनन्द की "भीड" आदि उपन्यास लगभग समकालिक रहे हैं ।

अकेलापन

अस्तित्ववादी दर्शन ने व्यक्ति और समाज के आपसी रिश्ते के विघटन से और समाज के बीच के अलगाव स्थापित विसंगति को गहराई से रेखांकित किया है । कामू ने इसका सर्वांगीण विश्लेषण किया था । उनके अनुसार यह विसंगति मानव मन के भीतर ही है । वह अगोचर वैयक्तिक तथा अनुभूत्यात्मक है । लेकिन संप्रेषणीय नहीं है । यांत्रिक जीवन के हर क्षण या हर मोड पर इसकी अनुभूति हो सकती है । किसी गली के कोने में खडे होते हुए किसी "कापी हाऊस" के रिवोलिंग डोर से घुसते हुए या कभी भी इसका एहसास हो सकता है । यांत्रिक जीवन व्यक्ति को इस समस्या का अहसास करा देता है कि उसका अपना कुछ मूल्य नहीं है । उसके अस्तित्व की उपादेयता के आगे प्रश्न चिह्न लगाया गया है । और वह यह भी महसूसता है कि वह अकेला, असहाय है, इस एकांत दुनिया में छोड दिया गया है । अपना परिवेश भी उसे अपरिचित लगता है । यों वस्तुगत दुनिया से अलगाव उसमें एक प्रकार की "नौसिया" उत्पन्न कराता है, जिसकी वजह से परिचित प्राकृतिक वस्तुएँ पत्थर और पेड भी अपरिचित लगती है ।"[1] हेडगर की यह मान्यता है कि जब मनुष्य यह महसूस करने लगता है कि संसार नश्वर, क्षणिक और मूल्यहीन है, सारी वस्तुएँ उससे दूर खिसकती जा रही हैं, संसार की किसी भी वस्तु पर उसका कोई हक नहीं है, वह नगव्य है, तो शून्यता एक डरावनी साँप सी उसे घेरने लगती है । और जब मनुष्य स्वयं संसार से उदासीन एवं अनासक्त रहने लगता है, तब उसका मन वस्तुओं से दूर भागने का श्रम करता है और शून्यता की अनुभूति से अभिभूत होता है ।[2] यों अकेलापन उसे गहराई से घेरने लगता है ।

---

[1] Albert Camus - Myth of Sisyphus - P: 19

[2] Martin Heidegger - P: 231

निर्मल वर्मा ने व्यक्तिमन के अन्तर्विरोधों के सही परिप्रेक्ष्य में उसकी समस्याओं का आकलन किया है । विसंगतिबोध से उद्भूत अकेलेपन एवं अजनबीपन को प्रस्तुत करने में वे सफल हुए हैं । "वे दिन" आदमी के अकेलेपन और उसे बॉटने की असफल प्रयासों पर लिखा गया संवेदनशील उपन्यास है । रायना, इन्दी, फ्रांस, मारिया सब एक दूसरे के पास होते हुए भी बिल्कुल अकेले है । उपन्यास के प्रायः सभी पात्रों के अवचेतन मन पर इस अकेलापन का बोझ पडा हुआ है । और वे टूटकर बिखराव की स्थिति तक पहुँच गयी है । वे जानते है कि एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति केलिए अँधेरा है और हर व्यक्ति अपने अपने अँधेरे में ही ठिठुरने केलिए अभिशप्त है । इन्टरप्रेटर कहता है - "उस रात पहली बार मुझे लगा कि एक व्यक्ति दूसरे केलिए अन्धेरा है - जैसे वह मेरे लिए थी, मैं उसकेलिए । तीन दिन तीन वर्ष समय कुछ भी मानी नहीं रखता । अगर हम एक सुलगते क्षण में अन्धेरे के बीच उस "ताप" को पकड सके यह जानते हुए भी कि वह जीवित नहीं रहेगा, और यह जानते हुए भी कि उसके बुझने के बाद हम फिर दुबारा अपने अपने अन्धेरे में ठिंठुरने लगेगे ।"§1§

रायना अतीत से कटकर, भविष्य से निर्मुक्त होकर वर्तमान में, वह भी वर्तमान के क्षण में जीने केलिए अभिशप्त है । वह दो दिन की आत्मीयता से भावुक होकर, अपने को पूर्णतः अपने इन्टरप्रेटर को समर्पित कर देती है । रायना बताती है वह लगातार शहर और मित्र बदलती रहती है । वह कहती है - मैं ज़्यादा दिन अकेली नहीं रह सकती । हम एक दूसरे के बारे में कितना कम जानते हैं । तुम्हें यह बुरा लगता है - कम जानना। नहीं मुझे यह कम भी ज़्यादा लगता है । हम उतना ही जानते हैं, जितना ठीक है ।"§2§ अपनी इन बातों को इन्टरप्रेटर को

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृः 20।
§2§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृः 203

सुनाने के बाद ये दोनों एक दूसरे केलिए अकेले हो जाते है - "हम दोनों अन्धेरे में सहसा अकेले हो गये थे अकेलापन जो दुःख, पीडा, आँसुओं से बाहर है - जो महज जीने के नंगे बतैले आतंक से जुडा है जिसे कोई दूसरा व्यक्ति निचोडकर बहा नहीं सकता ।"§।§
यों "वे दिन" के पात्र अकेलेपन से जूझते हुए एक दूसरे के शरीर के सहारे उससे मुक्त होने केलिए प्रयत्न करते हैं । प्रायः सभी पात्रों का अतीत युद्ध से जुडा हुआ है और उनके वर्तमान पर भी उसका भय और आतंक छाये हुए हैं ।

"लाल टीन की छत" की काया किशोरी है । उसे गर्मियों की छुट्टी है । सिमला के अपने घर में वह नितांत अकेली है । घर में माँ, छोटा भाई, और नौकर मँगतू है । लेकिन अपने खयालों और विचारों के बाँट सकने योग्य कोई हमउम्र नहीं है । इसी बीच बुआ उसे चाचा के घर ले जाती है । वहाँ चाचा का बेटा बीरन है । वह भी बिल्कुल अकेला है और मोजे बुनकर समय व्यतीत करता है । काया के मन में बीरन के प्रति एक खास किस्म का लगाव उत्पन्न होता है । लेकिन इस संबन्ध में भी कोई उचित विकास नहीं हो जाता है । काया उन दोनों के बीच एक अदृश्य देहरी महसूस करती है । यों काया जब कहीं जाती है, एक नितांत निर्वैयक्तिक परिस्थितियों से घिर जाती है ।

"परिन्दे" में नायिका लतिका के माध्यम से अकेलेपन की पर्तें खुल जाती हैं । अतीत की स्मृतियों से लैस वह होस्टल की मायूस माहौल में रहती है । अपने मृत-प्रेमी गिरीश नेगी की याद के साये में

---

§।§ निर्मल वर्मा - "वे दिन" - पृः 20।

वह वक्त गुज़ार रही है । वह जानती है कि अतीत कभी वापस नहीं आ सकता फिर भी वह उससे चिपकी हुई रहती है । पूरी कहानी में मानव की अनिश्चित नियति के संकेत के साथ अजनबीपन और एकाकीपन की अनुभूति को भी गहराया गया है । जैसे इन्द्रनाथ मदान ने सूचित किया है - रीतेपन की अनुभूति आदि से अंत तक कहानी में मंडराती रहती है ।" हर व्यक्ति अकेलेपन को स्वयं ही झेलने केलिए अभिशप्त है । दूसरे व्यक्ति उसे किसी भी तरह मदद नहीं कर सकता ।

"लंदन की एक रात" की विली और जार्ज की स्थिति यही है । रंगभेद के कारण अंग्रेज़ और नीग्रों के बीच उत्पन्न संघर्ष ही इसकी थीम है । नीग्रो विली के, एक गोरी लडकी के साथ नाचने से संघर्ष छिड जाता है और बुरी तरह मार-पीट होती है । उसका दोस्त जोर्ज बुरी तरह रोता है, पर विली कुछ नहीं कर सकता । जैसे कहानी में ही बताया गया है - शायद इससे भयंकर और कोई चीज़ नहीं, जब दो व्यक्ति एक संग होते हुए भी यह अनुभव कर लें कि उनमें से कोई एक दूसरे को बचा नहीं सकता, जब यह अनुभव कर लें कि बीती घडियों की एक भी स्मृति, एक भी क्षण, उनके मौजूदा, गुज़रते हुए क्षण के निकट अकेलेपन के साथ नहीं बाँटा सकता, साथी नहीं हो सकता ।"§।§

पारिवारिक संबन्धों में बरकरार तनाव और उसकी वजह उत्पन्न हुई उदासी के कारण व्यक्ति जिस अकेलापन और शून्यताबोध से गुज़रने केलिए मज़बूर हो जाता है, उसकी हू-ब-हू अभिव्यक्ति "मायादर्पण" में

---

§।§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ:42

हुई है और उसकी शिकार है - तरन । आज संबन्धों में कोई हार्दिकता नहीं है । तरन की माँ मर चुकी है और भाई घर से भाग गया है । पिता के विचारों के साथ अपने विचारों का तालमेल न होने के कारण वह एक प्रकार का अकेलापन महसूस करती है । उसे लगता है वह "बरामदे की आवाज़ नहीं सुनती, सुनती है, उस निर्भेद्य मौन को, जो सारे घर में छाया है, जिसके भीतर ये आवाज़ें परायी, अपरिचित, भयावह सी जान पडती हैं ।"[1] तरन घर और बाबा से छुटकारा पाना चाहती है । पर आखिर वह महसूस करता है कि यह असंभव है - "वह अकेली रहेगी, किन्तु बाबा की छाया से बंधी हुई और बाबा का अकेलापन हमेशा, ज़िन्दगी भर उससे जुडकर रहेगा ।"[2]

"अँधेरे में" कहानी में दांपत्य प्रेम में पडे दरार की वजह अकेलापन है । इस कहानी की बच्ची बीमार है । माँ और बाप एक ही घर में रहते है लेकिन अलग अलग कमरे में सोते है । साये के समान बच्ची के साथ है फिर भी माँ को बच्ची की बीमारी की कोई विशेष चिन्ता नहीं है । वह हमेशा उसके अपने खयालों में खोयी रहती है । बच्ची सोचती है - "उनकी अँगुलियों के अनिश्चित अर्थ सोये स्पर्श से मुझे पता चल जाता है कि वह स्वयं मुझसे कोसों दूर खो गई है ।"[3] माँ उसे चाकलेट देती है तो उसे लगता है कि वह उसे रिझाने केलिए नहीं, उससे छुटकारा पाने केलिए देती है ।

---

[1] निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 66
[2] निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 69
[3] निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 69

इसलिए वह उसे खाना नहीं चाहती है । "डेढ़ इंच ऊपर" के कथावाचक घर में अकेला है । पत्नी को गोस्टापो पुलिस ने पकड लिया था और बाद में मार दिया था । उसके पास कुछ गैर कानूनी पर्चियाँ और पैम्फ्लेट थीं । बाद में उन सबको जब्त कर लिया गया था । लेकिन वह स्वयं भी पत्नी की उन बातों से नावाकिफ था । वह कहता है - "मैं कल्पना भी नहीं कर सकता था कि रोजमर्रा दैनिक ज़िन्दगी के साथ-साथ वह एक दूसरी ज़िन्दगी जी रही थी मुझसे अलग, मुझसे बाहर, मुझसे अछूती एक ऐसी ज़िन्दगी जिसका मुझसे कोई वास्ता नहीं था ।"§1§ उसकेअनुसार प्रेम करने का अर्थ अपने को खोलना नहीं, बहुत कुछ छिपाना है । उसके अनुसार औरतों और बिल्लियों को आखिर तक नहीं पहचाना जा सकता ।"§2§

"सुबह की सैर" के कर्नल साहब एक अवकाश प्राप्त फौजी है । उनकी पत्नी की मृत्यु हो चुकी है और इकलौता लड़का विदेश में है । रोज़ सुबह वह सैर करने जाता है और कट्टो नामक स्त्री से नियमित रूप से उसकी मुलाकात भी होती है । तब उसे अपनी स्वर्गीय पत्नी की याद आती है । यों वह अपने अस्तित्व तक का एहसास कट्टो के सान्निध्य से करता है । जब वह भी नष्ट हो जाता है, तो वह अकेलेपन से छुटकारा पाने केलिए आत्महत्या कर लेता है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - पिछली गर्मियों में - पृ: 43

§2§ निर्मल वर्मा - पिछली गर्मियों में - पृ: 43

"अन्तर" कहानी की नायिका को गर्भपात के बाद अस्पताल में दाखिल किया गया है । वह गर्भपात करना नहीं चाहती । लेकिन प्रेमी की मर्ज़ी से वह गर्भपात करती है । इस कारण इन दोनों के बीच अलगाव पैदा होता है । प्रेमी ढेर सारे उपहारों के साथ उसे मिलने आता है । लेकिन प्रेमिका को उन चीज़ों पर कोई दिलचस्पी नहीं है । प्रेमी के चले जाने पर, उपहार को खिडकी से बाहर फेंक देती है । यों यह कहानी प्रेम संबन्धों में आए अलगाव और दरार को व्यक्त करती है । "लवर्स" में भी प्रेमी और प्रेमिका के बीच का अलगाव है । प्रेमिका, प्रेमी से विवाह करना नहीं चाहती । प्रेमी के विवाह आमन्त्रण को ठुकरा कर वह इतना मात्र कहती है - "निन्दी, कोन्ट वी बी फ्रन्ड्स, कॉट वी ।"§।§ "एक दिन का मेहमान" भी टूटे दांपत्य की कहानी है । पति-पत्नी के बीच के रिश्ते में अनजाने ही ठंडापन आ गया है, और अगर वे चाहे तो उसे दूर कर सकता है, पर दोनों इससे कोई फायदा महसूस नहीं करते है । यों निर्मल वर्मा ने अपनी कहानियों में संबन्धों में आये ढीलेपन और तत्संबन्धी असुरक्षा, छटपटाहट आदि का सफल चित्रण किया है ।

एम. टी. की रचनाओं में अकेलेपन का चित्रण

एम. टी. वासुदेवन नायर के बहुचर्चित एवं विख्यात लघु उपन्यास "तुषार" निर्मल वर्मा के परिन्दे से तुलनीय है । दोनों की भावभूमि समान है । इसकी नायिका विमला अध्यापिका है ।

---

§।§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 70

केरल का अपना गाँव छोडकर उसका परिवार नौकरी के वास्ते उत्तर भारत आए हुए हैं । पिताजी सेज पकडे हैं । इसलिए माँ अपने प्रेमी गोमस के साथ विचरण करती है । विमला का कोई साथी नहीं । वह अपने आपको बेहद अकेली समझती है । पिता की मृत्यु के बाद विमला का अकेलापन और तीव्र हो जाता है । यों अपने ही घर में वह अपने को परायी महसूस करती है ।

घर के ऐसे माहौल के कारण ही वह स्कूल की छुट्टियों में भी घर नहीं जाती । वर्षों पहले बिछुडे अपने प्रेमी सुंधीर कुमार मिश्रा की प्रतीक्षा में वह दिन-रात काटती है । यों प्रतीक्षारत रहते एक और पात्र है बुधु । बिल्ली जैसी आँखों वाला यह लड़का कुमऊँ के झील का नाविक है । उसके मन की यही आशा है कि एक न एक दिन उसका गोरा पिता आ जायेगा । पिताजी ने माँ को ऐसी आशा दिलाकर चला गया था ।

"कालम" उपन्यास के "सेतु" का व्यक्तित्व निराला है । ज़िन्दगी में उसे भौतिक सुख-सुविधाओं से लैस होने पर भी हासिल नहीं होती है । बचपन से ही वह अकेला रहना चाहता है । बडे होने पर सुमित्रा, तंकमणी आदि कई नारियों से वह प्रेम करता है । लेकिन ये सब उनके भोग के माध्यम मात्र हैं । वह धीरे-धीरे पारिवारिक स्नेहिल संबन्धों से दूर होताजाता है । बाद में वह अपने बोस की पत्नी को प्रेमिका बनाने में सक्षम होता है और उससे शादी भी करता है । कभी कभी एक प्रकार का अतृप्त और गमगीन भाव उसको ग्रसता जाता है ।

सबसे अलग होकर एकाकी बनने की लालसा बार बार प्रबल होती है, जैसे कि उपन्यास में अभिव्यक्त है - "लोगों की आँखों से बचकर बैठने की जगह न मिलने पर वह निस्सहायता व घुटन के साथ पूर्वी लॉन में जाकर बैठा ।"§1§

समय बीतते बीतते उस पर अतीत हमला करने लगता है और वह माँ की यादों के तले जीना चाहता है । वह अपने गाँव लौट चलता है । लेकिन तब तक गाँव और परिस्थितियाँ बदल गयी थीं । सेतु जब अतीत को वर्तमान से बाँधना चाहता है, तब सुमित्रा जो तब तक तपस्विनी बन चुकी थी - सेतु को इस सत्य से साक्षात्कार कराती हुई कहती है - "सेतु को सिर्फ एक व्यक्ति से प्यार था, सेतु से ।"§2§ सेतु का तो यही विचार है - "काश कितना अच्छा होता कि फिर एक बार जीने का मौका मिलता.। एक बार फिर ।"§3§ यों यह स्पष्ट जाहिर है कि सेतु की समूची ज़िन्दगी अकेलेपन की छाया में बीती है ।

'असुरबीज' का गोविन्दन कुट्टी निजी घर में ही बहिष्कृत सा था । बचपन से उसे उपेक्षा एवं घृणा की नज़रों का सामना करना पडता है । क्योंकि उसका जन्म अनजाने ही हुआ था । माँ की इक्यावन बरस में "अशकुन" के समान उसकी पैदाइश हुई थी । इन सबकी वजह उसमें एक प्रकार का हीन भाव उत्पन्न होता है । परिवार और समाज से वह

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् पृ: 189
§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ: 498
§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ: 498

अलग हो जाता है । अपने बहनोई शेखरन नायर के हिकमत के कारण उसे गाभिन मीनाक्षी से ब्याह-करना पडता है । यहीं से उसके जीवन की गति बदल जाती है । वह विद्रोही बनता है । खुले तौर पर विद्रोह प्रकट करने पर शेखरन नायर के गुण्डों से उसकी बुरी तरह पिटाई होती है ।

गोविन्दन कुट्टी का परिवार प्रतिष्ठित एवं संपन्न रहा था । लेकिन ऐसी पारिवारिक पृष्ठभूमि के बावजूद समाज उसके माथे पर कलंक मढ़ देते है । उससे उभरने की सायास कोशिश वह करता है । लेकिन विडंबना की बात है कि वह अपने से भी बिछुड जाता है । वह मानवता की उर्वरता से विद्वेष की ऊसरता की तरफ मुडने केलिए मज़बूर हो जाता है । अपना धर्म बदलकर इस्लां बनता है और अब्दुल्ला नाम स्वीकार करता है । इस कारण वह सबके घृणापात्र बन जाता है । गाँव में होती छोटी-मोटी चोरियों का दायित्व तक उसके सिर पर थोप दिया जाता है । इसप्रकार वह सब कहीं से तिरस्कृत और उपेक्षित हो जाता है । सचमुच गोविन्दनकुट्टी की पूरी ज़िन्दगी एक हद तक अकेलापन और वीरानगी का समुच्चय रहा था ।

भीड भरे राजमहल में भी अकेलेपन से दम घुटकर विसंगति पूर्ण ज़िन्दगी जीने केलिए अभिशप्त भीम की कहानी है - "दूसरी बारी" । एम. टी. ने भीमसेन को अपनी एक अलग दुनिया प्रदान की है और भीमसेन की नज़रिए से महाभारत कथा का पुनः आख्यान किया है । यह सांच है कि अन्य पाण्डवों की हमेशा प्रशंसा ही हुई, लेकिन किसी ने भी भीम की प्रशंसा नहीं की । वह किनारे खडे होने केलिए मज़बूर हो गया।

बचपन से ही उसे अपने भारी भरकम रूप की वजह तिरस्कार और उपहास ही हासिल हुए । इनकी वजह उसके अकेलेपन को और बढा गया । दुश्शासन बार बार उसके जन्म संबन्धी माँ की गढित कहानी पर उसे टोकता है - "वह ऐसे ही जंगल से आया । जंजीर तोडकर चण्डमारुत के समान । एक बेनाम निषाद ।। तुम लोगों की माँ को कोई वफादार कहानी रचकर कहने की सूझ-बूझ क्यों नहीं हुई ?"§।§ "सियार का ब्याह" नामक कहानी का केलन भी भीम से समता रखता है । केलन अवैध बच्चा है । उसे बाप का पता नहीं है । जब गाँववाले उसे खिल्ली उठाते हैं, तब वह अपनी सारी शक्ति खो देता है; निस्सहाय हो उठता है । दूसरों द्वारा लगातार पीडित होनेवाली "कुट्टीदीदी" भी ऐसे ही एक अन्य पात्र है । कुट्टीदीदी काली है, यानी उसकी बहन के अनुसार उसे उंगली से छूकर आँखों में अंजन लगाया जा सकता है । जब वह हँसती नहीं है, तब भी सामने के दाँतों का निचला हिस्सा बाहर दीख पडता है । वह हमेशा काली छींट का ब्लाऊस पहनती है, जो मैला सा रहता है । यानी कुट्टीदीदी बदसूरत थीं । इसी कारण उसका विवाह टाल जाता था । अपनी कुरूपता का बोध कुट्टीदीदी में स्वयं जगता था और अक्सर दूसरों द्वारा जगाया भी जाता था । अपनी इस स्थिति से बचने केलिए वह निम्न कुल के एक मज़दूर से इश्क करने लगती है । उसकी कुल महिमा और बिरादरी केलिए यह असहनीय है । पीडा और अकेलापन की यंत्रणा की पराकाष्ठा पर कुट्टीदीदी स्वयं फाँसी पर चढ जाती है ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - दूसरी बारी - पृ: 72

संक्षेप में निर्मल वर्मा और एम. टी. की कृतियों के बारीकी विवेचन से यही पता चलता है कि दोनों ने अकेलेपन को एक केन्द्रीय समस्या के रूप में स्वीकार किया है । निर्मल वर्मा के "वे दिन", "लाल टीन की छत" एवं 'अंतिम अरण्य' मानव के अकेलेपन को मानवीय नियति घोषित करनेवाले उपन्यास हैं । "एक चिथडा सुख", "रात का रिपोर्टर" आदि उपन्यासों में भी यह भाव आया है । "परिंदे","धागे", डेढ़ इंच ऊपर", "एक और शुरुआत", आदि कहानियों का नीवाधार भी यही भाव है । निर्मल वर्मा ने अपने जीवन का ज़्यादातर वक्त विदेशों में गुज़ारा था । इसलिए उन्होंने अकेलापन व अजनबीपन को गहराई से अनुभूत किया है और उतना ही प्रभावशाली रूप से उसकी अभिव्यक्ति भी की है । एम. टी. के सृजनकाल में केरल की सामाजिक व्यवस्था सामंतवादी थी । पारिवारिक व्यवस्था का अधिष्ठान संयुक्त परिवार का ताना-बाना रहा था । समाज में और परिवार में व्यक्ति के स्वकीय अधिकारों को कोई महत्व नहीं था । इसी परिप्रेक्ष्य में एम. टी. ने अपनी रचनाएँ की हैं । उन्होंने संयुक्त परिवार के रूढ़िगत एवं संकुचित विचारों, एवं उसकी अधिनायक वृत्ति के खिलाफ़ विद्रोह का स्वर बुलन्द किया है । और साथ ही खानदान के परिवेश से अंतर्मुखी एवं संत्रस्त बने पात्रों के अकेलेपन को भी रचनाओं में ज़ाहिर किया है ।

स्वतन्त्रता बोध

आधुनिक युग में वैज्ञानिक एवं औद्योगिक विकास की वजह से एक ऐसी त्रासद स्थिति आ गयी है कि स्वयं मानव द्वारा निर्मित उपादान उससे महत्वपूर्ण ही नहीं बल्कि उसका स्वामी भी हो गया है ।

उसके समक्ष प्रत्येक व्यक्ति उपकरण मात्र है । उसका अपना व्यक्तित्व कहीं खो गया है । आदमी की यह त्रासदी है कि वह जिस परिवेश से घिरा है, यद्यपि उसके लिए वह कसूरवार नहीं है, फिर भी से उसकी स्वतंत्रता पकडती जा रही है । अस्तित्ववादी दार्शनिकों एवं साहित्यकारों ने व्यक्ति की इस त्रासद स्थिति को गहनतम रूप में महसूस किया और उसे उस परिवेश से उबारना चाहा । उन्होंने व्यक्ति की स्वतंत्रता और सामाजिक हैसियत की बुलन्दी लगा दी । अस्तित्ववाद केअनुसार स्वतंत्रता मनुष्य अस्तित्व का बुनियादी संघटक है ।"(1) मार्शल ने कहा है कि मेरा अस्तित्व मेरी स्वतंत्रता है । अपनी मर्जी से रखने या अलग करने की स्वतंत्रता । ज़िन्दगी के हर मोड पर हाँ या न की स्वतंत्रता ।"(2) जास्पर्स के अनुसार, "मनुष्य के पास कोई निर्धारित बंधी-बंधाई तत्व या मूल प्रकृति नहीं है, फिर भी उसकी स्थितियाँ तथा सही वरण एवं स्वतंत्रता उसे असली अस्तित्व का बोध कराती हैं । अस्तित्व का वास्तविक अर्थ व्यक्ति की अपनी मौलिक स्वतंत्रता और उसके आधार पर अभीष्ट वरण की पूरी छूट है ।"(3) सार्त्र का विचार है कि मनुष्य अपनी सभी स्थितियों केलिए स्वयं उत्तरदायी है, इसलिए अस्तित्व का मुख्य अर्थ है - स्वतंत्रता ।"(4)

---

(1) Jean Paul Sartre - The Age of Reason - Introduction by Henri Peyre.

(2) The 1 is so, to speak, defined by its liberty, the possibility in the face of life to accept or to refuse it - Quoted in - Six Existentialist thinkers - H.J. Blackham - P: 71.

(3) Existance for me is the active choice of myself in liberty - 1 bid - P: 48.

(4) Satre - Existentialism and human emotions - P: 28

यह स्वतंत्रता कोई बाहरी वस्तु नहीं है । यह मानव की अंतरात्मा की देन है । मानव में यह अपने आप निसृत होती है । सार्त्र कहते हैं कि "स्वतंत्रता" मूल रूप में व्यक्ति मानस में निहित चेतना है, जो भविष्योन्मुख रहती है ।§1§ जास्पर्स की मान्यता है कि स्वतंत्र चेतना अंतरात्मा के वैयक्तिक स्तर पर जाग्रत होती है । वे लिखते हैं - "बिना निर्णय के वरण नहीं, बिना इच्छा केनिर्णय नहीं, बिना कर्म के इच्छा नहीं और बिना अस्तित्व के कर्म संभव नहीं ।"§2§ अत: स्वतंत्रता अस्तित्व की नियामक प्रवृत्ति है ।

निर्मल वर्मा व्यक्ति की इस अतिशय स्वतंत्रता के हिमायती है । "डेढ इंच ऊपर" नामक उनकी कहानी में खुल्लम खुल्ला बतायी गयी है - "हर आदमी को अपनी ज़िन्दगी और शराब चुनने की आज़ादी होनी चाहिए । दोनों केवल एक बार चुना जा सकता है । बाद में हम सिर्फ उसे दुहराते रहते हैं । जो एक बार पी चुके हैं या एक बार जी चुके हैं ।"§3§ निर्मल वर्मा के कथा साहित्य के ज़्यादातर पात्रों में यह विचार हावी है । "वे दिन" के तमाम पात्र रायना, इन्दी, फ्रांज, मारिया एवं टी. टी. अपना अपना जीवन खुद चुननेवाले हैं । नायिका रायना रैमान विवाहिता है । पर वह पति से अलग रह रही है । किशोर बेटा मीता भी उसके साथ है । रायना अपने अकेलापन की मायूसी से बचने केलिए घर छोडकर शहर-दर-शहर भटकती रहती है ।

---

§1§ Satre - Being and Nothingness - P: 618 - 619

§2§ H.J. Blackham - Six Existentialist thinkers - P: 50
No choice without decision, no decision without will, no will without duty, no duty without being

§3§ निर्मल वर्मा - पिछली गर्मियों में - पृ: 34

वह सहज ढंग से अपने शरीर को समर्पण करती है और फिर शराब और सिगरेट में डूबी रहती है । रायना अकेली ज़्यादा दिन नहीं रह सकती, उसके साथ ऐसा होता ही रहता है । उसे कभी गलतीकरने का पछतावा नहीं होता । शर्त सिर्फ यही रहती है कि साथ देनेवाले को बाद में पछतावा न हो । वह इन्टरप्रेटर से कहती है - मैं नहीं चाहती थी कि यह तुम्हारे साथ हो, तुम्हें पछतावा तो नहीं । मैं नहीं चाहती कि बाद में एक दूसरे को पछतावा हो ।"§1§ इन्दी के आश्चर्य पर कि "क्या तुम्हारे संग ऐसा अक्सर होता है दूसरे शहरों में ? तो वह बेझिझक कहती है - "हाँ होता है, मैं ज़्यादा दिन अकेले नहीं रह सकती ।"§2§

उपन्यास के अन्य पात्रों में फ्रांज और मारिया दोनों शादी के बगैर साथ जी रहे हैं । मारिया चेक की है और फ्रांज बर्लिन का । फ्रांज की माँ दूसरी शादी करके पश्चिमी बर्लिन में बस गई है । मारिया और फ्रांज साथ-साथ रहते हैं, लेकिन दोनों की अलग अलग हैसियत है । दोनों आपस में प्रेम तो करते है, लेकिन शादी करने तैयार नहीं है । अब फ्रांज अकेले बर्लिन जाने सोच रहा है । उपन्यास के अन्य पात्र इन्दी भारतीय है, जो प्राग के छात्रावास में रहता है, छुट्टियों के दिन टूरिस्ट गाईड का काम करता है, टी. टी. बरमन है और मेलन्कोविच, जिसकी पत्नी और बच्चे लेनिनग्रेड में हैं - सब अपना अपना जीवन चुनकर ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - "वे दिन" - पृ: 68

§2§ निर्मल वर्मा - "वे दिन" - पृ: 68

"एक चिथडा सुख" बोहेमियन जीवन बितानेवाले कलाकारों की कथा है । बिट्टी, निदेशक डैरी, इरा, नित्ती भाई और मुन्नू उपन्यास के प्रमुख पात्र है । मुन्नू को छोडकर बाकी सभी पात्र थियेटर के काम में व्यस्त रहते हैं । नाटकों के प्रति शौक की वजह ही बिट्टी इलाहाबाद से दिल्ली आयी है । वह बिल्कुल स्वतंत्र है । उसके रहने का अपना अलग ढंग है, उसके अपने अलग दोस्त हैं । वे लोग रात तक उसके यहाँ बैठकर पीते रहते है और दिन में थियेटर के कामों में तल्लीन रहते हैं । मुन्नू के इलाहाबाद से दिल्ली रवाना होते वक्त पिताजी उसे समझाता है - बिट्टी के रहने का अपना ढंग है, अपने दोस्त हैं । तुम वहाँ जैसे रहना, जैसे हो ही नहीं ।"§।§

"रात की रिपोर्टर" आपात्काल की कहानी है । विचार और अभिव्यक्ति के स्वातंत्रय से कुंठित ईमानदार रिपोर्टर रिशी की कथा इसमें चित्रित है । रिपोर्टर बनने के पहले वह कॉलेज में का अध्यापक था । वह सामाजिक और राजनीतिक यथार्थ का परिचय प्राप्त करना चाहता था । सामाजिक और राजनीतिक जीवन में फैली विसंगतियों को आम जनता के सम्मुख प्रस्तुत करके अनीतिऔर अत्याचार का पर्दाफाश करना चाहता था । वह महीनों तक बस्तर में रहकर एक रिपोर्ताज़ तैयार करता है । यह रिपोर्ताज़ उसे ख्याति दिलवाता है । लेकिन सत्याभिव्यक्ति के कारण सत्ता का गुनहगार बन जाता है । रिशी को सूचना मिलती है कि उसके बारे में खुफिया पुलीस ने पूछ-ताछ की, उसके कुछ लेख एवं जुलूस में

---

§।§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 76

भाग लेनेवाला एक फोटो उनके पास है । आशंका और भय से उसका मन भर जाता है । फिर भी वह अपनी स्वतंत्रता पर अटल रहता है । सत्ता जब व्यक्ति की अभिव्यक्ति की आज़ादी को चुनौती देता है, तब वह आज़ादी बुनियादी प्रश्न बन जाती है ।

निर्मल वर्मा की कहानियों के पात्र भी इसी कोटि में आते हैं । "तीसरा गवाह" की नीरजा कोर्ट हॉल में बिताये पलों के दौरान ही शादी करने का फैसला बदल लेती है । अकस्मात् रोहतगी और नीरजा के बीच इश्क हो गया था और दोनों ने कोर्ट मेरेज करना तय कर लिया । बडी मुश्किल से तीन गवाह मिले थे । लेकिन ऐन वक्त पर तीसरा गवाह नहीं आया । तब नीरजा अपना निर्णय बदल देती है, और वहाँ से चली जाती है । "वीकएण्ड" नामक कहानी की नायिका एक ऐसे पुरुष से प्यार करती है,जो विवाहित एवं एक पुत्री का पिता है । सप्ताहांत वे साथ गुज़ारते हैं । वह इस बात पर खुश है कि वह मुक्त है, वह कभी भी कहीं भी जा सकती है । चुनने के अभिशाप पर विचार करती हुई कहती है - "कभी कभी ऐसा भी होता है कि आदमी जीता हुआ भी करीब-करीब मरने की सीमा तक पहुँच जाता है । मरता नहीं, लेकिन मरते हुए प्राणी की तरह ज़िन्दगी घूम जाती है । मेरी गो-राऊंड की तरह सब चुके हुए मौके और आधे फैसले काठ के घोडों की तरह एक दूसरे के पीछे भागते है, लेकिन उनके बीच का अंतर वही रहता है, जैसा शुरू में था - कोई किसी को पकडता नहीं ।"§।§ अपनी चुनाव के बारे में

---

§।§ निर्मल वर्मा - वीक एण्ड - बीच बहस में पृ: 47

वह कहती है - "मेरे लिए वीक एण्ड है - अंधेरे में अलग अलग लैम्प-पोस्टों की तरह जलते हुए । सुबह होते ही वे बुझ जाते हैं और मैं अपना स्लीपिंग बैग, पर्स और टूथब्रेश लेकर बाहर आ जाती हूँ । मैं सुबह लौट आती हूँ - चोरों की तरफ , ताकि दूसरे पडोसी मुझे एपार्टमेंट से बाहर आता हुआ न देख सकें ।"§।§ चुनने की खुली छूट से बडी पीडा दूसरी नहीं । यह स्थिति "पिक्चर पोस्टुकार्ड" एवं "उनके कमरे" नामक कहानियों में भी देख सकते है । "पिक्चर पोस्टकार्ड" के नायक परेश नीलू से प्यार करता है । लेकिन कभी वह इजहार नहीं कर सका । उसकी एक कमज़ोरी है कि शब्द बहुत ज़्यादा हैं, पर किस संदर्भ में क्या कहना है, किन शब्दों का चुनाव करना है - यह वह निश्चय नहीं कर पाता । इसलिए और गडबडा जाता है । परीक्षा के बाद वे सब आखिरी दिन जब मिलते हैं, तब भी वह नहीं कह पाता है । "पिछली गर्मियों" के केशी ने अरुणा को जिसके साथ उसकी शादी तय की गई है, छोडकर विदेश जाता है और मुक्त प्रेम का हिमायती बनता है । वह अपने इस निर्णय पर अटल है । माँ-बाप दोनों हताश हो चुके हैं । बहन कहती है कि वह अपने घर में ही रहे । लेकिन वह कहता है कि उसके रुकने से कोई फर्क नहीं पडेगा, और पडे यह वह चाहता भी नहीं ।

"मायादर्पण" की तरन के भाई और 'परिन्दे' की लतिका दोनों ही अपने ढंग से ज़िन्दगी चुनती हैं । लतिका ने कभी गिरीश नेगी का चुनाव किया था । लेकिन उसकी मृत्यु हो जाती है । तब से वह अतीत में

---

§।§ निर्मल वर्मा - वीक एण्ड - बीच बहस में - पृ: 47

जीने लगती है और यों उसने स्मृतियों की दुनिया का वरण किया है । "मायादर्पण" की तरन का एक भाई है, जिसका कहानी में परोक्ष रूप से उल्लेख है । घर की संवादहीनता की स्थिति एवं पिता के अतीत के प्रति लगाव से बचने भाई घर छोडकर चला गया था । और अपनी ज़िन्दगी खुद चुनने में कामयाब हो जाता है । यों निर्मल वर्मा के प्रत्येक पात्र वरण एवं स्वतंत्रता के प्रति सजग है और उनके मुताबिक अपनी ज़िन्दगी जीते हैं ।

एम. टी. के पात्र निर्मल वर्मा के पात्रों सा उतना स्वतंत्र नहीं है । फिर भी "हवेली" के अप्पुण्णी एवं पारुक्कुट्टी, "कालम्" का सेतु, "तुषार" की विमला, "विलापयात्रा" के उण्णि माधवन आदि सब स्वतंत्रता के हिमायती हैं । "हवेली" की पारुक्कुट्टी अपने प्रेमी के साथ घर से भाग जाती है और यों अपना जीवन खुद चुनती है । संयुक्त परिवार की शासन व्यवस्था में एक स्त्री केलिए ऐसी ज़िन्दगी मुश्किल की बात है । इस कारण वह संयुक्त परिवार के माहौल से बिछुड जाती है । उसका पति कोन्तुण्णी नायर, यद्यपि वह कई पात्रों की यादों में ज़िन्दा है फिर भी सशक्त पात्र है । वह "कारणवर" (घर का बुजुर्ग) से सधैर्य कहता है कि - अगर उस घर की लडकी को वह चाहता है तो लेकर ही जायेगा । अप्पुण्णी दरअसल इन दोनों की देखरेख में पलता है । कोन्तुण्णी नायर की मृत्यु के बाद शंकरन नायर, पारुक्कुट्टी और अप्पुण्णी को आसरा देने केलिए तैयार होता है । लेकिन अप्पुण्णी को यह पसंद नहीं । वह माँ से रूठकर माइके चला जाता है । वहाँ उसे उपेक्षा ही हासिल होती है । निन्दा और घृणा ही सहनी पडती है और वह वहाँ से चला जाता है ।

लेकिन लखपति बनकर वापस आता है और हवेली खरीदता है । यों एक तरह बदला भी लेता है और माँ के साथ, जिसे कारणवर ने घर से निकाल दिया था, बकाया ज़िन्दगी जीता है ।

अप्पुण्णी की ज़िन्दगी ज़रूर इस बात का ज्वलंत सबूत है कि आदमी खुद अपने भविष्य को बनाता है । यानी अपनी ज़िन्दगी को अपनी इच्छा की खातिर बनाने संवारने की स्वतंत्रता उसे हासिल है । अप्पुण्णी के संदर्भ में सार्त्र का यह कथन सही साबित होता है कि मानव वही है, जो वह खुद बनाता है । ज़रूर इसके पीछे उसकी स्वतंत्र चेता मानस और बलवती आकांक्षा कार्यरत है ।

"कालम्" के नायक सेतु के जीवन का एकमात्र लक्ष्य भौतिक जीवन की प्रगति है । उसे ग्राम अधिकारी की नौकरी मिलती है । लेकिन जब वह उसकी स्वतंत्रता पर बाधा डालती है तो वह उसे छोड देता है । सेतु याद करता है - "जहाँ तक याद है, यात्राओं की शुरुआत में नौका दूसरे किनारे पर ही थी । फिर भी सरकार की रोटी खाने तैयार नहीं हूँ । क्योंकि मानव सदैव परम्परा, रूढि, कानून - इन सबके गुलाम है ।"§।§ प्रेम संबन्धों में भी वह अपने स्वतंत्र चयन का परिचय देता है । वह पहले सुमित्रा से और फिर तंकमणी से संबन्ध साबित करता है । लेकिन बाद मेंअपने बोस की पत्नी ललिता श्रीनिवासन से शादी करता है ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 10।

"असुरबीज" का गोविन्दन कुट्टी, उपन्यास के प्रारंभ में पारिवारिक संबन्धों की गिरफ्त में पडकर वरण की स्वतंत्रता से वंचित होता है । लेकिन बाद में वह इन बेडियों को तोडकर स्वतंत्र बन जाता है । अपनी परम्परा यानी विरासत को छोडकर वह सांप्रदायिक धर्म का अनुचर बन जाता है, मतलब वह इस्लाम बनता है । जब गाँव में महामारी फैलती है, गाँववालों को बचाने केलिए वह मानवता का मशाल थामकर निकल पडता है । लाशों को दफनाने केलिए तक वही एक रह जाता है । वह अपने कंधों पर लाश उठा लेता है । बीमारों की मदद करने और मुर्दों को दफनाने में वह निरत रहता है । वह साहस एवं कर्मठता से समाज की माँग की पूर्ति करता है । मीनाक्षी जो नाम के वास्ते उसकी पत्नी रही की लाश को भी उसे दफनाना पडता है । वह उसकी एकमात्र संतान को उसके पिता के घर पहुँचाकर एक असली मानव की भाँति उसकी परवरिश करने का आग्रह करता है । अन्त में यों घोषणा करते हुए वह गाँव छोड़कर चला जाता है - "वापस आने केलिए मैं अपनी यात्रा शुरू कर रहा हूँ ।" सचमुच अपने स्वतंत्र एवं मानवता से लैस व्यक्तित्व की वजह गोविन्दन कुट्टी एक उज्वल पात्र बन गया है ।

"तुषार" की नायिका विमला अपने प्रेमी सुधीर कुमार मिश्रा की प्रतीक्षा में जीवन बिताती है । प्रतीक्षा करना एवं अतीत में खो जाना उसका अपना चुनाव है, उसकी अपनी स्वतंत्रता है । "कुट्टी दीदी" कहानी की नायिका कुरूप है । इस कारण अपने ही परिवार में निन्दित एवं अपमानित हो जाती है । यह उसमें विद्रोह की भावना जगा देती है ।

एक हद तक यह उसे स्वतंत्र चेता बना देता है । वह नीच जाति के एक मज़दूर से इश्क करने लगती है । "तलवार और पायल" नामक कहानी बाद में जिसके आधार पर 'अर्पण' नामक सिनेमा बनी थी - अप्पु रूढियों को तोडता है, आधुनिक विचारों का वरण करता है । सामंतवादी व्यवस्था के पतन के कारण मन्दिर और "ओरेकिल" की हालत बदत्तर हो गयी थी । गरीबी की वजह मन्दिर में नियमित रूप से पूजा, अर्चना तक संभव नहीं थी । यह तो मंदिर की देवी की ही असमर्थता है । यदि वह सक्षम है तो उसकी ऐसी हालत नहीं होती । अतः अप्पु के विचार में अपनी रक्षा करने में असमर्थ देवी केलिए ओरेकिल की आवश्यकता नहीं है । इसलिए वह कहता है - "देवी की तलवार को पुराने ताम्बे का मूल्य तक नहीं है ।" ऐसी बदतमीज़ी से नाराज़ होकर पिता उसे घर से निकाल देता है और वह बिना किसी हिचक से चला जाता है । अप्पु के इस आचरण में यद्यपि थोडी मज़बूरी है, फिर भी वह उसके स्वतंत्र व्यक्तित्व का ही निदान है ।

मृत्युबोध

अस्तित्ववादी दर्शन का अनिवार्य संघटक है मृत्यु । सभी दार्शनिकों ने इसकी गहरी विवेचना की है । अस्तित्ववाद का प्रथम प्रणेता कीर्केगार्ड की राय में मृत्यु मानव के सम्मुख एक चुनौती है । यह उसके अस्तित्व का अंग नहीं, पर उसे जीवन के संबन्ध में एक धारणा स्थापित करने का अवसर प्रदान करती है ।"[2] हेडगर के विचार में "मृत्यु एक धनात्मक एवं

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ: 12।

[2] H.J. Blackham - Six Existentialist thinkers - P: 96

सर्वव्यापी संभावना है, जो व्यक्ति अस्तित्व को स्थायित्व प्रदान करती है ।" यह प्रामाणिक ज़िन्दगी का संकेत भी है । मृत्यु कोई आकस्मिक घटना नहीं, बल्कि बरसों से बनती आयी एक संभावना है । मृत्यु मानव के अस्तित्व में ही समाहित है । उसे हटाया नहीं जा सकता, बल्कि प्रामाणिक रूप में स्वीकार करना ही पडता है । हेडगर मानते हैं कि वैयक्तिक अस्तित्व शून्यत्व के बीच ही स्थायित होता है । शून्यत्व यथार्थ है, बाकी सब एब्सेर्ड हैं । अत: अस्तित्व का असंभव ही संभव है । जन्म के साथ मृत्यु संलग्न है । जो जन्म लेता है, उसे मरना ही पडता है । कभी ऐसा लगता हैं कि हमने मरने केलिए ही जन्म लिया है ।"{1}

आधुनिक काल में दो महायुद्धों की विभीषिका की वजह से सारे यूरोप ने मृत्यु की विकरालता तथा अनिश्चितता का अनुभव किया था । सारे चिन्तन क्षेत्र में मृत्यु भय छा गया था । सार्त्र और कामू के चिन्तन पर इसका व्यापक प्रभाव पड़ा है । सार्त्र ने सारे बुद्धिजीवियों को प्रभावित करते हुए उद्घोषणा भी की थी - "जन्म के साथ मृत्यु संलग्न है, जिसपर मनुष्य का कोई वश नहीं है और मरणोपरान्त ही इस जीवन से उसे मुक्ति मिलती है, जीवनकाल में उसके व्यक्तित्व की मान्यता तक नहीं ।"{2}

{1} Death is my sovereign possibility, death is not my possibility at all, it is a cancellation always possible of what I can be, which is outside my possibilities.

(2) Sartre - Modern Novel - P 165

सार्त्र की राय में मृत्यु की दृष्टि से व्यक्ति जीवन की विवेचना, दूसरों की दृष्टि से उसकी आत्मनिष्ठता की विवेचना के समान है, जो असंभव है । मृत्यु आकस्मिक है, लेकिन जन्म के समान अनिवार्य तत्व है । वे लिखते हैं - "मैं मरने केलिए स्वतंत्र नहीं हूँ बल्कि एक स्वतंत्र बीइंग हूँ, जो मरता है । मैं मृत्यु को मेरी आत्मनिष्ठता की कल्पनातीत सीमा मानता हूँ जैसे कि दूसरों की स्वतंत्रता को मेरी स्वतंत्रता की सीमा मानता हूँ ।"§1§

कामू ने मानवीय दृष्टि से तथा व्यावहारिक रूप में मृत्यु संबन्धी विचार प्रस्तुत किये हैं । उन्होंने आत्महत्या और मृत्यु को विसंगति से जोडकर ही विवेचना की है । निरर्थकता से बचने की एक राह है - आत्महत्या । यदि आदमी आत्महत्या नहीं करता है तो भी वह मरने केलिए अभिशप्त है । मृत्यु दुर्निवार है । इस दुर्निवारता ही विसंगति की कुंजी है । और उनकी दृष्टि में हत्या, मौत और विसंगतियाँ जीवन के मूल्य को बढाती ही हैं । वे मनुष्य को अपनी ज़िन्दगी और भी अधिक गहराई और लगन से जीने की अपेक्षा करती है ।"2"

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य में मृत्युबोध एवं जिजीविषा गहराई से अंकित है । इस मृत्यु बोध के कारण ही सचमुच मानव की जिजीविषा और गहन बनती है ।

---

§1§ एच. जे. ब्लेकहाम - सिक्स एक्सिस्टेनेष्यलिस्ट थिंकैर्स - पृ: 136

§2§ I anticipate death my suicide but my living in the presence of death as always immediately possible and as undermining everything. This full-blooded acceptance of death, lived out is authentic personal existence ..... Personal existence and everything encountered in personal existence is accepted as nothing, as meaningless fallen under the blow of its possible impossibility.

"वे दिन" में मौत की रेंगती छाया है । हर पात्र की मानसिकता में मृत्युबोध की सघनता है । कथानक दरअसल युद्धोपरांत मोहभंग की मानसिकता तथा मृत्यु से बचकर आयी युवा पीढ़ी की जिजीविषा से जुडा हुआ है । रायना के जीवन का एक हिस्सा युद्ध में बीत चुका है । युद्ध की विभीषिकाएँ उसके मन में गहरे रूप में धंस गयी हैं । रायना इन्टरप्रेटर से पूछती है - "क्या तुम ने कैंप देखे हैं ? लडाई के दिनों में वे हर जगह थे । जाक वहाँ रहता था और मरा नहीं ।"{1} कभी-कभी इन्टरप्रेटर के साथ चलती चलती रायना महसूस करती है कि वह नहीं है, जैसे लडाई कभी नहीं हुई है । कभी ऐसा अहसास भी होता है कि युद्ध के पूर्व तो वह जीती थी, पर उसके बीच और उसके बाद वह जीना भूल गयी है । वह कहती है - "हाँ मैं काफी छोटी हूँ । अगर तुम लडाई के साल बीच में से निकाल दो । और वे सब साल बाद में आये थे ।{2}

विगत युग की भीषण स्मृतियों से केवल रायना ही नहीं, सभी पात्र आक्रान्त है । फ्रांज का बचपन लडाई में बीता था । युद्ध की भीषण छाया अब भी उसकी रोज़ाना ज़िन्दगी में मंडरा रही है । वह इन्टरप्रेटर से कहती है - "तुम्हें अपना बचपन लडाई में गुज़ारना नहीं चाहिए । वह ज़िन्दगी भर पीछा नहीं छोडती ।"{3}

{1} निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 124

{2} निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 114

{3} निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 93

इन स्मृतियों के साथ पात्रों की मानसिकता में सघन पडी मृत्यु चेतना कभी उजागरित होती है और उसकी वजह सब ठिठक जाते हैं । टी. टी. इन्टरप्रेटर से कहता है - "एक बार मैं ऊँचे टॅवर पर चढा था । तुम जानते हो उस दिन मैं ने पहली बार मृत्यु के बारे में सोचा था । उस दिन मुझे काफी हैरानी हुई थी, क्योंकि उससे पहले मैं ने कभी इसके बारे में नहीं सोचा था ।"§।§ असल में सभी पात्र एक अभिशप्त मानवीय स्थिति और नियति से बँधे हुए हैं, उससे छूटना चाहते हुए भी छूट नहीं पाते हैं । यों "वे दिन" में मृत्यु का साक्षात्कार नहीं है बल्कि मृत्यु के आतंक और संत्रास एक डरावने साँप-सा सभी पात्रों के रग रग में रेंग रहे हैं ।

"लाल टीन की छत" की किशोरी लडकी काया और उसका भाई छोटा निपट भिन्न दृष्टिकोण से मृत्यु को देखते है । एक बार रेलवेलाइन के पास घूमते समय काया की कुत्तिया गिन्नी वही कट कर मर जाती है । काया की बुआ की बेटी लामा उससे कहती है कि गिन्नी केलिए वह छुटकारे के बराबर है । लेकिन काया समझ नहीं पाती । वह छोटे से इसके बारे में पूछती है । तब छोटा कहता है - "कितनी बार देखा है - झाडियों में पथराई चिडियों को, कुत्तों के कंकाल, मिट्टी पर सिकुडी चींटियों को, बारिश के दिनों में बहती नालियों, मुरदा छछुंदरों केंचुओं को । लेकिन वह मृत्यु थी । मरना नहीं । मृत्यु भी नहीं, उसके बाद की चीज़ । एक निर्जीव, बेडोल लोथ, जिसका जीने-मरने से कोई संबन्ध नहीं । नहीं मरना नहीं, मरते हुए नहीं ।"

---

§।§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 153

जब मिस जोसुआ ने सोने की बात कही थी, छोटे केलिए मरना, वह भी नहीं है । उसकेलिए मरना महज कहीं जाना है - जैसे लोग सर्दियों में दिल्ली जाते है । यहाँ लेखक ने बच्चों के माध्यम से "मृत्यु" और "मरना" में भेद करते हैं - किसी को मरे हुए देखना और किसी को "मरते" हुए देखना दो अलग अलग चीज़ें हैं ।

"अंतिम अरण्य" मृत्युबोध से संपृक्त उपन्यास है । मेहरा साहब बुज़ुर्ग पात्र है । मेहरा साहब की स्मृति को टीपने केलिए उनकी दूसरी पत्नी ने कथावाचक को नियुक्त किया है । दूसरी पत्नी कैंसर से मर जाती है । पहली पत्नी में एक बेटी है । वह पिता से अलग निकट के एक गाँव में बेसहारा गरीबों की सेवा में व्यस्त है । इन दोनों की अनुपस्थिति में कथावाचक निरंजन बाबू मेहरा साहब की देखभाल करने टिक जाता है । अपने लक्ष्यहीन जीवन में, उनके सम्मुख मृत्युभय में एकाकी जीने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा है । वो कहते हैं - "मृत्यु कोई समस्या नहीं, अगर तुमने अपनी ज़िन्दगी शुरू न की हो । लगता है, तुम कितनी आसानी से वहाँ लौट सकते हो, जहाँ से तुम आये हो । तुमने देखा होगा, जितनी आसानी से युवा लोग आत्महत्या कर लेते है, बूढे लोग नहीं वे जीने के इतने अभ्यस्त हो चुके होते हैं कि उससे बाहर निकलना दूभर जान पड़ता है । मौत से ज़्यादा खौफ्नाक यह बात है कि तुम कभी मरोगे नहीं, हमेशा केलिए जीते जाओगें । है न भयानक चीज़ ।"§।§ मानव की अनिवार्य नियति मृत्यु की ओर संकेत करते हुए

---

§।§ निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृ: 20

निरंजन बाबू सोचते है - "मृत्यु एकमात्र चीज़, जिसके बारे में हम निश्चिन्त होते हैं क्या वह भी आदमी को आखिरी मौके पर धोखा दे सकती है ? हम यह भी नहीं जान पाते, वह अपने साथ किसे ले गई है क्या उसे, जिसे हम जानते थे, या किसी और को, जिसे जानने की कभी मुहलत नहीं मिली ।"§1§ दरअसल यह संपूर्ण उपन्यास अधेड लोगों की जिजीविषा के संघर्ष और मौत के आतंक का जानदार दस्तावेज़ है । मेहरा साहब अपनी बेटी तिया के पास एक संवाद के वास्ते जाना चाहते है । जब वह तैयार होता है; तत्काल उसे पक्षाघात होता है । आवाज़ चली जाती है और फिर मर जाता हैं । तिया आती है और उनकी राख बटोरती है । पोटली गंगा में निमज्जित करने केलिए निरंजन बाबू को देती है । निरंजन बाबू का पिता पहले मर चुका है । वह एक बार फिर पितृपक्ष के काम पूरा करता है । राख को गंगा में प्रवाहित करता है । अन्त में वह सोचता है - "मृत्यु एक घटना है, वह सिर्फ बर्फ की तरह सुन्न कर देती है । पीडा बाद में आती है, काल की तपन में बूँद-बूँद पिघलती हुई ।"§2§

"डायरी का खेल" की बिट्टो तपेदिक की मरीज़ है । बिट्टो चाची के घर आयी है । यहाँ बिट्टो केलिए लड़के देखे गऐ और एक जगह बिट्टो की बात तय भी हो गई । उसे बीमारी के कारण रिस्ता टूट जाने का डर है । बिट्टो में मृत्युबोध एवं जिजीविषा अपनी चरम बिन्दु पर है । वह कहती है - "मरने से पहले बहुत सी जी भरकर जीना चाहिए बाबू, जैसे हम पहली बार जी रहे हों, जैसे हमसे पहले कोई जिया न हो ।"§3§ यों स्पष्ट है कि निर्मल वर्मा की रचनाओं में मृत्युबोध गहराई से विन्यसित है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृः 111
§2§ निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृः 264
§3§ निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृः 264

एम. टी. की रचनाओं में चित्रित मृत्यु चेतना

एम. टी. की रचनाओं में मृत्यु चेतना की सर्वांगीण अभिव्यक्ति हुई है । उन्होंने मृत्यु को विभिन्न कोणों से देखा परखा है । मृत्यु की भयानकता एवं हल्केपन के चित्रण में भी उन्होंने कमाल दिखाया है । "तुषार" की विमला के जटिल मन में पाप बोध और प्रतीक्षा के साथ मृत्यु का एहसास भी ध्वनित है । मृत्यु भय पिता की मृत्यु के साथ उसमें जम गया था । भैया बाबू के फोन कॉल से उसे पिता की मृत्यु का पता मिलता है । "विदूरता से एक परिचित आवाज़ । पब्लिक काल आफिस के रिसीवर उसने धीरे से हाथ में लिया । तब मन शान्त था ।"

"कौन" ?
"बाबू" - बाबू की आवाज़
क्या ?
हाँ सबेरे जी हाँ दीदी साढे पाँच बजे ।

उसने मृत्यु की खबर सुनते, भँवर में फँसे तिनके के दाने के समान झूमकर असहाय होते पिता को देखा । कुछ भी नहीं लगता है, मन में घनी शान्ति मात्र है ।"§।§ बिमला की स्मृति में उभरनेवाली मृत्यु के चित्र भँवर में फँसकर गहराईयों में डूबता प्रेमी सुधीर कुमार मिश्रा, सफेद कपडों से ओढी लाश, फीका चेहरा और मूँदी आँखें" - मृत्यु के कराल रूप को उजागर करती है । मशहूर मलयालम आलोचक

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - तुषार - पृ: 59

के. पी. अप्पन ने लिखा है - "काले कपडे और रस्सी लेकर काल दूत के समान चलनेवाले कुली, बाज के समान यात्रियों को धूरकर देखनेवाले भोटिया मज़दूर, मरे दीवारों का दिल जैसे बिंबों से यही प्रतीत होता है कि एम. टी. मृत्युभय से पीडित है । "मृत्यु", "सफेद कपडे से ओढा हुआ शरीर", "बन्द आँखें" - ये सब मृत्युबोध को गहराते है"।[1]

"असुरबीज" में महामारी के कारण घटित मृत्यु के कराल ताण्डव नृत्य का यथार्थ चित्रण हुआ है । आदमी औरत, बूढे बच्चे सब मौत का ग्रास बन जाते हैं । आदमी चूहों व कीडों की तरह तड़प तड़प कर मरने लगते हैं । चक्कम्मा की पुत्री की मृत्यु पर कुञ्जरक्कार का कथन मृत्यु की विडंबना को जाहिर करता है + "सूखे पेडों को छोडकर नन्हे पेडों को काट डालना - यह मृत्यु का कैसा विनोद है ।"[2] यहाँ मृत्यु का तिलस्म भी उन्मीलित हुआ है । सुबह की धूप की प्रतीक्षा में बैठी बूढी कोढी (पारुत्तल्ला) को जब गोविन्दन कुट्टी देखता है तो उसके मन में महामारी के बाद बने मिट्टी के ढेरों में सिकुड पडे जीवन की याद आती है ।"[3] यहाँ जीवन की निस्सारता एवं मृत्यु की अनिवार्यता की ओर संकेत है ।

"विलापयात्रा" मृत्यु की पृष्ठभूमि में लिखा गया उपन्यास है । इसमें मृत्यु के परिवेश का हू-ब-हू चित्रण हुआ है । अतीत की यादों का भी अंकन इसमें हुआ है । पिता की मृत्यु की खबर सुनकर आये पुत्र

---

(1) के. पी. अप्पन - मारुन्न मलयालम नोवल - पृ: 26
(2) एम. टी. वासुदेवन नायर - असुरबीज - पृ: 242
(3) एम. टी. वासुदेवन नायर - असुरबीज - पृ: 248

उण्णी, पिता की लाश के सामने खडे होकर सोचता है - "शान्त हो मन ! अब लाश के सामने है । क्या, लोग पिता की लाश से दिल टूटकर गिरते पुत्र को देखने खडे है ? अग्निसंस्कार के बाद किसी न किसी प्रकार वहाँ से बाहर निकलना है । अफ्सोस है फिर ।"§1§ बिना किसी गम एक मामूली दिनचर्या के समान चारों पुत्र पिता की शव क्रिया में भाग लेते हैं । पिता की मृत्यु के प्रति उनमें जो निस्संगता है, उसका दृष्टान्त उनकी बातें ही हैं । मृत्यु की खबर पाकर घर पहुँचते ही उण्णि माधवन कहता है - "जस्ट इन टाईम, बीस मिनट पहले मृत्यु हुई होगी ।"§2§ राजन कहता है - पिताजी अन्तिम घबराहट से बच गये है, अभी मृत्यु हुई है ।"§3§ "कालम" के सेतु भी माँ की मृत्यु की खबर पाकर ऐसी स्थिति से गुज़र जाता है - सोते सूख चुकी चट्टानों की भाँति मन खुश्क हो गया । माँ मर गई ।"§4§

"मृत्यु" नामक कहानी में मृत्यु की निस्सारता को प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है । एक आदमी की मृत्यु हो गयी है । घर में उसकी लाश पड़ी है । कुछ लोग उसके रिस्तेदारों की प्रतीक्षा में राह पर बैठे हुए हैं । पास एक अजनबी युवक भी बैठा है । वे लोक अग्नि संस्कार एवं बाद के आचारों के बारे में बातें कर रहे हैं । कुछ देर बाद किसी को भी न देखकर ये लोग घर लौटते हैं । उस युवक को भी साथ लेता है । घर पहुँचकर वे लोग लाश को नहलाते हैं,

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - विलापयात्रा - पृ: 21
§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - विलापयात्रा - पृ: 28
§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - विलापयात्रा - पृ: 29
§4§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 160

आचरणों की पूर्ति करते हैं । फिर अर्थी लेकर श्मशान घाट चलते है । मृतक क्रिया की समाप्ति पर एक वृद्ध अजनबी युवक से पूछता है यह मृतक तुम्हारा कौन है । वह कहना चाहता था, मैं कोई नहीं हूँ, एक अजनबी मात्र हूँ ।" लेकिन कह न पाने के कारण वह जल्दी वहाँ से चला जाता है ।

प्रतीकात्मकता के कारण यह कहानी अधिक प्रभावशाली बन गयी है । युवक वास्तव में जीवन का प्रतीक हैं । मृत्यु अनिवार्य है । इसलिए मृत्यु से संबन्धित बातें उसे परेशान करती हैं और वह उसे टालना चाहता है । मतलब मृत्यु के ख्यालों के साथ कोई भी सुखद जीवन जी नहीं सकता है ।

इसी प्रकार का एक और कहानी है - "वे" । इस कहानी का वाचक अपने ऐशो आराम भरी ज़िन्दगी की आकांक्षा में पहले गाँव छोडकर चला गया था । फिर गाँव लौट आया है । शहर में जिस होटल में वह ठहरता था, वहाँ एक युवक ने आत्महत्या की थी । यह जानकर वह मृत्युभय से गिडगिडाता है । होटल से बच निकलने केलिए वह छटपटाता भी है ।

"शरण", "फिर शरण की खोज में" आदि कहानियों में भी मृत्यु का प्रतीकात्मक रूप देख सकते है । 1970 में दरअसल एम. टी. मृत्यु के फाटक तक पहुँचे गये थे । उनकी आत्मविह्वलताएँ और एकान्त पीडा का प्रतीकात्मक चित्रण ही "फिर शरण की खोज में" हुआ है ।

उन्होंने मानव के भौतिक जीवन को किराये घर की ज़िन्दगी से तुलना की है; कब मकान मालिक घर से निकलने को कहेगा, हर पल इसी उद्विग्नता में रहने केलिए किरायेदार अभिशप्त है । वैसे ही मानव भी इस संत्रस्तता में जीने केलिए मज़बूर है कि कब मृत्यु, दरवाज़ा खटखटायेगी ।

"छोटे-छोटे भूकंप" और "जन्नत के खुलने का वक्त" में संबन्धों के अजनबीपन एवं सतहीपन का पर्दाफाश हुआ है । परिवार की बडी लडकी की शादी के दिन नानी मर जाता है । लेकिन मृत्यु की बात छिपाकर रखी जाती है, ताकि शादी संपन्न हो जाय । "जन्नत के खुलने का वक्त" में पुत्र, जो प्रवासी है, पिता की मृत्यु की प्रतीक्षा में है । लेकिन सबकी आशाओं में पानी फेरते हुए वह मृत्यु से बच जाता है । यह बात छुट्टी में आये पुत्रों को परेशान करती है, और वे मन ही मन कोसते हुए लौटते हैं । पिताजी इसका अन्दाज़ करते हैं और वह अपनी बहिन से कहते हैं - "मेरी मृत्यु पक्का करने के बाद ही आगे इन्हें बुलाना ।"§।§

सक्षेम में निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य के निरूलेषण से यह स्पष्टत: ज़ाहिर होती है कि इन दोनों ने अपनी रचनाओं में मृत्यु संबन्धी अपना विचार खुलकर व्यक्त किया है । निर्मल वर्मा ने मृत्युबोध एवं जिजीविषा दोनों को समान संवेदनशीलता के साथ चित्रित किया है । पात्रों की सूक्ष्म संवेदना के चित्रण के द्वारा इस चेतना को पाठकों तक पहुँचाने में वे सफल हो गये हैं ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - जन्नत के खुलने का वक्त - पृ: 62

उन्होंने "मृत्यु" और "मरने" में भेद व्यक्त किया है । इनके "परिन्दे", "कुत्ते की मौत", "बीच बहस में", "डेढ़ इंच ऊपर" आदि कहानियों में तीव्र संवेदना के साथ मृत्युबोध का चित्रण हुआ है । "बीच बहस में", "डायरी का खेल" आदि में मृत्युबोध के साथ साथ जिजीविषा भी प्रकट है । एम. टी. के उपन्यास "तुषार" का सरदारजी बताता है - "मृत्यु सचमुच उस जोकर सा है, जिसे रंगमंच का खयाल नहीं है ।"[1]

हेडगर ने मृत्युभय को मानवीय संघर्षक्षमता का आधार माना है । यह मृत्युभय ही मनुष्य को भविष्य के प्रति सचेत करता है । उसे ग्लानि होती है कि वह अब तक अपने अस्तित्व को भूला रहा । परिणामतः वह पुनः अपने प्रामाणिक अस्तित्व को पाने का निश्चय करता है ।" मृत्यु की यह चेतना जैसे हमने देखा, एम. टी. की सत्तर के बाद की ज़्यादातर रचनाओं में घनीभूत है । मलयालम के मशहूर आलोचक के. पी. अप्पन ने कहा है - "मेरा विश्वास है कि अपनी रचनाओं में ज़रूरत से ज़्यादा आत्मांश भरने की प्रेरणा एम. टी. को इस मृत्युबोध से ही मिली है ।"[2] अतः यह बात स्पष्ट है कि एम. टी. जीवन की तरह मृत्यु के प्रति भी सदैव सचेत रहे हैं ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - तुषार - पृः 48

[2] के. पी. अप्पन - मारून्न मलयालम नोवल - पृः 26-27

संत्रास एवं निराशा

अस्तित्ववादी दर्शन में संत्रास कोई क्षणिक अनुभूति नहीं है । वह मनुष्य की बीजभूत भावावस्था है, जो उसके संरचनात्मक पक्ष, मानव अस्तित्व की समीपता, पतनावस्था और क्षणिकता को व्यक्त करती है ।(1) किर्केगार्ड ने ही इस पर पहले सर्वांगीण विचार प्रस्तुत किया था । उनके विचार में संत्रास जागरण और चेतना की प्रारंभिक अनुभूति है । प्रामाणिक वरण तथा संत्रास मानवीय अस्तित्व का प्रवेश द्वार है । संत्रास के उद्भूत होते ही हमारी आँखों के सामने से पर्दा हट जाता है और हम अपना यथार्थ रूप देख पाते हैं । संत्रास मानव को स्वतंत्रता की ओर उन्मुख करता है और हमारी सारी संभावनाओं को भी जाग्रत कर देता है ।(2)

हेडगर की यह भी मान्यता है कि संत्रास से शून्यता उत्पन्न होती है । शून्यता की अनुभूति दो प्रकार संभव है । जब मनुष्य यह महसूस करने लगता है कि संसार नश्वर, क्षणिक और मूल्यहीन है, सारी वस्तुएँ उससे दूर खिसकती जा रही हैं, संसार की किसी भी वस्तु पर उसका कोई हक नहीं है, वह नगण्य है, तो शून्यता एक डरावने साँप-सा उसे घेरने लगती है । और जब मनुष्य स्वयं संसार से उदासीन एवं अनासक्त रहने लगता है तब उसका मन वस्तुओं से दूर भागने का श्रम करता है और शून्यता की अनुभूति से अभिभूत होता है ।(3) संक्षेप में हम यही कह सकते है कि संत्रास वह भय है, जिसका कोई कारण या स्रोत नहीं होता ।

---

(1) Dr.G.Srinivasan - The Existentialist concepts and the Hindu Philosophical System - P: 80

(2) H.J.Blackham - Six Existentialist Thinkers - P:

(3) Martin Heidegas - Being and Time - P: 232

यह एकांत भय की, सुन्न हो जाने की, गुमराह होकर कहीं प्राण भय से छिपकर बैठ जाने की स्थिति है । लेकिन यह मानवीय अस्तित्व का उन्मीलन करता है । यह मनुष्य को इस उन्मीलित अस्तित्व का एहसास केलिए सक्षम बना देता है । और इसी संत्रास से ही अवसाद, निराशा और शून्यता के भाव उद्भूत हो जाते हैं । निर्मल वर्मा और एम. टी. की रचनाओं में संत्रास एवं निराशा बोध झंकृत हैं ।

युद्ध के आतंकपूर्ण परिवेश में व्यक्ति मन के परत-दर-परत को खोलने के भावबोध से निर्मल वर्मा "वे दिन" गहराई से ओतप्रोत है । इस उपन्यास के सभी पात्र भय,संत्रास और आतंक से पीडित हैं । सर्वत्र भय रेंगता सा प्रतीत होता है । खुशी डरावनी बन जाती है, स्वर फुसफुसाने लगता है । "भय और खुशी के साथ तुम ज़्यादा देर नहीं रह सकते सिर चकराने लगता है, जैसे तुम हवा में टंगी रस्सी पर चल रहे हो ।"(1) युद्ध के आतंक ही रायना और जाक के दांपत्य को मृत-सा बना देता है । युद्ध की विभीषिका ने मानव को एकान्त एवं सुन्न स्थिति में पहुँचाया है । प्रत्येक व्यक्ति प्राणभय से बेसहारा फिरता रहता है । भीड में भी व्यक्ति अकेला बन जाता है । रायना का मन संत्रस्त है । उसे इन्टरप्रेटर सहारा देता है । वह उससे कहता है - "इट इस नथिंग तुम बार बार अपने से कहते हो कि लगता है, तुम डर गए हो । यह कुछ नहीं है । डर कभी इतना हास्यास्पद नहीं होता । होता नहीं । वह है, फिर नहीं है । जलती बुझती बत्ती सा ।"(2) रायना इस स्थिति से छुटकारा पाने केलिए ही "वोड्का" या "संभोग" का सहारा लेता है ।

---

(1) निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 120
(2) निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 62

इन्टरप्रेटर महसूस करता है कि कोई तीसरा आदमी उनका पीछा कर रहा है - "पहली बार उस शाम को मुझे आभास हुआ मानो हम तीनों के अलावा कोई और व्यक्ति है, जो हमेशा हमारे बीच में है । उसे हम देख नहीं सकते, किन्तु वह हम से अलग नहीं हो सकता ।"§1§ इस अज्ञात का एहसास रायना के साथ शारीरिक संबन्ध के वक्त भी उसे आतंकित करता है - "मेरे पास उसका चेहरा था पिछले दिनों की पहचान के बाहर । पर उस अज्ञात ने मुझे आतंकित सा कर दिया, किंतु कुछ देर केलिए ।"§2§ यों फ्रांस भी इन्टरप्रेटर से कहता है - "तुम्हें अपना बचपन लडाई में नहीं गुज़रना चाहिए वह ज़िन्दगी भर पीछा नहीं छोडती ।"§3§ यों संत्रास एवं निराशा बचपन से ही उसे सालते रहते हैं । यों फ्रांस, मारिया, थानथुन, मेलन्कोविच आदि किसी न किसी वजह निराशग्रास्त हैं । फिर भी उसे सँभालते हुए अपने अपने अंधेरे में ठिठुरते रहते हैं ।

"एक चिथडा सुख" के पात्र कलाकार हैं और बोहेमियन जीवन जीते हैं । वे नियत से भिन्न कुछ नया सृजन अपनी मर्जी के अनुसार करना चाहते है और इन लोगों की अपनी अपनी दुनिया है । कई बार मुन्नू महसूस करता है कि बिट्टी के भीतर कहीं एक गहरा दु:ख है, जिसे वह खामोश सहती रहती है । एक रात वह अपने बिस्तर पर बिट्टी के रोने की आवाज़ सुनती है । तब वह पूछता है - "क्या तुम रो रही हो ?

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 208

§2§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 209

§3§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 210

तब बिट्टी कहती है - "नहीं, मेरे पार्ट में रोना बदा है ।"
तो ये आँसू असली कैसे है ? बिट्टी कहती है - ये काम मुश्किल नहीं है, मैं कुछ सोचने लगती हूँ और यह खुद बखुद चले जाते हैं ।"§।§
वास्तव में ये लोग थियेटर से प्यार करते है । पर इनके हिस्से में रिहेर्सल की ही भूमिका होती है, मंचन नहीं होता । अधूरेपन को पूर्णता में तब्दील करने केलिए वे तडपते रहते है । इसलिए बिट्टी डैरी से कहती है - "तुमने बहुत कुछ पा लिया है, सब तुम्हारी तरह पा नहीं सकते । क्योंकि डैरी एक प्रतिष्ठित निदेशक है, जिसकी जडें विदेश तक गडी हुई है ।

"लाल टीन की छत" की काया किशोरी है । इसलिए उसकी विशेष मानसिकता है । जीवन, सेक्स और मृत्यु के प्रति समान रूप से उसके मन में कुतूहलता है । इससे जुडी समस्याओं से वह जूझती है । इसलिए उसे संत्रास एवं निराशा का एहसास भी होता है । इस विशेष मानसिकता के कारण वह अपने भाई से भी घुल-मिल नहीं पाती । मृत्यु, जन्म, सेक्स आदि से संबन्धित रहस्यमय वातावरण ही वह दुनिया है, जिसे काया अनुभव तो करती है, लेकिन समझ नहीं पाती । एक बार रेलवे लाइन के पास घूमते समय काया ने अपनी कुत्तिया गिन्नी की आँखों में एक विशेष प्रकार की तडप देखी थी । तब बुआ की बेटी लामा ने उसे बताया था कि गिन्नी छुटकारा चाहती है, वह तडप रही है । किन्तु काया उस छुटकारे का अर्थ न समझ सकी थी । कुछ दिन बाद गिन्नी वहीं कट कर मर गयी थी । काया को सिर्फ उसकी आत्मा की "तडपन" और "छुटकारा" दो चीज़ें याद रहती हैं, जो उसे दूसरी दुनिया के रहस्य सी लगती हैं ।

---

§।§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 13

काया की मानसिकता को और रहस्यात्मक बनानेवाली दूसरी घटना है - माँ की प्रसूति । वह खिडकी से अपनी माँ की प्रसूति देखती है । इसके पहले कभी उसने इस प्रकार की पीडा नहीं देखी थी । माँ की नंगी टांगों के बीच से मांस के लोथ को निकलते देखकर उसे बेहोशी सी होने लगती है । काया को कुंठित करनेवाला पात्र है - नथवाली औरत । वह औरत काया के चाचा की रखैल है । चाचा की पत्नी मर चुकी है । वह उस औरत को कहीं बाहर से लाया है । वह औरत काया के साथ एक अजीब प्रकार की कामुकता के साथ व्यवहार करती है । वह काया के साथ दैहिक सुख प्राप्त करना चाहती है और काया से उसके रजस्वला होने के बारे में पूछती है । पर काया कुछ समझ नहीं पाती ।

यों काया अपनी चारों ओर की रहस्यमयता से आतुर है, घुटन एवं संत्रास की दबोच से बेचैन है ।

"माया दर्पण" की तरन के पिता, सेवानिवृत्त हो गया है । वह अपने पुराने प्रतिष्ठित ओहदे की स्मृतियों को संजोए रहता है । वह अपनी विरासत की भंगिमा और अतीत के मोह से निकल नहीं पाता । वह अपनी दुनिया की गिरफ्त में है । पुत्री तरन जवान होते हुए भी आत्मोन्मुख है । वह भी अपने सीमित दायरे में सिमटी रहती है । घर में किसी का किसी से कोई संवाद नहीं होता । अपनी परिस्थितियों से वे सब दुःखी भी हैं । बाबा तरन केलिए बहुत ऊँचे घर का लडका देखते हैं । इसलिए जहाँ कहीं भी तरन के रिश्ते की बात चलती है,

ज़रा सी आगे जाकर बन्द हो जाती है । अपने घर की परिस्थितियों से ऊब चुकी तरन भाई के घर जाना चाहती है । लेकिन असहाय और अकेले पिता को छोडकर वह जा नहीं सकती । यों प्रस्तुत कहानी में निराशा एवं व्यर्थता-बोध गहरे पडे हैं ।

"बीच बहस में" के सेवानिवृन्त व्यक्ति की भी ऐसी ही हालत है । वह अपने उच्च पद की खुमारी से अब तक मुक्त नहीं है । लेकिन उनके बच्चों के मन में उनके प्रति कोई आदर भाव नहीं है । वे उनके अस्तित्व तक को नकारते है । उन्होंने पिता को उनकी इच्छा के बगैर अस्पताल में दाखिल किया है और उसकी मृत्यु की प्रतीक्षा करते हैं । पिताजी घर चलने केलिए ज़िद करते हैं । उनकी होम सिकनस बहुत ही तीव्र है । लेकिन कोई उन्हें घर ले जाने को तैयार नहीं । काफी दिनों के बाद वृद्ध की हालत गिरने लगती है, और वह ज्वर पीडित रोगी की तरह अपनी अतीत की सारी बातें बकने लगता है । वह बेटे से कहता है - "आई आम एशेम्ड आफ यू ऑल" और वह संबन्धों के खोखलेपन को उघाडकर नंगा कर देता है ।

"लंदन की एक रात", "सितंबर की एक श्याम" एवं "माया का मर्म" में बेरोज़गारी के कारण झटपटाते युवाजनों का चित्रण है । "सितंबर की एक श्याम" के नायक अपने जीवन की व्यर्थता को शराब और कोटी की अंगनाओं के सहारे दूर करना चाहता है । पिता से लडकर वह अपने घर से भागा हुआ है । वह समस्त नैतिकताओं को तोडकर अपने आपको मुक्त करना चाहता है । "लंदन की एक रात" का नायक बेकार है । उसको पता नहीं है कि क्या करें ? एक मुकाम पर वह सोचता है - "हम कितने कम बार और

अपने हाथों को इस तरह देखते है, जैसे वे हैं । जैसे वे असल में है और तब भ्रम होता है कि जो भी चीज़ उनकी पकड में आयेगी, वह हमारी नहीं हो सकती ।"[1] "पिक्चर पोस्टुकार्ड" के पात्र - सीडी - परेश निकी सभी समाचार पत्रों में विज्ञापित रिक्त स्थानों की प्रतीक्षा में है । परेश की कृतियाँ या तो संपादकों द्वारा वापस भेजी जा रही हैं, न तो वह बुक रिव्यू कॉलम में बेनाम छप रहा है । इसलिए वह बहुत ही उदास है ।

"सुबह की सैर" के केनल निहाल चंद बूढा हो गया है । उसका कोई सगा संबन्धी नहीं है । जीवन के ऊब, उकताहट एवं निराशा से बचने का एक मात्र आश्वासन है - उसका सुबह की सैर । इस सैर के दौरान वह नियमित रूप से कट्टो नामक स्त्री से मिलता था । कट्टों का सामीप्य ही उसे जीवन्त बनाता था । एक दिन आराम करते समय कट्टो नहीं आयी । पर उसके कूदने की रस्सी बरगद के पेड पर लटकी हुई दिखाई दी । झूलती रस्सी को देखकर केनल साहब के मन में अपने अस्तित्व के प्रति तरह तरह के सवाल उठने लगते है । वह बहुत ही संत्रस्त एवं निराश हो जाता है । अंत में बरगद की डाल पर उसी रस्सी में वह आत्महत्या करता है ।

"डेढ़ इंच ऊपर" का अवकाश प्राप्त वृद्ध भी संत्रास एवं निराशा का शिकार है । उसका कथन ही इस बात का दृष्टान्त है - "मेरी उम्र में नींद आसानी से नहीं आती । नींद केलिए छटांक भर लापरवाही चाहिए, आधा छटांक थकान । आप के पास दो नोन है तो आप इसका मुहावरा

डेढ़ छलांक बियर पीकर कर सकते है ।" "अन्तर" की नायिका गर्भपात करना नहीं चाहती । लेकिन प्रेमी के दिल को हल्का करने केलिए उसे गर्भपात करना पडता है । प्रेमी के अस्पताल से जाने के बाद वह जो चीज़ें लाया था, उन्हें प्रेमिका बाहर फेंक देती हैं । बिस्तर के पास तक आने से उसका सिर चकराने लगता है, और वह लेट जाती है । उसकी आँखों से गर्म आँसू निकलकर बालों में खो जाते हैं ।

एम. टी. की रचनाओं में चित्रित संत्रास एवं निराशा

एम. टी. के पात्र जीवन की व्यर्थता से लैस हैं । बचपन और किशोरावस्था में जीवन की जो हरीतिमा उन्हें नष्ट हुई थी, यौवन में उसे पाकर उसकी निरर्थकता को वे तह तक पहचानते भी हैं ।

"हवेली" के नायक अप्पुण्णी की माँ को माइके से निकाल दिया गया था । लेकिन माँ से रूठकर अप्पुण्णी फिर माइके चला जाता है । माँ के अभाव में अप्पुण्णी को तिरस्कार एवं अवहेलना ही मिले थे, जिसकी वजह उसका बचपन और किशोर जीवन नीरस एवं उदास रहा था । इसीलिए जीवन में सब कुछ हासिल करने की अदम्य इच्छा उसमें अंकुरित होती हैं । इसकेलिए वह दम तोड प्रयत्न भी करता है । लेकिन अंत में सब कुछ पाकर इन सबकी निरर्थकता का बोध उसे सताता है - "सब कुछ पाने पर भी मन नहीं लगता है, कहीं नहीं लगता है । मन में शून्यता मात्र है ।"§।§

"कालम्" में व्यर्थताबोध घनीभूत पडा है । माँ की मृत्यु का तार पाने पर और बडे आर्थिक नफा के केस पाने पर भी उसे कुछ नहीं लगता है -

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - हवेली - पृ: ।87

"नत्थिंग, यह अंधेर रात और यह लम्बा रास्ता, जो गुज़र गया है, कुछ भी नहीं है ।"[1] व्यापार को बढावा देने केलिए आयोजित पार्टियों और सत्कारों में वह निस्संग होकर खडा रहता है ।

कभी कभार ज़िन्दगी में सब कुछ पा लेने के बाद यानी उच्च स्थिति में पहुँचकर भी व्यक्ति एकाकीपन और निरर्थकता का अनुभव करता है । "कालम" का सेतु इसका ज्वलन्त सबूत है । वह वैयक्तिक संबन्धों को बलि चढाकर जीवन के सभी भौतिक सुखों को अपने कब्जे में करता है । अन्त में सेतु महसूस करता है कि जो कुछ पाया है, वह सब व्यर्थ है और मात्र परम शून्यता मन में भरी हुई है ।

"तुषार" में भी व्यर्थता बोध एवं निराशा बीच बीच में उभर कर आते हैं । विमला सोचती है - नया साल बिना किसी गति से ठिठुर गया है । खिडकी खोल दिया तो ठंठी हवा जोश से आलिंगन करके, कमरे में अपराध-बोध से सहमती रही । गगन फीका पड गया है । झील और नगर के ऊपर अप्रैल का हल्का कुहासा अर्सों पहले जो सभी जैविक आर्द्रताओं से रहित है ।"[2] इस प्रकार बर्फीली कुमायूँ का वातावरण विमला के परायेपन एवं शून्यता को और बढाता है । सर्दी का यह चित्रण मृतवत् शून्यता को प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत करता है । पिता की मृत्यु का संदर्भ भी इसी कोटी में आ जाता है । खबर सुनकर उसके मन में घनी शांति भर जाती है । उसे लगता है कि उसे कुछ हो गया है । एक बार दिल खोलकर रोने केलिए भी वह असमर्थ हो जाती है ।

---

(1) एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 180

(2) एम. टी. वासुदेवन नायर - तुषार - पृ: 63

यों निर्मल वर्मा और एम. टी. के पात्र निराशा एवं व्यर्थताबोध से लैस है । खासकर निर्मल वर्मा के पात्र आत्मकेन्द्रित हैं । वे सदैव अपनी ही स्मृतियों का पुनःसृजन करते हुए वर्तमान को सह रहा है । वर्तमान की यथार्थता से उनके जीवन का रंग फीका पड गया है । एम. टी. के पात्र इस सत्य का बोध कराता है कि केवल वस्तु नहीं, बल्कि उसकी अप्राप्य स्थिति ही मानव को मुग्ध बनाता है । मलयालम के आलोचक वी. एम. विनयकुमार के अनुसार - "एम. टी. के पात्र हमें इस सत्य से अवगत कराता है कि जीवन तो लक्ष्योन्मुख अनन्त यात्रा है । अप्राप्य होने की संभावना से वह अधिक आकर्षक बन जाता है । और जब उसे लगेगा कि वह कब्जे में आयेगा, तो वह मन से गुज़र भी जायेगा । एम. टी. के प्रायः सभी पात्रों पर यह बात लगू है"[1] ।

निष्कर्ष

यों निर्मल वर्मा और एम. टी. के कथा-साहित्य के दार्शनिक आयामों पर विचार करने पर यह ज़ाहिर हो जाता है कि दोनों साहित्यकार अस्तित्ववादी विचारधारा से प्रभावित हैं । प्रवासी होने के कारण निर्मल वर्मा पर इसका प्रभाव बहुत गहरा है । प्रवासी जीवन के अकेलापन एवं महायुद्ध के बाद के संत्रस्त परिवेश को उन्होंने स्पष्टतः चित्रित किया है । एम. टी. की रचनाओं में इसका हू-ब-हू चित्रण नहीं है । फिर भी उन्होंने आधुनिक जीवन परिवेश का सर्वांगीण

---

[1] वी. एम. विनयकुमार - एम. टी. - कला, काल, व्यक्ति - पृ: 26

चित्रण किया है, जिनमें आज़ादी के बाद के मोहभंग का स्वर बुलंद है । असुरक्षित युवा पीढ़ी को परिस्थितियों ने मोहभंग की ओर ढकेल दिया था । जीवन संग्राम में उतरे नौजवानों को हिप्पोक्रसी और परिवेश की निर्ममता ने हक्का-बक्का भी बना दिया था ।
समाज व्यक्ति पर जो पीडा थोपता है उसकी वजह व्यक्ति और समाज दोनों जर्जर हो जाते हैं । व्यक्ति खुद अजनबी बन जाता है । संबन्धों में विघटन हो जाता है । संबन्धों की यह टूटन व्यक्ति को असंबद्ध जीने केलिए विवश कर देता है । वह अपने से और समाज से अलग होते है । डॉ. लेखा नरेन्द्रन के अनुसार - "आसक्ति से निस्संगता की ओर परिणति एम. टी. के दर्शन की खासियत है । यानी "हवेली" में आसक्ति है तो "विलाप यात्रा" में निस्संगता है । उनका दर्शन आसक्ति से आलस्य या निस्संगता की ओर बढ़ता है ।
एम. टी. अस्तित्व दर्शन के इस घोषणा के स्तर तक पहुँच जाते हैं कि मानव कुछ भी नहीं है, वह कुछ बन जाता है ।"(1)

---

(1) डॉ. लेखा नरेन्द्रन - भाषा साहिति, 1982, अप्रैल-जून - पृ: 22

-0-

तीसरा अध्याय -

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य में

व्यक्ति और रागात्मक संबन्ध

स्वतन्त्रता के बाद की संक्रमणकालीन परिस्थितियों ने भारत के प्रत्येक नागरिक को अमूल चूल आन्दोलित कर जीवन और समाज के प्रति उसकी धारणाओं को परिवर्तित कर दिया था । स्वतन्त्रता प्राप्ति के साथ साथ विभाजन एवं सांप्रदायिकता से उद्भूत दुर्निवार पाशविक परिवेश को भी झेलना पडा । कमलेश्वर ने लिखा है - "आज़ादी मिलते ही जो भयंकर रक्तपात और संहार हुआ, उसमें शरणार्थियों के काफ़िले ही नहीं आए, बल्कि अपने देश, घर परिवार में ही स्वयं आदमी शरणार्थी बन गया था । वे सब जो धर्मनिरपेक्षता में विश्वास करते थे, तथा जिन्होंने भारतीय एकता का स्वप्न संजोया था, और जो उस माहौल में पैदा हुए थे, जहाँ धार्मिक सहिष्णुता और उदारता का एक बहुत बडा राष्ट्रीय मूल्य था - वे विभाजन होते ही अपने आप में शरणार्थी बन गए थे । भयंकर रक्तपात और मानव के पाशविक व्यवहार को देखकर एक औसत आस्थावान आदमी हिल उठा । मानवीय मूल्यों में उसका जो विश्वास था, वह चरमरा गया, उसके भीतर सदियों से बने और करोडों ज़िन्दगियों द्वारा बनाए गए विश्वासों का ध्वंस हो गया ।"§1§

औद्योगीकरण एवं शहरीकरण ने भारतीय जनता के अपने पुरातन विश्वासों व संस्कारों को तोडने मरोडने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी । इसके फलस्वरूप सामाजिक जीवन के पूरे ढाँचे में

---

§1§ कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ: 58-59

क्रांतिकारी परिवर्तन हुए । बडे बडे उद्योग धंधों की स्थापना हुई, लोग गाँवों से नगर और नगर से महानगरों की तरफ निकलने लगे । तकनीकी विकास, आर्थिक कठिनाई और नगर की ओर संक्रमण ने मानवीय अस्तित्व के सभी पक्षों को प्रभावित किया । इससे सम्मिलित परिवार की संयुक्तता को भी भारी धक्का लगा । संयुक्त परिवार के स्थान पर व्यक्ति का अपना सीमित परिवार यानी अणु परिवार अस्तित्व में आ गया । संबन्धों में आये इस भौतिक अलगाव ने मानसिक अलगाव व उदासीनता को जन्म दिया । वे विभिन्न सूत्र, जो परिवार को परस्पर बाँधे हुए थे, शहरी वातावरण में चकनाचूर हो गया । डॉ. नित्यानंद तिवारी के अनुसार "यांत्रिकता और औद्योगिकरण ने व्यक्ति और व्यक्ति के आपसी संबन्धों को बदल दिया है, उसे झकझोर दिया है । यंत्र मनुष्य और मनुष्य के बीच एक तीसरी प्रबलतम शक्ति बन गया है । तकनीकी विकास ने "भीड-समाज" को पैदा किया है, जिसमें "उत्पादन और उपभोग" के अतिरिक्त और किसी चीज़ की गुंजाइश नहीं होती ।"§1§
अपने गाँव में विभिन्न प्रकार के रिस्तों में गिरफ्त युवक महानगर में अपनी पहचान, अपने अस्तित्व की सार्थकता को नष्ट होते देखकर टूट-सा गया ।

---

§1§ डॉ. नित्यानंद तिवारी - आधुनिक साहित्य और इतिहास बोध - पृ: 48

हमारी संस्कृति, धर्म एवं आदर्शों को केन्द्र में रखकर चलती थी । लेकिन आधुनिक युग में हमारे जीवन के केन्द्र में विज्ञान एवं यथार्थ आ गये । डॉ. नगेन्द्र ने लिखा है - "आधुनिक ज्ञान-विज्ञान ने मनुष्य को बहुत कुछ बुद्धि सम्मत बना दिया है । यथार्थ का स्वरूप ही बदल गया । पाप-पुण्य, धर्म-अधर्म, अच्छे-बुरे की जो कसौटियाँ धर्म-ग्रन्थों में निर्धारित की गयी थीं, उनकी प्रामाणिकता समाप्त हो गई, पुराने मूल्य विघटित हो गए । "क्वाटम सिद्धान्त" और सापेक्षतावाद से सिद्ध हो गया कि न तो कोई सार्वभौम सत्य होता है और न शाश्वत नैतिकता ।"(1) बौद्धिकता एवं तार्किकता ने मानव को चीज़ों को उनके सही रूप में देखने-समझने की क्षमता तो प्रदान की, परन्तु वही इसने मानवीय संबन्धों को, जिनका कि मूल आधार भावनाएँ होती हैं, विघटित किया है । जीवन के प्रति अपनी पिछली परम्परा से भिन्न दृष्टिकोण अपनाने के कारण विभिन्न संबन्धों के प्रति हमारी प्रतिक्रिया मूलतः भिन्न स्वभाव की हो गई ।(2)
विभिन्न मानवीय संबन्धों में एक प्रकार का ठंडापन, उदासीनता और अलगाव आ गये । मानव आत्म-केन्द्रित हो गया । आदमी और आदमी के बीच संवादहीनता की स्थिति पैदा हुई । आपसी संबन्ध और रिश्ते मानव केलिए बोझ सा बन गए । उसे इसका एहसास होने लगा कि संबन्धों को आज वह किसी न किसी प्रकार मजबूरन ढोता चलता जा रहा है ।

---

(1) डॉ. नगेन्द्र (संपा:) हिन्दी साहित्य का इतिहास - पृ: 456

(2) डॉ. नित्यानंद तिवारी - आधुनिक साहित्य और इतिहास बोध - पृ: 59

मानव को जब ऐसा लगता है कि विश्वास और आस्था रखने केलिए कोई नहीं है तो वह निराशा एवं दु:ख की स्थिति में पहूँच जाता है । वह अपने को असहाय भी समझता है । डॉ. सुनंत कौर के अनुसार - "पहले मानव भगवान में आस्था रखता था एवं इसी आस्था व भविष्य के प्रति आशावादी दृष्टिकोण के सहारे वह बहुत कुछ सरलता से सह जाता था, परन्तु विज्ञान प्रदत्त इस अनास्था ने उसे नैतिक रूप से अत्यधिक कमज़ोर बना दिया है ।"§1§ मानव इस भौतिक जीवन को ऐश और आराम के साथ जीना चाहता है । इस भौतिकता की वरीयता के कारण अर्थ जीवन का केन्द्र बन गया । विभिन्न मानव संबन्ध, जो पहले मूल्य एवं भावों द्वारा संचालित होते थे, अब "अर्थ" द्वारा संचालित होने लगे । अब मूल्यों का स्रोत ईश्वर या धर्म न रहकर मनुष्य हो गया पूँजीवादी मनोवृत्ति ही सचमुच इस अतिरंजित व्यक्तिवाद को प्रश्रय दिया था । डॉ. सुरेश सिन्हा के विचार में - "पूँजीवाद के प्रभाव स्वरूप जीवन में अनेक दरारें पड गयी हैं । इसका सबसे बडा आघात पारिवारिक जीवन पर पडा है ।..... मानव संबन्ध परिवर्तित हो गए हैं । मालिक और दास के, पति और पत्नी के, माता-पिता और संतानों के, दूसरे शब्दों में मानव-संबन्ध निरन्तर विघटित होते जा रहे हैं और अब सारे संबन्ध स्वार्थ एवं सुविधा पर निर्भर रहने लगे हैं ।"§2§

---

§1§ डॉ. सुनंत कौर - समकालीन हिन्दी कहानी - स्त्री-पुरुष संबन्ध - पृ: 20

§2§ डॉ. सुरेश सिन्हा - हिन्दी उपन्यास - पृ: 36

आशा-निराशा, मोहभंग और टूटन की इस प्रक्रिया से गुज़रते हुए मानव के नाज़ुक भाव एवं कोमल भावनाओं का नाश हुआ है और उसका स्थान भावहीनता, निस्संगता व तटस्थता ने ले लिया है । ऐसी परिस्थितियों से गुज़रे साहित्यकार रहे हैं - निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर ।

इन दोनों की रचनाओं में जो प्रेम और रागात्मक संबन्धों का चित्रण हुआ है वह इस बदले एवं विघटित माहौल के अनुकूल है ।

दोनों रचनाकारों ने स्त्री-पुरुष प्रेम को अत्यधिक महत्व दिया है । निर्मल वर्मा के अनुसार - "प्रेम एक ऐसा विषय है, जिसमें कभी भी, कोई भी साहित्यकार अपने आपको तटस्थ नहीं रह सका है । हर युग में प्रेम अपने नए सिंगार के साथ चित्रित होता है ।"§1§

एम. टी. वासुदेवन नायर ने भी बताया हैं कि -"प्रेम शुरू से ही साहित्य का विषय रहा है । प्रेमी-प्रेमिकाओं पर कई कृतियाँ लिखी गई हैं । लोग आगे भी प्रेम करते रहेंगे और साहित्यकार इस पर लिखते भी रहेंगे । मनुष्य की स्थाई मनोवृत्तियाँ हमेशा बराबर रही हैं । फरक सिर्फ यह है कि साहित्यकार उसकेलिए नये आयाम ढूँढते हैं ।"§2§

---

§1§ निर्मल वर्मा - सारिका - 2 जून 1978

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - डॉ आरसू सं साक्षात्कार

डॉ. रमेशचन्द्र लवानिया ने निर्मल वर्मा पर लिखा है - "निर्मल वर्मा की कहानियाँ संदर्भों की कहानियाँ हैं । प्रायः यह सभी संदर्भ वैयक्तिक हैं । इसलिए उनमें प्रेम ही महत्वपूर्ण मूल्य बनकर आया है । प्रेम के संदर्भों में उन्होंने अनेक आयामों को खोला है । कहीं प्रेम की समस्या है, कहीं मुक्त-भोग की, कहीं संबन्ध बनाने की ललक है, तो कहीं व्यक्तित्व ही टूट गया है ।"§।§ यह बात एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा संसार पर भी हावी है । वास्तव में साहित्यकार का कच्चा माल मानव जीवन ही है । रोज़-ब-रोज़ की घटनाएँ, अपनी अपनी नज़र में पडते आदमी औरत अद्भुत भाव संवेग, इन सबसे साहित्यकार संबन्ध रखता हैं । इसलिए प्रेम से साहित्यकार कभी भी अछूता नहीं रह सकता । मात्र आकर्षण से उत्पन्न अस्थिर प्रेम से लेकर पति-पत्नियों के विवाहेतर संबन्ध तथा शुद्ध भावात्मक प्रेम तक का चित्रण इन दोनों के रचना संसार में उपलब्ध हैं । आगे हम उसका विस्तृत विश्लेषण करेंगे ।

आपसी आकर्षण का चित्रण

निर्मल वर्मा के "लाल टीन की छत", "एक चिथडा सुख" उपन्यासों में तथा "मायादर्पण", "परिन्दे", "पिक्चर पोस्टुकार्ड" आदि कहानियों में मात्र आकर्षण से उत्पन्न प्रेम देखने को मिलते हैं । "लाल टीन की छत" की काया, जो कौमार से गुज़र रही है - बीरू से एक प्रकार का अनामिक संबन्ध रखता है । इस कारण वह बेचैन रहती है । बीरू उसकी स्मृति में एक सुखद भ्रम की तरह ही उभर कर आता है ।

---

§।§ डॉ. रमेशचन्द्र लवानिया - हिन्दी कहानी में जीवन मूल्य - पृः 232

§2§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृः ।।2

"एक चिथडा सुख" की बिट्टी, डैरी से एक प्रकार का खास संबन्ध रखता है । कई रातों में वे देर-देर तक एक साथ पीते रहते है । इन दोनों को देखकर कभी कभी ऐसा लगता है कि इस दुनिया से इनका कोई वास्ता नहीं है, ये किसी दूसरी दुनिया के प्राणी हैं - "वे चुप बैठे थे, लेकिन लगता नहीं था, वे चुप हैं और उसे यह बहुत विचित्र लगा कि वह उन्हें सुन रहा है, जबकि वे बोल कुछ भी नहीं रहे थे - और तब उसे लगा शायद यह प्रेम है, एक दूसरे को सुन पाना चाहे उसमें कितना ही संदेह और निराशा क्यों न भरी हो ।"§1§
डैरी बेसिन में हाथ धोने जाता हैं, लेकिन हाथ धोना भूलकर वह आईने में बिस्तर की तरफ देखने लगता है, जहाँ बिट्टी बैठी होती है । कई बार वे दोनों एक क्षण उस भावना से पीडित हो उठते, लेकिन वे दोनों खासकर डैरी दूसरे ही क्षण उससे झटककर उठ खडा होता है । क्योंकि उनका पहला ध्येय और प्यार थियेटर है ।

बिट्टी के बालों की लट कभी ढीली होकर डैरी के गालों के छूने लगती और वह उसे छूने देते; ड्राइंग्स पर कुछ समझाती हुई डैरी की अँगुलियाँ कागज़ पर थमे बिट्टी के हाथों पर ठिठक जाती, और बिट्टी उन्हें ठिठक रहने देती, यह नहीं कि उसका उन्हें पता नहीं था, किन्तु यह पता होने का सुख यदि उसे सुख कहा जा सके अभी नहीं आना था ।"§2§

---

§1§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 112
§2§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 54

नित्ती भाई और इरा का संबन्ध भी एक खास प्रकार का है । नित्ती भाई घर परिवारवाला आदमी है । उनके प्रति लगाव के कारण ही इरा लंदन छोडकर भारत आई है ।

"मायादर्पण" का इंजिनीयर बाबू तरन से उम्र में छोटा है । फिर भी इंजिनीयर की स्मृति और उसका सान्निध्य उसमें एक सुखद भ्रम उत्पन्न करता है । इंजिनीयर बाबू की भारी पदचाप सुनकर तरन सोचती है - यह इंजिनीयर बाबू भी अजीब है । इस तरह धम-धम करते आते है कि सारा घर हिल उठता है ।..... उनकी चाल-ढाल और बातचीत से ऐसा जान पडता है, मानो बरसों से यहाँ रहते आये हो । तरन ने हडबडाकर बालों को समेट लिया, दो तीन बार जल्दी जल्दी कंधी से उन्हें कहीं धीरे से दबाया, कहीं हल्के से उठाया ।... माँग के नीचे, माथे के बीचों बीच बिन्दी लगाते हुए तरन का हाथ क्षण भर केलिए ठिठक सा गया ।"§1§ "परिन्दे" में पिक्निक् के संदर्भ में डॉ. मुखर्जी और मिस. वुड का संबन्ध इस आकर्षण का एक और उदाहरण है । मिस. वुड मुखरजी से पूछती है - "पिक्निक् में तुम कहाँ रह गये डॉ ? कहीं दिखाई नहीं दिये ? "दोपहर भर सोता रहा मिस वुड के संग । मेरा मतलब है - मिस. वुड साथ बैठी थी ।"§2§ यों मज़ाकी अंदाज में मुखर्जी जवाब देता है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - मायादर्पण - प्रतिनिधि कहानियाँ - पृ: 59-60

§2§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - मेरी प्रिय कहानियाँ - पृ: 53

"सुबह की सैर" के केनल साहब को उसके बचपन की साथी कट्टो के स्पर्श से शरीर में अजीब सा रोमांच होता है, और यह कट्टो के साथ उनके संबन्ध को ताज़ा कर देता है और साथ ही साथ उनकी स्वर्गीय पत्नी की स्मृति को भी । "पिक्चर पोस्टकार्ड" का परेश, नीलू से आकर्षित है । लेकिन वह उससे कह नहीं पाता है । आखिरी दिन परीक्षा के बाद मिलने पर भी वह कुछ कह नहीं पाया । उसी रात दस बजे वह नीलू को याद करता है,उसकी मनचाही धुन बजाता है और वह पीता भी है । "दहलीज" में किशोरी रूनी, बहन जेली के प्रेमी शम्मी भाई को स्पर्श करना चाहती है । वह सोचती है - "उनका हाथ, जिसकी हर अँगुली के नीचे कोमल सफेद खाल पर लाल लाल से गड्ढे उभर आये थे, छोटे-छोटे चाँद से गड्ढे - उन्हें अगर छुओ, मुठ्ठी में भींचो, हल्के हल्के से सहलाओं, तो कैसा लगेगा ?"§।§ लेकिन शम्मी भाई की नज़रों में रूनी बच्ची है । रूनी तो उसे चाह भरी नज़रों से देखती है । शम्मी भाई पास आकर उसके कँधे पर हाथ रखता है तो उसे लगता है कि - "उसकी गर्दन के नीचे फ्राक के भीतर से उभर उठती हुई कच्ची सी गोलाइयों में मीठी मीठी सी सुईयाँ चुभ रही है ।" दूसरी तरफ जेली भी शम्मी भाई से शरीर के स्तर पर प्रेम की अपेक्षा रखती है । वह सोचती है - "क्या आज शाम कुछ नहीं होगा, क्या ज़िन्दगी में कभी कुछ नहीं होगा ?"§2§

---

§।§ निर्मल वर्मा - दहलीज - जलती झाडी - पृ: 90

§2§ निर्मल वर्मा - दहलीज - जलती झाडी - पृ: 91, 93

एम. टी. की रचनाओं में मात्र आकर्षक का चित्रण

किशोरावस्था में स्त्री पुरुष का आपसी आकर्षण स्वाभाविक है । इस प्रकार के अस्पष्ट लगावों को चित्रित करनेवाले कई प्रसंग एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा संसार में मयस्सर हैं । उनके प्रथम उपन्यास "आधी रात और दिन की रोशनी" रोमांन्टिक उपन्यास है । गोपी के मन में पात्तुम्मा के प्रति इश्क होता है । रोज़ के दर्शन से यह प्रेम में परिणत होता है । गोपी स्वेच्छा से उससे शारीरिक संबन्ध भी रखता है । यानी यह संबन्ध प्रेम का विकास नहीं है । "कालम्" का सेतु अपने क्लास की सबसे सुन्दर लडकी केलिए रात में ढिबरी की मद्धिम रोशनी में नोट तैयार करता है । नोट देते समय उसे जो अनुभूति होती है, वह आकर्षण का परिणाम है । "विलाप यात्रा" के उण्णी के मन में यही इच्छा है कि सुन्दर लडकियों के देखते रहते रेस्तरा से निकल आये । वह चाहता है कि खूबसूरत सुब्बलक्ष्मी उसका सिगरेट पीना देख ले । इसलिए वह जान बूझकर सिगरेट धीरे धीरे पीता है ताकि उसके पास पहुँचने के पहले सिगरेट खतम न हो जाय । इन हरकतों के पीछे भी आकर्षण ही कार्यरत है ।

"नीला कागज़" नामक कहानी का बालन निरा लड़का है । प्रेम एवं स्त्री-पुरुष संबन्ध के संबन्ध में कोई स्पष्ट धारणा उसे नहीं है, फिर भी सहपाठी की प्रेरणा से अपने क्लास की ही लडकी को प्रेम, पत्र लिखता है । "दुःख की तराइयों" के नामक को अपने गाँव में एक प्रेमिका है । वह चित्रकार है और तराइयों में आ गया है । प्रेमिका होने के बावजूद पड़ोसिन ग्लोरिमा से वह आकृष्ट होता है । वह उसके दिल की तह में धुस बैठती है । हर दिन वह उसे देखना चाहता है । न देखे तो वह बुरी तरह अस्वस्थ हो जाता है ।

"पडोसी" नामक कहानी में वासु अपनी पड़ोसिन सरोजिनी से बेहद आकर्षित होता है । उसे लगता है कि सरोजिनी सा सुन्दर कोई अन्य इस दुनिया में नहीं है । उसे अपनाने केलिए वह उसके चारों ओर मँडराता रहता है । वह तराईयों में उसके साथ जाता है । सरोजिनी के पाँव में लगे काँटे को निकालते वक्त वह उसके पाँवों की भंगिमा का आस्वादन करता है । वह सोचता है - अगर ईश्वर प्रत्यक्ष होकर कोई वर माँगने को कहें तो ज़रूर यही माँगूगा - "मुझे सरोजिनी को गले से लगाना है ।"[1] "अज्ञात का अनबना स्मारक" में कथावाचक का कथन -"मेरे मन में तुम्हारे बारे में एक अनकही धारणा है । मेरे नाखूनों में, तडपनेवाला मेरा शरीर".[2]....

"असुरबीज" के गोविन्दन कुट्टी के मन में स्कूल के दिनों से ही राजम्मु के प्रति प्यार था । खेत में जोतते देखकर बैठनेवाले गोविन्दन के पास राजम्मु अकस्मात् आने पर वह घबरा जाता है । वह सोचता है कि लौटते वक्त राजम्मु ज़रूर उससे विदा लेगी । लेकिन ऐसा नहीं होता है । राजम्मु की लापरवाही उसमें कुंजरक्कार की पुत्री नेबीसु के प्रति आकर्षण जगाता है । लेकिन उसे भी वह अपने चित्त की दीवारों में ही ओढ़ लेता है । नेबीसु से रिस्ता तय करने केलिए कोई पट्टाम्बी से आता है, तो उसके मन में पीडा होती है । राजम्मु कोच्चप्पन से शादी करके अपने ही रिस्तेदार बनकर आयेगा यह उसने कदापि नहीं सोचा था । वह किसी भी प्रकार इस यथार्थ से छुटकारा पाना चाहता है ।

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृः 128
§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृः 166

इसलिए जब शेखरन नायर मीनाक्षी को सिर पर रख देता है, तो बिना किसी सोच विचार से स्वीकार करता है । इसप्रकार एम. टी. वासुदेवन - नायर ने कौमार्य एवं युवा मन के कौतूहलों, अभिलाषाओं और राग-विरागों को सपन्नता से चित्रित किया है ।

स्वच्छन्द प्रेम

प्रेम आधुनिक युग में शाश्वत मूल्य नहीं रह गये हैं । वे तो अनुकूल परिवेश से जनित क्षणिक अनुभूति मात्र हैं । आधुनिक मानव ने पाप, नैतिकता और धर्म के वे अंकुश अस्वीकृत कर दिए है जो उसके प्रेम को नियन्त्रित करते थे । उसे प्रेम की प्रत्येक स्थिति अब सच और प्रकृत दिखलाई पडती है । निर्मल वर्मा के "वे दिन" उपन्यास के इन्दी और रायना प्रेम को क्षणिक अनुभव मानते हैं । वे प्रेम को शाश्वत या अनन्त काल तक ले जाना नहीं चाहते । वे एक दूसरे को कम जानते हैं । इनका परिचय केवल तीन दिनों का है । रायना टूरिस्ट है । विवाहिता एवं एक बच्चे की माँ । इन्दी इन्टरप्रेटर है । दोनों एक दूसरे के प्रति सहज ही आकर्षित होते हैं और यह आकर्षण शारीरिक् संबन्ध तक पहुँचता है । युद्धोत्तर जीवन परिस्थितियों में साथ रहते हुए भी एक व्यक्ति दूसरे केलिए इससे ज़्यादा कुछ कर नहीं सकते । इस सत्य से अवगत होकर दो व्यक्ति नैकट्य की ऊष्मा और परस्पर आश्वासन की आत्मीयता आपस में बाँटते हैं ।

"छुट्टियों के बाद" की मार्था छुट्टियों में पुरुषों से न केवल मित्रता करती है, अपितु उन लोगों से शारीरिक संबन्ध भी साबित कर लेती है । इसका खुला चित्रण भी कहानी में हुआ है । रेलवे स्टेशन में "युवक ने उसे जल्दी नहीं छोडा । उसने बहुत कोमल झटके से लड़की का सिर अपने कंधे से हटा लिया, फिर उसके चेहरे को चूमा । हर जगह उसकी आँखों को, बालों को, गर्दन को, गर्दन के नीचे, और उसका ओंठ यात्रा करते हुए मार्था के मुँह पर टिक जाते जैसे वह टर्मिनस हो और वह फिर दुबारा अपनी यात्रा शुरू कर देते है ।"§1§ जीवन की अन्य घटनाओं के ही समान प्रेम भी महत्वहीन परिस्थितियों में शुरू होकर, अर्थहीन कारणों से समाप्त हो जाता है । इसकी ज्वलंत मिसाल है - "तीसरा गवाह" नामक कहानी । सामनेवाले कमरे में अपनी बीमार माँ के साथ रहती नीरजा के प्रति मि. रोहतगी के मन में किसी अनजान क्षण में एक विशेष प्रकार का लगाव उत्पन्न होता है । फिर समान पारिवारिक परिस्थितियाँ एक दूसरे को निकट लाती हैं । लेकिन दोनों के बीच कुछ अनकहा रह जाता है । फिर भी दोनों "कोर्ट मारेज" केलिए कोर्ट रूम पहुँचते है । पर तीसरा गवाह नहीं आया है । नीरजा को वहाँ बिठाकर रोहतगी उसे ढूँढने जाता है । वापस आने पर पता चलता है कि नीरजा वहाँ से जा चुकी है । रोहतगी को पता नहीं कि किस बात से आतंकित होकर वह कोर्ट छोडकर चली गई । घर लौटकर उसने देखा तो नीरजा के घर ताला था । बाद में मकान-मालिक ने बताया वे शाम की गाडी से चले गये ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - बीच बहस में - पृ: 15

"अन्धेरे में" अगम्य गमन के माध्यम से स्वच्छन्द प्रेम का चित्रण हुआ है । नायिका विवाहिता है, अपने पति और पुत्री के साथ शिमला में ठहरी हुई है । वह प्रेमी वीरेन को छोडकर दिल्ली जाना नहीं चाहती है । माँ और वीरेन चाचा के बीच के संबन्ध से बच्ची अवगत है । माँ के बारे में वह सोचती है - माँ सडक के मोड पर खडी थी, किनारे पर लगे तार पर झुकी हुई, उनकी साडी का आँचल हवा से उडकर कन्धे पर आ गिरा था अपने में खोई सी वह अपलक नीचे देख रही थी उतराई के नीचे थी वीरेन चाचा की कोटेज ।"§।§ इस संदर्भ में डॉ. देवकपूरिया ने लिखा है - "यहाँ गुप्त किन्तु स्वच्छन्द प्रेम के माधुर्य का सांकेतिक चित्रण हुआ है । एक ओर एक अत्यन्त सुसंस्कृत महिला की स्नेहमयी संस्कृत मुद्राएँ है, तो दूसरी ओर वीरेन बाबू के क्रिया-कलाप द्वारा नारी §प्रेमिका§ के प्रति पुरुष-प्रेमी की शिष्ट-संयमित संवेदनाओं की भी सूक्ष्म अभिव्यंजना है ।"§2§

"डायरी का खेल" में बिट्टो और बब्बू के बीच लगाव है । बिट्टो की यादें बब्बू के संग-संग चलती हैं । बिट्टो बब्बू से उम्र में बडी है और तपेदिक के मरीज़ भी एक जगह बिट्टो की बात तय हो गयी है । लडकेवालों को उसकी बीमारी का पता चल न जाए, इस उद्देश्य से चाची ने बिट्टो को कानपूर भेज दिया है ।

---

§।§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - अन्धेरे में - पृ: ।65

§2§ डॉ. देव कपूरिया - हिन्दी कहानी में प्रेम एवं सौन्दर्य तत्व का निरूपण - पृ: 362

वापस जाने के पहले वह डायरी में लिखती है "कल मैं चली जाऊँगी" । तब बब्बू लिखता है - "चाची कहती है, तुम स्वस्थ होकर सावन के महीने में लौट आओगी ।" इसके उत्तर में वह लिख देती है - "क्या मालुम ?"[1] अंत में वह जितनी सहजता से आयी थी उतनी ही सहजता से चली भी जाती है । "पिता और प्रेमी" कहानी के युवक युवती से काफी समय के बाद अचानक मिलता है । युवती के साथ एक बच्चा भी है । युवक बच्चे के पिता के बारे में पूछता है, तो वह बताती है कि उनमें से कोई भी इसका पिता नहीं है, जिन्हें वह जानता है । वह बच्चे की उम्र पूछता है, तो वह बताती है कि अगले महीने दस का होगा । दोनों अतीत को याद करते हैं । युवक को याद आता है - "उन दिनों वे हमेशा जल्दी में रहते थे - बार, रेस्तरां और फिर उसका घर । उसके कमरे का दरवाज़ा खटखटाते हुए उसे हमेशा भय लगा रहता था कि वह कहीं किसी दूसरे के साथ न हो ।"[2]

"अमालिया" में प्रेम औपचारिक आचरण बन गया है । देह संबन्ध की ही प्रमुखता है । "पिछली गर्मियों में" का महीप वियन्ना में है । यहाँ एक लडकी उसकी प्रेमिका रही थी । लेकिन वियन्ना में वह बिना शादी ही एक लडकी के साथ जी रहा है । "छुट्टियों के बाद" की मार्था छुट्टियों में पारीस आती है । वहाँ एक लडके से उसका प्यार हो जाता है । छुट्टियों के बाद लडकी के वापस जाते स्टेशन पर कथावाचक उन दोनों की

---

[1] निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 38
[2] निर्मल वर्मा - पिछली गर्मियों में - पृ: 46

भावुक विदाई का साक्षी बनता है । अपने स्टेशन पर उतरने के पहले वह लडकी पर्स में से अपनी सगाई की अँगूठी निकालकर पहन लेती है, जो छुट्टियों के दौरान उसने उतार दी थी । स्टेशन पर उसे लेने आया हुआ उसका मँगेतर उसे बाहों में भरकर चूम लेता है ।
कथावाचक इसका भी साक्षी है । "वीक एण्ड" की नायिका एक ऐसे पुरुष से प्यार करती है, जो विवाहित है और एक पुत्री का पिता भी । दोनों अपने वीक एण्ड साथ गुज़ारते हैं । उस लडकी को अपनी देह पर सबसे ज़्यादा भरोसा है । उसके सहारा पुरुष को कहीं से भी अपनी ओर खींच सकने की क्षमता वह रखती है । "दो घर" के भारतीय, प्रवासी है । एक बार जब वह बुरी तरह बीमार हो गया तो एक नर्स ने जी जान से उसकी सेवा की । बाद में वही उसकी पत्नी बन गई । बावजूद इसके कि कल्कत्ता में उसकी पहली पत्नी और आठ साल का बेटा है ।
"आदमी और लडकी" के चालीस वर्षीय आदमी बीस वर्षीय लडकी से प्रेम करता है । किताबों की लेन-देन के सिल-सिले में उन दोनों का संबन्ध बढ़ता जाता है और वह शारीरिक संबन्ध तक पहुँच जाता है । पत्नी की बीमारी का तार आदमी के पाप-बोध को जाग्रत करता है । लेकिन लडकी के मन में किसी प्रकार की कोई हीनता ग्रान्थि नहीं ।
डॉ. मधुसन्धु के अनुसार निर्मल वर्मा की कहानियों में देह संबन्ध शादी की अनिवार्यता से संपृक्त नहीं है । यह तो स्पष्ट विदेशी प्रभाव का परिणाम है ।§।§

---

§।§ डॉ. मधुसन्धु - कहानीकार - निर्मल वर्मा - पृ: 52

एम. टी. की रचनाओं में स्वच्छन्द प्रेम

एम. टी. वासुदेवन नायर के नायक यौन संबन्ध को प्रेम संबन्ध का हिस्सा मानते हैं । "अर्द्धरात और दिन की रोशनी" का गोपी फात्तिमा से प्रेम करता है और दैहिक संबन्ध भी रखता है । लेकिन जब वह गर्भवती बन जाती है, तो परिवारवालों के दबाव में आकर उसे छोडकर दूसरा विवाह करता है । पाप-बोध के कारण वह मधुशाला एवं कोठी में अपनी जवानी को झुलस देता है । "चार दीवारों में" के अप्पुण्णी और अम्मिणी का संबन्ध भी इसीप्रकार का है । "नागगीत" के अनुष्ठान के दौरान अप्पुण्णी की, अम्मिणी से मुलाकात होती है । प्रथम मिलन में ही अप्पुण्णी के मन में अम्मिणी बस जाती है । अप्पुण्णी के मन में उसके प्रति जो मोह जागरित होता है, वह इन वाक्यों में द्रष्टव्य है - "मेरा जन्म देरी से हुआ । पाँच छे वर्ष पहले जन्म हुआ होता तो अब बडा हो जाता । तो रति की अनजान दुनिया का परिचय अप्पुण्णी अम्मिणी से पाता है । सीढियों के नीचे के अन्धकार में वे लोग अपने उम्र को भूल जाते है । सीढियाँ यहाँ रति-बिंब के रूप में चित्रित है । अप्पुण्णी "वयनाट" केलिए रवाना होते वक्त सीढियों के नीचे जाता है; जैसे कुछ भूल गया हो । अप्पुण्णी के मन की काम पिपासा ही इस आचरण की प्रेरणा है । बाद में जब अप्पुण्णी "वयनाटु" से वापस आता है, तब भी उसके मन में अम्मिणी की स्मृति भर आती है । नागमन्दिर की ओर देखते वक्त एक अर्धनग्न लडकी की याद उसके मन की तह से उभर आती है ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - हवेली - पृ: 8।

एम. टी. वासुदेवन नायर के "कालम" का सेतु और "दूसरी बारी" के भीम भोगासक्ति की चरम सीमा पर पहुँच गए हैं । अपने अकेलेपन से मुक्ति की ललक में सेतु सबसे पहले पडोसी लडकी सुमित्रा को प्यार करता है । अपनी शारीरिक भूख केलिए वह उसे इस्तेमाल करता है । शहर के कॉलज जाने के पहले एक दिन सेतु सुमित्रा को अपने कमरे में बुलाता है और उसे अपनी हविश का शिकार बनाता है । छुट्टियों में जब वह घर लौटता है, यह भी ज़ारी रहता है । फिर सेतु अपने रिस्ते की लडकी तंकमणी के प्रति आकर्षित हो जाता है । "त्रिशूर" तक आते वक्त संयोगवश आने की तरह वह उसके घर पहुँचता है । रात की नीरवता में तंकमणी सेतु के पलंग में पहुँचती है । अमीर बनने के बाद सेतु अपने बोस श्रीनिवासन की पत्नी ललिता का दूसरा पति बन जाता है ।

"दूसरी बारी" के भीम राक्षस कन्या हिडुंबी को अपने मनपसन्द जोडी के रूप में चुनता है । "काम रूप वन से निकलनेवाले मत्त हाथी के मत-पिण्डों जैसे झटके स्तन और किसी चर्बी की बदबू भीम में कामासक्ति जागरित करती है ।"[1] भीम के मन में सदैव हिडुंबी की स्मृतियाँ झुलसती रहती हैं । महाप्रस्थान के समय द्रौपदी के सामने खडे होकर वन की ओर देखते हुए वह सोचता है - उधर कहीं काम के अनबुझे स्फुलिंगों की, रखवाली करती हुंई एक श्याममोहिनी घूमती-फिरती है ।"[2] भीम स्त्री को विशिष्ट मुहूर्तों में पहनने का आभूषण मानता है ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - दूसरी बारी - पृ: 58

[2] एम. टी. वासुदेवन नायर - दूसरी बारी - पृ: 28

"विलापयात्रा" के उण्णिमाधवन भी एम. टी. वासुदेवन नायर के अन्य पात्रों के समान कई लडकियों से प्रेम करता है । वह बेहिचक एक एक को छोडकर दूसरे अवैध संबन्धों में पडता रहता है । लडकियों के "क्या मुझे आप भूल जायेंगे - इस प्रश्न को वह निरर्थक समझता है । उनके विचार में हज़ारों वेश्याएँ सदियों से ऐसे ही सवाल पूछती आयी है ।
इसप्रकार एम. टी. वासुदेवन नायर के पुरुष पात्र प्यार को नैसर्गिक विकार के रूप में नहीं बल्कि अपने व्यक्तित्व एवं पुरुषत्व को मान्यता दिलाने के साधन के रूप में प्यार का इस्तेमाल करते हैं । स्त्री सिर्फ इसका माध्यम है ।

भावात्मक प्रेम

मात्र आकर्षण एवं स्वच्छन्द प्रेम के अतिरिक्त कुछ कहानियों में भावात्मक यानी आदर्शात्मक (प्लेटोनिक) प्रेम का भी चित्रण हुआ है । निर्मल वर्मा के "परिन्दे" की नायिका लतिका गिरीश नेगी के प्रति प्रेम में इतना दृढ एकनिष्ठ है कि गिरीश की मृत्यु के बाद भी वह उसी की यादों के सहारे अपना जीवन गुज़ारती रहती है । वक्त दरअसल दर्द को मिटाता है । लेकिन लतिका मृत्यु के/दर्द को मिटने नहीं देती । "अब वैसा दर्द नहीं होता, सिर्फ उसका याद करती है, जो पहले कभी होता था । तब उसे अपने पर ग्लानि होती है ।

वह फिर जान बूझकर उस घाव को कुरेदती है, जो भरता जा रहा है, खुद-ब-खुद उसकी कोशिशों के बावजूद भरता जा रहा है "(1)

एक बार फिर किसी से जुडने का साहस वह जुटा नहीं पाता है । मि. ह्यूबर्ट उससे प्यार करता है । लेकिन वह सोचती है - "ह्यूबर्ट ही क्यों ? वह क्या किसी को भी चाह सकोगी, उस अनुभूति के संग, जो अब नहीं रही, ज़ो छाया सी उस पर मँडराती रहती है, न स्वयं मिटती है, न उसे मुक्ति दे पाती है ।"(2) इस कहानी में डॉक्टर के माध्यम से इससे विपरीत दृष्टिकोण का भी चित्रण हुआ । वह एक ज़िन्दा-दिल पात्र है, जो किसी भी जिद से चिपके रहना नहीं चाहता है । लतिका अपनी छात्र जूली के प्रेम संबन्ध के बारे में सोचती है - शायद कौन जाने जूली का यह प्रथम परिचय हो उस अनुभूति से, जिसे कोई भी लड़की बडे चाव से संजोकर, संभालकर अपने में छिपाये रखती है । एक अनिर्वचनीय सुख, जो पीडा लिए है, पीडा और सुख को डुबोती उमडती ज्वार की खुमारी..... जो दोनों को अपने में समा लेती है... एक दर्द, जो आनंद से उपजा है और पीडा देता है ।"(3)

"पहाड" भी इसी कोटी में आती कहानी है । इसके पात्र एक दूसरे को बेहद चाहनेवाले दम्पती है,। उनका एक बच्चा भी है ।

---

(1) निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 28
(2) निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 30
(3) निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 18

पहाड पर वे उसी होटल में ठहरते है जब वे अपने "हनीमून" के वक्त ठहरे थे । अब बच्चा उनके साथ है । फिर भी नहीं के बराबर है । पहाड पर वे शाम को घूमने जाते है तो बच्चा बार बार पहाडों के बारे में पूछता रहता है । पिता उसे झल्लाकर डॉटता है । रात को पति पत्नी से कहता भी है - "हमें इसे यहाँ नहीं लाना था ।" "दो घर" कहानी की पत्नी कल्कत्ता में अपने बच्चे के साथ पती की प्रतीक्षा में रहती है । लेकिन पति तो एक विदेशी लडकी के साथ अनव्याहे ही जी रहा है । पति की मृत्यु के बाद भी कल्कत्ता से पत्नी का पत्र आता रहता है । विदेशी लडकी कहती है कि उसके भारतीय पति ने अपने घर जाने की बात कभी भी नहीं की । अगर वह भारत जाना चाहता था तो उसे कोई एतराज नहीं था । वह अपने बच्चों के साथ सुखी है । भारतीय पत्नी के माध्यम से एक ओर कहानीकार ने भारतीय पतिव्रत धर्म की दुहाई दी है और साथ पश्चिम की उदार मानसिकता को भी जाहिर किया है ।

एम. टी. की रचनाओं में भावात्मक प्रेम

एम. टी. के कथा-संसार के अधिकांश स्त्री पात्र भावात्मक प्रेम को महत्व देनेवाली हैं । पर प्रतिकूल सामाजिक एवं पारिवारिक परिस्थितियों के कारण उन्हें अपनी इच्छा के विरुद्ध जीना पडता है । एक अहं कारण एक हद तक, उस समय के केरलीय स्त्रियों की खास तौर पर, आर्थिक क्षेत्र की अस्वतंत्रता रही है । फिर भी "तुषार" की विमला, "हवेली" की पारुकुट्टि और "कालम" की सुमित्रा प्रेम की एकनिष्ठता को बरकरार रखती है । विमला बरसों पहले बिछुडी प्रेमी सुधीर कुमार मिश्रा की प्रतीक्षा में, नैनीदेवी और हिमाच्छादित कुमाऊँ की गोद में,

विरही मन के बिखरे विचारों से लैस काल्पनिक लोल भावों को सँजोती रहती है । वह स्मृतियों में अपना अस्तित्व खोजती है । अपने को प्रतीक्षा के पथ में अकेले छोड चले सुधीर कुमार मिश्रा से प्राप्त अविस्मरणीय पर्व की स्मृति ही उसके जीने की प्रेरणा है । इसलिए अपने प्रेमी के साथ जवानी के मधु पीने निकली रेशमी वाजपेयी के बारे में वह सोचती है - "तुझे मॉफी दे रही हूँ । सदैव याद करने की एक रात तुम्हें मिल रही हो न ? यह लघु उपन्यास वास्तव में निर्मल वर्मा के "परिन्दे" कहानी से तुलनीय है । दोनों की कथावस्तु एवं भावभूमि समान है । "कालम" की सुमित्रा को जब इसका पता चलता है कि उसका प्रेमी बेहद खुदगर्ज़ी है तो वह उस आघात से लौकिक जीवन तक से विरक्त हो जाती है । उसने अपना सर्वस्व सेतु को अर्पित किया था । लेकिन सेतु ने सर्वस्व हासिल करने की ललक में सुमित्रा को भूल गया था । सुमित्रा उसकी स्मृति में अपने को एक नया जीवन प्रदान करने केलिए इच्छुक व्यक्तियों को भी ठुकरा देती है ।

आत्मांश

साहित्यकार के माध्यम का कच्चा माल मानवजीवन ही है । रोज़ मर्रा ज़िन्दगी की घटनाएँ, अपनी नज़र में आता प्रत्येक व्यक्ति, अनुभूत भाव संवेग आदि सबसे साहित्यकार संबन्ध रखता है । साथ ही साथ किसी न किसी रूप में रचनाकार का व्यक्तित्व भी उसमें सम्मिलित होता है । नई कहानी के प्रवर्तकों ने दावा किया था कि भोगा हुआ यथार्थ ही साहित्य को अधिक प्रभावशाली बना देता है ।

लेकिन मात्र स्वानुभवों के बल पर कोई भी साहित्यकार ज़िन्दगी भर रचना नहीं कर सकेगा"[1]। तब उसे आँखों देखी, कानों सुनी बातों पर भी ध्यान देना पडेगा। एम. टी. वासुदेवन नायर ने लिखा हैं - "हमारी संवेदनशीलता परानुभवों से घुलमिल जाती है और वे स्वानुभव के रूप में परिणत होते हैं। यदि लेखक के पास तरसती आँखें और तडपता अन्तर्मन है तो लेखन की सामग्री उसे निरंतर मिलती रहेगी। इसके साथ ही छिपाने का प्रयत्न करने पर भी लेखक का आत्म-संस्पर्शी कृतियों में उभर आयेगा।[2] इसप्रकार यह स्पष्ट है कि कृतिकार का आत्मांश एवं उसका साक्षात्कृत अनुभव दोनों कृतियों में झलकते हैं।

निर्मल वर्मा ने सूचित किया है कि - कहानी में वे एक ऐसे भावजगत में आने की कोशिश करते थे, जहाँ संवेग बाहर की दुनिया के दवाबों से अलग, अपने बिल्कुल कोरे वैयक्तिक जीवन के स्तर पर "क्रिस्टलाइज़" होते हैं। और कहानी एक तरह से उनकेलिए बचपन से "क्रिस्टलाइज़" हुई भावनाओं पर विचार रिफ्लाक्ट करने की एक प्रक्रिया रही थी।[3]

---

[1] कमलेश्वर - नई कहानी की भूमिका - पृ: 14

[2] एम. टी. वासुदेवन नायर - आरसू से बातचीत - पृ:

[3] निर्मल वर्मा - विनोद भरद्वाज से साक्षात्कार - सरिका 1978, जून 9 - पृ: 6

निर्मल वर्मा ने अपनी शिक्षा दीक्षा भारत से ग्रहण की थीं । उनके पिता अंग्रेज़ों के ज़माने के सरकारी अफ़सर थे, तो उन्हें शिमला और दिल्ली में रहना पडता था । लेकिन सन् 1959 से 1972 तक वे विदेशों में घूमते रहे । इसी कारण वहाँ की संस्कृति, रहन-सहन, आचार-विचार सभी को उन्होंने देखा-परखा हैं और उनके बारे में अपने निजी निर्णयों पर पहुँचे भी हैं । वहीं से उन्होंने अपनी ज़्यादातर रचनाओं केलिए सामग्री तैयार की है । इसका अर्थ यह कथापि नहीं कि उन्होंने भारतीय वातावरण में रचनाएँ नहीं की है । उनका प्रथम उपन्यास "वे दिन" का वातावरण पूर्णत: प्राग है और इसमें उन्होंने अपने अनुभवों को वाणी दी है, यानी उनका आत्मांश पूरे उपन्यास में बिखरा पड़ा है ।

उपन्यास "एक चिथडा सुख" के पात्र भारतीय हैं पर विदेशी प्रभाव से युक्त हैं । "एक चिथडा सुख" के संबन्ध में खुद निर्मलजी ने कहा है - "शायद ही किसी उपन्यास ने मुझे इतना संत्रस्त किया हो, जितना "चिथडा सुख" ने । वह मुझसे जोंक की तरह चिपका था और मैं उससे । उपन्यास में हर पात्र का यह "मैं" उसकी अपनी अस्मिता, उसका अपने "होने" का भरोसा ही सबसे ज़्यादा संदिग्ध है । दूसरे शब्दों में कहूँ, तो मैं ने उपन्यास में एक तरह से इस "मैं" को ही टटोलना चाहा है, जिसमें लेखक का "मैं" एक अंकुश भी है, एक आईना भी । लेकिन जज़ नहीं । किस पात्र की ज़िन्दगी सही, सच्ची और प्रामाणिक है, इसके बारे में मैं आखिर तक कुछ तय नहीं कर सकता ।"§1§

---

§1§ निर्मल वर्मा - आत्मकथ्य - आजकल - फरवरी 1980, - पृ: 4

उपन्यास में भी यों लिखा गया हैं - देखते हुए जो हम भूल जाते है, लिखते हुए वह एक बार फिर याद आ जाता है ।"§1§
इसप्रकार रचनाओं में अपने आपको पिरोने की स्वतंत्रता रखने के कारण उनपर कई आरोप लगाये गये है । जैसे - "हमारे जीवन के साधारण या मध्यवर्गीय पात्रों को इस लायक नहीं समझते कि उन्हें साहित्य में लिया जाय । ऐसा उनकेलिए खतरनाक भी है । क्योंकि यदि उन्होंने मामूली पात्रों को कहानी या उपन्यास केलिए चुना तो उनका सारा तिलस्म टूट जायेगा ।"§2§ यह दरअसल कोरा आरोप मात्र है । हर रचनाकार अपने परिचित परिवेश का ही चित्रण करता है । प्रेमचन्द्र ग्रामीण और किसान जीवन के चित्रण में जितने सफल हुए हैं, उतने शहरी पात्रों के चित्रण में नहीं । निर्मल वर्मा मध्यवर्गी तबके में आते है; इसलिए उनकी रचनाओं का कथ्य ज़्यादातर मध्यवर्ग तक सीमित है । सचमुच अनुभव और अनुभूति साहित्य की मूलप्रेरणा होते है । कोई भी रचनाकार इस नींवाधार तथ्य को उल्लंघित नहीं कर सकता ।

एम. टी. वासुदेवन नायर ने "कथाकार की कार्यशाला" में लिखा हैं - "मेरे साहित्यिक जीवन केलिए मैं सबसे अधिक अपने गाँव कूटल्लूर से आभारी हूँ । मेरे गाँव के अनुभव और वहाँ की स्त्री-पुरुषों की कथा ही मेरी ज़्यादातर कहानियों में बिखरे पडे हैं ।"§3§

---

§1§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ:
§2§ निर्मल वर्मा - आजकल - जून 1980 - पृ: 7
§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर -कथाकार की कार्यशाला - पृ: 14

और एक संदर्भ में उन्होंने लिखा हैं - मेरी कहानियाँ, मेरे परिचित किसी व्यक्ति के बारे में हो सकती हैं । कभी कभी एकाधिक व्यक्तियों से कुछ न कुछ अंश लेकर नये व्यक्ति का निर्माण भी करता हूँ । जिसे मैं ने खुद देखा है या जिसके बारे में मैं ने सुना है वह पात्र बनते हैं । मुझ पर अभियोग लगाया जाता है कि मैं अपने सगे संबन्धियों पर गलप रचता हूँ । पात्रों में कभी लेखक का आत्मांश भी घुल मिल जाता है । तभी मैं पूर्ण रूप से तादात्म्य प्राप्त कर सकूँगा ।[1]
उन्होंने कई भेटवार्ताओं के दौरान बताया है कि कुट्टि दीदी - (कुट्टि दीदी), पागल वेलायुधन (अँधेरे की आत्मा), उण्णि (बीज), अनियन (स्नेह के मुख), तुषार के विमला आदि के "प्रोटोटाईप्स" हैं । उन्होंने इसका भी उल्लेख किया है - "सबसे प्रिय पात्र का पक्षपात बताना है, तो वह "एक आदमी" है । मेरी कहानियों में "वह आदमी" एक पात्र है । "उस आदमी" से कभी मैं ज़्यादा प्यार करता हूँ, कभी "उस आदमी" से बहुत नफ़रत करता हूँ । कभी उस पर बहुत तरस उठता हूँ । उस आदमी को मेरी कहानियों में कोई नाम नहीं दिया गया है । "सिर्फ वह आदमी" कहने का साहस मैं ने दिखाया है ।"[2]
उनके इन ब्योरों से स्पष्ट है कि उनकी यह "वह आदमी" उनका स्वत्व ही है ।

एम. टी. ने अपने बचपन एवं जवानी के बारे में जो बातें ज़ाहिर की है, उनसे पता लगता है कि उनकी रचनाओं में इनकी झलकें

---

(1) एम. टी. वासुदेवन नायर - कथाकार की कार्यशाला - पृ: 18
(2) एम. टी. वासुदेवन नायर - कथाकार की कार्यशाला - पृ: 22

ज़रूर उभर आयी है । बच्चों के मन और उनके मनोविज्ञान पर आधारित रचनाओं में एम. टी. ने बचपन में भोगे त्रासद परिस्थितियों के दिलकश चित्रों का अंकन किया है । "सियार का ब्याह", "ओडियन", "एक जन्मदिन की याद में", "तुम्हारी याद में", "पुराकथा", "कनी होती श्रृंखलाएँ", "नीला कागज़", "पटाखे", "अज्ञात की अनबना स्मारक" आदि कहानियाँ एवं "हवेली", "असुरबीज", "कालम", आदि उपन्यास सामन्तवादी संयुक्त परिवार के परिवेश में घटित है । भूख, गरीबी, अपमान से पीडित चरित्र इन रचनाओं में उपस्थित है । विभिन्न रचनाओं में भिन्न भिन्न नामों से प्रत्यक्ष होनेवाला यह पात्र समानता रखता है । इससे स्पष्ट है कि इसमें कहानीकार का आत्मांश ज़रूर है । पिता के होते हुए भी उनके सान्निध्य का अभाव शायद रचनाकार के वैयक्तिक अनुभव का झलक होगा । बच्चों को केन्द्र कथापात्र बनाकर रची गयी कृतियों में पिता की गौर हाज़िरी है । "छोटे-छोटे भूकंप" की जानकीकुट्टि के पिता कोलम्बु में चाय के बाग में काम कर रहे है ।

मलयालम के विख्यात आलोचक वी. एम. विनयकुमार के अनुसार "एम. टी. वासुदेवन नायर से निकटतम संबन्ध रखनेवालों को उनकी रचनाओं में अभिव्यक्त "उपन्यासेतर" अंशों को पहचानने में कोई तकलीफ़ नहीं होगी ।

एम. टी. अपने पारिवारिक परिस्थितियों को थोडा फेर बदल कर कथा का रूप देते हैं । "विलापयात्रा" के बारे में कहे तो

उन्होंने अपनी अस्मिता के दो पहलुओं - अध्यापक एवं रचनाकार - को उण्णिमाधवन में आरोपित किया है । परिवार से संबन्धित आत्मांश को राजन के द्वारा प्रेषित किया है ।§1§ विद्वानों का मत है कि लेखक अपने अस्तित्व के असपन्न पहलुओं को अपने पात्रों के द्वारा पूरा करता है । इस अर्थ में "कालम" का सेतु, जो भौतिक जीवन की सुख-सुविधाओं को प्रतियोगिता बुद्धि से हासिल करता है, सचमुच एम. टी. के अपने व्यक्तित्व का अंश या उसके प्रलंबन ही है ।

अतीत प्रेम

निर्मल वर्मा का कथा संसार मुख्यत: अतीत स्मृतियों का लेखाजोखा है । इसलिए आलोचकों ने उनपर अतीत जीवि होने का आरोप लगाया है । डॉ. नामवर सिंह के अनुसार - निर्मल की अधिकांश कहानियाँ अतीत की स्मृति हैं । कहानी कहनेवाला बरसों बाद जैसे स्मृतियों को दोहराता है । स्मृतियों की भावुकता संभव है, किन्तु समय का अन्तराल तात्कालिकता के आवेग को कम करने केलिए ही निर्मल समय का इतना अन्तराल दे देते हैं ।§2§

---

§1§ वी. एम. विनयकुमार - इन्द्रिय प्रत्यक्षान्डलुडे मेच्चिलपुरड. गल - §संपा§ के. जयकुमार - पृ: 53

§2§ डॉ. नामवरसिंह - नयी कहानियाँ -- पृ: 61

"वे दिन" का इन्टरप्रेटर कहता है - "कभी कभी पीते समय हम अपने अपने घरों की बातें करते थे, लेकिन तब भी हम उसके प्रति नार्मल दृष्टिकोण नहीं रख पाते थे । हम ऐसे वर्षों में घर को छोडकर आये थे - जब बचपन का संबन्ध उससे छूट जाता है, और बडप्पन का नया रिस्ता जुड नहीं पाता । अब घर बहुत अवास्तविक सा जान पडता था, जैसे वह किसी दूसरे की चीज़ हो - दूसरे की स्मृति । उसका मतलब यहाँ कुछ भी नहीं था । पहले जो भी मतलब रहा हो, वह दिन, महीनों, वर्षों के साथ धुंधला पडता गया था । वह अब अर्थहीन था और किंचित हास्यास्पद ।§1§ इन्दी के साथ साथ रायना, फ्रांज, टी. टी. सभी इसी अनुभूति से गुज़रनेवाले हैं ।

निर्मल वर्मा का कथा संसार सचमुच पारिवार की सुविधा एवं पारिवारिक संबन्धों की ऊष्मा से कटे लोगों से भरा पडा है । "एक चिथडा सुख" के बिट्टी, डैरी एवं नित्ती भाई का घर से कोई ताल्लूकात नही है । "दो घर" का कल्कत्ता के घर की स्मृतियों में जीता है । "स्वदेशी के मुस्कान की गर्मी" उसे अपनी देश की याद दिलाती है । विदेश में उसका अपना घर है, पत्नी है, बच्चे हैं । पर वह हमेशा कल्कत्ता जाने केलिए तडपता रहता है । वह कथावाचक से कहता है "वह बहुत सौभाग्यवान हैं, क्योंकि वह किसी भी समय लौट सकता है और लौटना बहुत बडी बात है ।§2§

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 52

§2§ निर्मल वर्मा - बीच बहस में - पृ: 63

नायक की मृत्यु के बाद उसकी पत्नी से मिलने पर कथावाचक की याददाश्त के रूप में इस कहानी का चित्रण हुआ है । "बीच-बहस" के पिताजी अपने अन्तिम क्षणों से गुज़र रहे है । घरवालों ने उसे ज़बरदस्ती अस्पताल में दाखिल किया है । लेकिन उसे किसी भी तरह घर पहुँचना है; क्यों कि घर की यादें उसे सताती हैं । पर कोई भी उसकी बातें नहीं सुनता है ।

"मायादर्पण" के दिवान साहब अतीत की स्मृतियों को टटोलकर हर पल अतीत में जी रहा है । वह फटे-चिथडे-सा दिवान का खिताब ओढ़कर फिरते हैं । "परिन्दे" की लतिका अपने अतीत स्मृति में - गिरीश नेगी के प्रेम में मग्न है - "हयूवर्ट ही क्यों, वह क्या किसी को भी चाह सकोगी, उस अनुभूति के संग §1§ "तीसरा गवाह" के रोहतगी साहब क्लब में स्कोच पीते पीते अपनी कहानी सुनाने रहता है । इसी प्रकार की कहानी है "दोपहर का खाना" । इसमें केणल निहाल चन्द अपनी पत्नी और पुत्र की स्मृतियों में ही अपना शेष जीवन व्यतीत करता है । इसके अलावा 'खेल', 'धागे', 'कुत्ते की मौत', 'अंधेरे में', 'दहलीज़' आदि प्रायः सभी कहानियों में वर्मा ने स्मृतियों को उभार कर रखा है । डॉ. नीलम गुप्ता के अनुसार - यह अतीत की स्मृति "रोमांटिक रिवाइवल" से जुडी हुई है और निर्मल की अधिकांश कहानियाँ अतीत की स्मृति है ।"§2§

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ:31

§2§ डॉ. नीलम गुप्ता - हिन्दी कहानी और रचना सिद्धान्त - पृ: 182

निर्मल वर्मा के पात्रों के समान एम. टी. वासुदेवन नायर के पात्र भी अतीत प्रेमी हैं । ये प्रायः अपने परिवार एवं गाँव को छोडकर अन्य देशों में रहनेवाले हैं । मध्यवर्ग के व्यक्ति अधिकतर इन संवेदनाओं से पीडित होता है । आवश्यकता या मज़बूरी जब लंबे अरसे तक जब कोई भी घर से बाहर रहेगा - तो उसके मन से घर भी बहुत दूर हो जाएगा । एम. टी. वासुदेवन नायर के पात्रों में बार बार संयुक्त परिवार के ऐशो आराम ज़िन्दगी की स्मृति जाग उठती है । गाँव से निकलकर मज़बूरन शहर में बसे कोई भी अमूमन गाँव की भंगिमा एवं भलाई की याद करते हैं और वहाँ लौट जाने के स्वप्न भी देखते है । "कालम" का सेतु, जो आधुनिक मानव का प्रतीक है, अपने पापों से छुटकारा पाने की आशा से गाँव वापस पहुँचता है ।

वह सोचता है कि बरसों बाद सबेरे मन्दिर जाकर प्रार्थना करूँ । बचपन में कभी प्रार्थना की थी । अब फिर जाकर क्या माँगूँ ?

नहीं, कुछ भी नहीं माँगना है । जिसकी माँग है, वह मन में है -

एक बार, एक बार फिर अवसर दीजिए ।[1]

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 413 (1977)

इसप्रकार सब कुछ नष्ट हो जाने से जो व्यर्थता मन को कचोटती है उसके कई पहलू उनकी रचनाओं में उपलब्ध है । "असुरबीज" के गोविन्दन कुट्टी अन्त में ज़रूर वापस आने केलिए ही निकल पडता है । "हवेली" के अप्पुण्णी, "दूसरी बारी" के भीम एवं "तुषार" की विमला में बीच बीच में अतीत स्मृतियों में खो जाते हैं और फिर जाग भी उठते हैं ।

"बीते शुभ दिन" नामक कहानी का प्रारंभ इसप्रकार है -

"बीते शुभ दिन, तुम्हारी चिता में मैं आँसुओं से श्रद्धांजली अर्पित करूँ ।"[1]

"पटाखे", "एक जन्मदिन की याद में" आदि कहानियाँ अतीत की स्मृतियों के रूप में प्रस्तुत की गयी हैं । ये कहानियाँ स्वच्छन्दतावादी प्रवृत्ति के अच्छे उदाहरण है । "षेरलक्" की पृष्ठभूमि यद्यपि "अमरीका का फिलाडेल्फिया" है, तो भी बालू एवं उसकी बहन अपने गाँव को स्मृतियों के माध्यम से उजागरित करते हैं । बालू दोनों वातावरण के गिरफ्त में पड़कर संघर्ष करता रहता है । वास्तव में यह आधुनिक महानगरीय मानव की नियति है ।
"कटुगण्णाव एक यात्रावृत्त" में पत्रकार वेणुगोपाल के मन में श्रीलंका यात्रा के दौरान घर एवं गाँव की घटनाओं की यादें उभर आती हैं । उन्हीं को कथा का रूप दिया गया है । "मूसलधार बारिश के पहले दिन" एवं "कल्पान्तं" में कुछ संकेतों के द्वारा गाँव को उभारा गया है ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ: 3।2

"पुराकथा", "अज्ञात का अनबना मकान" आदि की शुरुआत कथावाचक के अपने गाँव की ओर वापसी से होती है । इसप्रकार एम. टी. वासुदेवन नायर के समूचा कथा संसार अतीत प्रेमियों से भरा हुआ है । "पडोसी" नामक कहानी का कथावाचक सोचता है - बरसों बाद मैं अपना गाँव वापस आ रहा हूँ । यह जगह मुझे बहुत पसन्द है । अब जो है, और जो बीत चुके है, वे सब मेरे मन में किसी कहानी के पात्र के रूप में शेष रह गए हैं । इन पात्रों के मानस में गाँव जो पीछे छूट चुका था मोहपाश की तरह उभरता है,। एम. टी. वासुदेवन नायर ने खुद लिखा भी हैं - "अज्ञात अद्भुतों को अपने गर्भ में समेटे महासमुद्रों की तुलना में मैं अपनी पहचान की निला नदी को बेहद पसन्द करता हूँ ।"§।§ वे प्रत्येक विजय के बाद अपने गाँव कूटल्लूर वापस आते है । यह तो उनकी स्वच्छन्द वृत्ति की मिसाल है । एक स्वच्छन्दतावादी को हमेशा समकालीन जीवन दु:खपूर्ण लगता है । इसलिए वह किसी अतीत के सुनहले स्वप्न में डुबकियाँ लगा रहता है । एम. टी. वासुदेवन नायर एवं निर्मल वर्मा दोनों केलिए यह बात लागू है ।

प्रकृति-प्रेम

स्वच्छन्द यानी रोमांटिक वृत्ति के साहित्यकारों ने मानव के रागात्मक संबन्धों के साथ प्रकृति के प्रति मानव के अटूट रिश्ते एवं प्रेम को भी महत्व दिया है । मानव-प्रकृति के साथ प्रकृति की विशिष्टताओं का भी इन्होंने आकलन किया है ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियों की भूमिका, 1968 - पृ: 9

डॉ. कमल कुमारी जौहर की राय में - "प्रकृति से लगाव के कारण स्वच्छन्दतावादी लेखक ग्रामीण तथा अन्य क्षेत्र का चुनाव प्रायः करता है, जहाँ उसके भोले सरल पात्र, सभ्यता के विषाक्त वातावरण से दूर रहकर प्रकृति के खुले प्रांगण में विचरते हैं । प्रत्येक देश और भाषा के रोमांटिक प्रवृत्ति के साहित्यकारों ने ही प्रकृति-वर्णन को अपूर्व समृद्धता और संपन्नता प्रदान की है ।"§1§ निर्मल वर्मा के कथा संसार में प्रकृति के अनेक मोहक लघु चित्र मिलते है । यह कहीं पात्रों के मनोभूमि के अंग के रूप में आए हैं, तो कहीं स्वतन्त्र भी हैं । "वे दिन" के इन्दी को जब रायना को चूमने की इच्छा होती है तो एकान्त स्थान के साथ नशीली प्रकृति के उपादानों का भी वर्णन किया गया है - तब हवा बीच में आ जाती थी उनके और उस स्वर के बीच एक सफेद सा सूनापन । फिर वह उठता था, अपने आप एक कमज़ोर आग्रह की तरह पास आ जाओ, वरना तुम हवा में उड जाओगी । मुझे लगा वह ठिठुर रही है । मुझे मालूम नहीं था, मेरा चेहरा उसके सिर पर है तब अचानक मेरे होंठ उसके मुँह पर घिसटते गए फिर वे ठहर गए किन्तु इस बार मैं ने कुछ नहीं सुना । मेरे होंठ इस बार उसके मुँह पर आये आधे वाक्य पर जम गए । हम बार बार साँस नहीं ले सके । हवा बहुत थी, लेकिन हम उसके नीचे थे ।"§2§

---

§1§ डॉ. कमल कुमारी जौहरी - हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास - पृः 173

§2§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृः 184

"एक चिथडा सुख" में बिट्टी के घर के छत पर सभी एकत्रित होकर बियर पीते है - तब की प्रकृति का चित्रण पात्रों के उमेग एवं आवेग के अनुकूल है । "सिर्फ एक हल्का सा शोर अदृश्य लहरों सा ऊपर उठता था, नीचे गिरता था, एक सपेन्द तलछत सा छोड जाता था । ऊपर चाँद निकल आया था, बहुत छोटा, एक सपेन्द कटे हुए नाखून सा । अब पहले जैसा घुंघलका नहीं था, न कोई बरदा, न परछाई, न धुन्ध; हर चीज़ अपने मैं अकेली, ठोस खडी थी, गमले, कुर्सियों पर बैठे लोग ।"§1§ "लाल टीन की छत" में काया टहलने निकले वक्त प्रकृति को इस प्रकार चित्रित किया है - "ऊपर आकाश था सपेन्द और नीला - बहुत हल्के छुई-मुई से बादल जो सुबह दिखाई नहीं देते थे, लेकिन दोपहर होते होते बर्फ की चोटियों पर जमा हो जाते थे ।"§2§

डॉ. नामवर सिंह ने निर्मल के पात्रों का प्रकृति के साथ कितना अभिन्न एवं सुदृढ़ संबन्ध है इसकी ओर इशारा करते हुए लिखा है - "निर्मल के मानवीय चरित्र प्राकृतिक वातावरण में किसी पौधे, फूल या बादल की तरह अंकित हेते हैं, गोया वे प्रकृति के ही अंग है ।"§3§

---

§1§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 37

§2§ निर्मल वर्मा - लालटीन की छत - पृ: 97

§3§ डॉ. नामवर सिंह - नयी कहानी की पहली कृति परिन्दे - निर्मल वर्मा - सृजन और चिंतन - §संपा§ डॉ. प्रेम सिंह - पृ: 28

परिन्दे में प्राकृतिक भावों का चित्रण भी पात्रों के मानसिक भावों के अनुसार ही हुआ है - "बाहर छत की ढलान से बारिश के जल की मोटी सी धार बराबर लॉन पर गिर रही थी । मेघाच्छन्न आकाश में सरकते हुए बादलों के पीछे पहाडियों के झुण्ड कभी उभर आते थे, कभी छिप जाते थे, मानो चलती हुई ट्रेन से कोई उन्हें देख रहा हो ।"§1§ इसी प्रकार "मायादर्पण" का प्रारंभ तक प्रकृति वर्णन से होता है । जो पूरी कहानी में व्याप्त वीरानगी एवं मायूसी एवं विघटन का संकेत करता है - छज्जे पर भूरी जलती रेत की परतें जम गयी है । हवा चलने पर अलसाये से धूला कण धूप में झिल मिल से नाचते रहते है । लडाई के दिनों में जो बैरक बनाये गये थे, वे अब उखाडे जा रहे है । रेत और मलबे के दूह ऐसे खडे है, मानों कच्ची सडक के माथे पर गूमडे निकल आये हो ।"§2§ यह वास्तव में तरन की मानसिकता को भी उन्मीलित करता है । कुंअर नारायण ने निर्मल के प्रकृति-मानव संबन्ध को विस्तार से विश्लेषित किया है - "निर्मल की कहानियों/उपन्यास में प्रकृति उनकी भीतरी भावनाओं और विचारों की मानो दिखाई पडनेवाली ऊपरी त्वचा है, अत्यंत नर्म और संवेदनशील । यह शायद नितांत आकस्मिक नहीं कि पहाडी प्रदेशों की जो छवि बार-बार उनकी कहानियों में उभरती है, उसके पीछे कहीं निर्मल के निजी अनुभवों की यादें तो है ही निर्मल की कहानियों का "मूड" प्रकृति के इसी सौम्य और मनीषी रूप को नज़दीक से प्रतिबिंबित करता है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 39

§2§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 61

कभी कभी लगता है निर्मल जगहों को एक खास तरह इस्तेमाल करते है; अपनी सूक्ष्म लगभग पारदर्शिता की हद तक सूक्ष्म भावनाओं को थोडा अपारदर्शी बनाने के लिए, अपनी भावनाओं के बहुत हल्के रंगों को थोडा गाढा करने के लिए । समरसता के बावजूद इसीलिए उनके "लैड स्केप" हर कहानी में नयी तरह आविष्कृत लगते है ।§।§

इस प्रकार निर्मल वर्मा का प्रकृति के प्रति लगाव और उसकी अभिव्यक्ति उनके मानव प्रेम को ही उद्‌घटित करती है और मानव के रागात्मक संबन्धों एवं संबन्ध विघटनों के चित्रण में उन्होंने अनंत प्राकृतिक भावों को उपादान के रूप में इस्तेमाल भी किया है । "एक चिथडा सुख" में नित्ती भाई एवं इरा के बीच का संबन्ध कुछ ठीला पड जाने पर प्राकृतिक भाव देखिए - "रोशनी मन्द हो गई । कोई बादल सूरज पर जा अटका था, और पेड काले पड़ गये थे ।"§2§

कोई भी साहित्यकार प्रकृति को अछूता नहीं छोड सकता । एक स्वच्छन्दतावादी प्रकृति के माध्यम से ही अपनी व्यक्ति सत्ता को भौतिक लोक से जुडाता है । म.म. टी. वासुदेवन नायर द्वारा प्रयुक्त चिह्न प्रतीक या कल्पना, जो भी हो देहाती जीवन अर्थात् प्रकृति के घेराव के हैं ।

---

§।§ कुंअर नारायण - आज और आज से पहले - पृ: 268

§2§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 138

"वी. आर. सुधीश, एम. टी. वासुदेवन नायर से ली भेटवार्ता में इसका उल्लेख यों किया है । एक ग्रामीण कृषक-परिवार में जन्म होने के कारण वे अपने को बुनियादी तौर से कृषक मानता है । इसलिए उनका प्राय: सभी "इमेजस " खेती वातावरण से आया हुआ है ।§1§ वे अपने गाँव की नदी "निला" से रागात्मक संबन्ध रखते है । मलयालम के विख्यात लेखक एवं एम. टी. के अंतरंग मित्र एन. पी. मुहम्मद के अनुसार -"एम. टी. ने कलम चलाई निला पर - उसकी अनसूखी सलिला-धारा के सहस्रों नयनों में बिखरी जलन और दर्द को टटोल कर देखा । हाँ भारतीय वाङ्मय के मानस चित्र में निला नदी को चिरांकित कर दिया । मिससिप्पी की भाँति विश्व-साहित्य के नक्शे में भी वह अपनी जगह कभी बना लेगी ।"§2§

जब कहीं उसकी दृष्टि प्रकृति की ओर जाती है, तब अनजाने ही नदी का उल्लेख देखने को मिलते है - जैसे - "रात्रि के श्रम कणों से स्निग्ध पुलिनों पर नील कुहासे छा गए थे । हल्के ताप से युक्त, धूम से आश्लेषित नदी के कगार पर उसकी लम्बी छाया उसका साथ देने के लिए उसके पीछे रेंग रही थी ।"§3§ उसी प्रकार "हवेली" में "बिना किसी लक्ष्य से चलते-चलते वह नदी किनारे पहुँच गया । यहाँ नदी दूसरी मोड ले रही है । गरमी के मौसम में भी यह मोड पानी से भरपूर है । अब नदी सूखकर पतली हो गई है ।

---

§1§ एम. टी. से वी. आर. सुधीश की बातचीत - "एम. टी. - पृ: 270

§2§ एन. पी. मुहम्मद - मातृभूमि - पृ:

§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 253

अप्पुण्णी एक ऊँचे मोड पर बैठ गया ।

पोखरा की नीरवता डरावनी थी । छोटी-छोटी तरंगें आपस में टकरा कर मिट गयीं ।"§1§

पात्रों के जीवन की गति-विगतियों और उतार-चढाव की इशारा सूखते, भरते और फिर सूखते नदी के द्वारा प्रस्तुत करने में वे विद्धहस्त है । नदी के समान वर्षा और चाँदनी को भी उन्होंने बहुत ही आत्मीयता से चित्रित किया है ।

"कालम" में महीनों बाद छनकर गिरती वर्षा को सेतु की मानसिकता से जोडकर यों चित्रित किया है - "नई नई वर्षा का आरव सुनने पर धीरे धीरे उसका मन संतुलन पाता गया । झाडों के पत्तों तथा घास-पूस से आच्छादित घरों की छतों पर पानी की भारी बूँदें पडने लगीं । हज़ारों लघु कंपनों से मिलकर एक संगीत की सृष्टि होती है । दूर से उमड-घुमडकर आए मेघों की घोर गर्जना सीधे ऊपर आकर बिखर गई तो पुरानी दीवारें काँप उठी ।"§2§

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - हवेली - पृ: 92

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 54

निष्कर्ष

यों निर्मल वर्मा और एम. टी. दोनों की रचनाओं में उनके व्यक्तित्व का अंश, स्त्री-पुरुष प्रेम, प्रकृति का लगाव, अतीत स्मृति, भावना का अतिरेक एवं कल्पना की प्रधानता आदि रोमांटिक प्रवृत्तियाँ नज़र आती है । रूमानी तस्वीरों, बिंबों और जीवन बोध को वे दोनों बडी ही बारीकी से उभार सके हैं । यही कारण है उन दोनों के पात्र प्रतीक्षा करते हुए, देर-तक प्रतीक्षा करते हुए दिखाई पडते है । "लवर्स" नामक कहानी में निर्मल वर्मा का पात्र अपनी प्रेमिका से कहता है - "मुझे यह सोचना अच्छा लगता है कि हम दोनों एक ही शहर में रहते हैं, एक ही शहर के पत्ते अलग-अलग घरों की सीढियों पर बिखर जाते हैं और हवा चलती है, तो उनका शोर उसके और मेरे घर के दरवाज़े को एक संग खटखटाता है" । इसीप्रकार "हवेली" के अप्पुण्णी के मन में अपने से उम्र में बडी अम्मिणी बस जाने पर वह सोचता है - "मेरा जन्म देरी से हुआ, पाँच, छे वर्ष पहले जन्म हुआ होता तो अब बडा हो जाता । यों दोनों की रचनाएँ रूमानी प्रवृत्तियों के अनुकूल है । मलयालम के मशहूर रचनाकार एन. पी. मुहम्मद के अनुसार - "जवानी के ख्वाबों को इतनी ऋजुता से हू-ब-हू वाङ्मय अभिव्यक्ति देनेवाला कोई और साहित्यकार चङ्ङम्पुष़ा (मलयालम की स्वच्छन्दतावादी रूमानी काव्यधारा का शीर्षस्थ कवि) के बाद मलयालम के साहित्य जगत में दिखाई नहीं पडा है ।"(3)

---

(1) निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृः 38

(2) एम. टी. वासुदेवन नायर - हवेली - पृः 48

(3) एन. पी. मुहम्मद - मातृभूमि साप्ताहिक - पृः

लेकिन इस रूमानियत को उन दोनों ही रचनाकारों ने युग यथार्थ की पृष्ठभूमि में खडा होकर ही किया है । दरअसल घिनौने सामाजिक परिवेश में जीवन बिताने के लिए अभिशप्त आधुनिक मनुष्य की यंत्रणाएँ ही एम. टी. की रचनाओं की पृष्ठभूमि है । उनके कुछ पात्र अंतर्मुखी असंतुष्ट एवं अपने ही दुनिया के वासी है, जो व्यक्त दुनिया में अपने को अकेले महसूस करते है । परन्तु उनके जीवन में भी तन्हाई के माहौल में अनजाने प्यार मुहब्बत की बौछार होती है । इस संदर्भ में निर्मल वर्मा के प्रति डॉ. मधु सन्धु का यह कथन बहुत ही उचित है कि "रागात्मकता और तनाव, जीवन्तता और जडता, अस्तित्व चिन्तन और रूमानी भावात्मकता सभी में प्रतीक्षा रची बसी है । उनकी अधिकांश कहानियाँ अतीत की स्मृति है । भावुकता के अतिरेक को कम करने के लिए निर्मल समय का अन्तराल डाल देते है । रूमानी प्रवृत्ति के विपरीत वे कहते है - "लैट द डेड डाई" । निर्मल का यह रूमानियत, चिन्तन एवं अस्तित्व की आधुनिकता मिश्रित रूमानियत है ।

-0-

---

§।१ डॉ. मधुसन्धु - कहानीकार निर्मल वर्मा - पृ: 34

चौथा अध्याय -

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के कथा साहित्य में

अभिव्यक्त सामाजिक चेतना

मनुष्य सामाजिक प्राणी है । वह अपने समय के विभिन्न परिवेश से प्रभावित होता है । यह सर्वविदित है कि मानव जीवन के यथार्थ एवं जीवन्त इतिहास के रूप में साहित्य की संरचना होती है । इसलिए सामाजिक आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियाँ व्यक्ति-मानस पर जो प्रभाव डालती हैं वो अनायास साहित्य में भी आ जाता है । लेकिन युग तथा परिस्थितियाँ बदल जाने से, सभी चीज़ों के साथ संवेदना में भी परिवर्तन आ जाता है । यह स्वाभाविक ही है । प्रेमचन्द युग के रचनाकार जीवन के यथार्थ को समग्रता के साथ चित्रित करते थे । लेकिन आधुनिक युग में जीवन की समग्रता का तो कोई प्रश्न ही नहीं रह गया है जैसे कमलेश्वर ने लिखा है - "साहित्य अब स्वयं एक संपूर्ण उपस्थिति है । वह न जीवन का विश्लेषण है, न समस्याओं का संप्रेषण और न गुह्य रहस्यों का अन्वेषण । वह अपने में सर्वांश या आंशिक वस्तु सत्य या भावसत्य का साक्षात्कार है"।§1§ इससे यह बात स्पष्ट हो जाती है कि साहित्य में सत्यान्वेषण की प्रक्रिया ज़्यादातर यथार्थ बोध तक ही सीमित रहती है ।

निर्मल वर्मा और एम. टी. दोनों ही लेखक के निजी वैयक्तिक अनुभवों के सत्य में विश्वास रखनेवाले हैं । निर्मल वर्मा के अनुसार - कला का वह अर्थ नहीं है, जिसे टाल्स्टाय ने कला में खोजना चाहा था, क्योंकि कला न तो रोटी का विकल्प हो सकती है, और न बुराइयों के विरुद्ध हथियार की तरह काम दे सकती है, फिर भी हम जानते है कि

---

§1§ कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ: 38

सिर्फ कला हमें क्या दे सकती है - वह है - रोशनी का एक ऐसा नाज़ुक हल्का, जो धुँधले शीशे के आर-पार देखने में हमारी मदद करता है । सिर्फ अन्धेरे का चरित्र ही नहीं, अपनी भूख की गहराई भी" ।{1} उन्होंने एक ओर स्पष्ट लिखा है - "कला की कोई सामाजिक प्रासंगिकता नहीं है । क्योंकि इसका सच अपने आप में है, स्वायत्त और असंतुष्ट है और जिसकी अहमियत उसके निज के अस्तित्व की शर्तों पर ही आँकी जा सकती है । ये शर्तें अपना औचित्य सीधे ज़िन्दगी से ही लेती हैं । इससे अलग किन्हीं सामाजिक या दूसरे सिद्धान्तों से नहीं - वही ज़िन्दगी, जो सारी कलाओं में स्थायित होती है" ।{2} एम. टी. ने भी इसी मत से सहमति प्रकट की है । उनके अनुसार - हम लेखक गैलरी की ओर देखकर खेलनेवाले खिलाडियों के समान नहीं हैं । लेखक भी समाज का हिस्सा है । समाज का स्पन्दन हमें मानसिक स्तर पर प्रभावित करता है । पगडंडियों की वेदना भरा दृश्य लेखक देखता है । वह दृश्य लेखक के दिल की दीवारों पर दरारें पैदा करता है । पोखर में पत्थर फेंकने पर छोटी लहरें पैदा होती हैं । ये लहरें किनारे पर खडे तिनकों को भी प्रभावित करता है । साहित्यकार मानवराशि के संकट को देखता है, उसके कराह को दूर खडे होकर भी सुनता है । भीड-भाड से अकेले पडे साहित्यकार के हृदय में तेज़ स्पन्दन निनादित होते है" ।{3} यों ये दोनों ही रचनाकार अपने जीवन के

{1} निर्मल वर्मा - कला का जोखिम - पृ: 37

{2} निर्मल वर्मा - कला का जोखिम - पृ: 32

{3} एम. टी. वासुदेवन नायर - कलाकौमुदी - अंक 378 - पृ: 9

आसपास के परिवेश को अनुभूति पूर्वक व्यक्त करना ही साहित्य का लक्ष्य मानते है । यदि अनुभूति सच्ची और खरी है तो यथार्थ का कोई भी कोना चाहे वह सामान्य आदमी हो, गरीब हो, गाँव का हो, इससे अंतर नहीं पडता है । आगे हम निर्मल वर्मा और सम. टी. की रचनाओं में अभिव्यक्त सामाजिक यथार्थ को विभिन्न आयामों का एक एक करके विश्लेषण करेंगे ।

1. युद्ध एवं रंगभेद

निर्मल वर्मा के कथा-संसार में युद्ध और रंगभेद का यथार्थ चित्रण हुआ है । उनका प्रथम उपन्यास "वे दिन" (1964) युद्ध की पृष्ठभूमि में लिखा गया है । इसमें उन्होंने समूचे युद्धोत्तर यूरोप के संत्रस्त परिवेश को, एक देश की पृष्ठभूमि में कई देशों के पात्रों के माध्यम से चित्रित किया है । इस विदेशी मिट्टी से लेखक का अनुभूत्यात्मक संबन्ध रहा है । इसलिए ही निर्मल वर्मा द्वितीय महा-युद्धोत्तर चेक ज़िन्दगी और उसके माध्यम से संपूर्ण पश्चिमी ज़िन्दगी की पीडा और त्रास को संवेदनात्मक धरातल पर प्रभावी ढंग से उभार सके हैं । नायिका रायना युद्ध से इतना आतंकित है कि वह अपने बेटे का खिलौना बन्दूक तक सहन नहीं कर पाती । युद्ध ने ही उसे अपने पति से बिछुड दिया था । दरअसल युद्ध के बाद जो बच जाते है, उनकी ही बदहालत होती है । उन्हें बाद की भयावह शांति और अकेलापन

ज़िन्दा लाश में तब्दील कर देते है - "लडाई में बहुत लोग मरते है, इसमें कुछ अजीब नहीं है । .....लेकिन कुछ चीज़ें है, जो लडाई के बाद मर जाती है .....शान्ति के उन दिनों में हम उनमें से थे" ।[1] रायना एक और संदर्भ में कहती है - "मैं अब किसी के लिए भी काबिल नहीं रह गयी हूँ - नाट इवन फार लव पीस किल्ड इट, इट किल्ड अस"[2] उपन्यास का और एक पात्र है - फ्रॉस । वह फिल्म निदेशक है । उसकी हर फिल्म युद्ध की पृष्ठभूमि में चित्रित है । इसलिए नकारा जाता है । यों वह क्रियाशील युवक आलस एवं अनमना रह जाता है ।

"चीडों पर चाँदनी" में निर्मल वर्मा ने लिखा है - मैं दो बार लंदन और पारिस जाते हुए जर्मनी के बीच से गुज़रा हूँ । गडे मुर्दे ? वे हर आदमी के भीतर है । जब कभी मध्ययूरोप से गुज़रता हूँ, मुझे उनका ठंठा स्पर्श महसूस होने लगता है, तो मेरे भीतर एक फिज़ूल, बेमानी सी बेचैनी होने लगती है" ।[3] इसी पुस्तक में ही उन्होंने उल्लेख किया है - "बर्लिन की पुरानी इमारतों पर जब कभी निगाह पड़ जाती थी, मुझे वियन्ना और प्राग के पुराने मकान स्मरण हो जाते थे । वैसा ही भयावह भारीपन और वैसी ही सूनी वीरान आँखों सी खिडकियाँ कुछ फासले पर जली हुई ईंटें और टूटी दीवारों का मलबा दिखाई दे जाता है । लडाई को

---

[1] निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 211

[2] निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 211

[3] निर्मल वर्मा - चीडों पर चाँदनी - पृ: 17

खतम हुए मुद्दत बीती, किन्तु उसके मिटे-बुझे घाव जहाँ-तहाँ उभर आते हैं । कहीं कहीं सडक के किनारे ऐसी अजीब इमारतें भी मिलती हैं, जिनकी चारदीवारी साबुत और संपूर्ण है, किन्तु बीच में महज खोखल के अलावा कुछ भी नहीं लगता हैं, जैसे हम किसी पूर्व ऐतिहासिक नगरों के खण्डहरों के बीच रास्ता टटोल रहे हो" ।§1§ इस प्रकार के दृश्य उनकी अन्य रचनाओं में भी मिलते हैं ।

"मायादर्पण" में ऐसा चित्रण है कि लडाई के दिनों में जो बारक बनाये गए थे, उन्हें उखाडे जा रहे हैं । रेत और मलबे के ढूह ऐसे खडे है, मानो-कच्ची सडक के माथे पर गोमडे निकाल आये हो ।§2§ आधी टूटी इमारतें सूखे मग्न कंकालों से खडी हैं । "डेढ इंच ऊपर" में लडाई के अन्तिम दिन का प्रसंग है । पति के घर पहुँचने पर पता चलता है कि "पत्नी को गुस्टपो पुलीस पकडकर ले गई है । क्योंकि उसके पास कुछ गैर कानूनी पर्चियाँ और पैम्फलेट थे । इसके बाद पुलीस पति को भी ले जाती है और उसे बेहोश होने तक पीटती है। "एक शुरुआत" नामक कहानी के यूरोपीय पात्र भारतीय से कहता है - "अभी तक यूरोप से मृत्यु का भय हटा नहीं है, हवा में वही मौत - देयर इज़ डेथ डेथ इन एयर ऑल एराउण्ड" ।§3§

---

§1§ निर्मल वर्मा - चीडों पर चाँदनी - पृ: 22-23

§2§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 26

§3§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 47

गोरे काले के रंगभेद को चित्रित करनेवाली कहानियाँ है - "लंदन की एक रात" एवं "दो घर" । "लंदन की एक रात" के जार्ज को नीग्रो होने के कारण सर्वत्र उपेक्षा झेलनी पडती है । पब में एक गोरी लडकी के साथ नाचने पर वहाँ हंगामा मच जाता है और वहाँ के लोग इन्हें बुरी तरह पीटता है । डॉ. नामवरसिंह ने इस कहानी पर लिखा है - "यह फासिस्ट खतरे की कहानी है । स्वतन्त्र राष्ट्रों की मूल चेतना एवं उनके द्वारा प्रदान की जानेवाली महत्वपूर्ण एवं नवीन भूमिका को वाणी देनेवाली कहानी है ।"§।§
"दो घर" के बच्चे के पिता भारतीय एवं माँ अंग्रेज़ है । स्कूल के बच्चे इसे "जिप्सी" कहकर चिढाते है । टीचर से शिकायत करने पर भी कोई फायदा नहीं होता है ।

इसप्रकार निर्मल वर्मा ने युद्धोपरान्त मरघट की खामोशी सी मायूस ज़िन्दगी जीनेवाले लोगों की त्रासदी एवं रंगभेद से उत्पन्न विडम्बनात्मक ज़िन्दगी को अपनी रचनाओं में सार्थक ढंग से बुलन्द किया है ।

एम. टी. की रचनाओं में युद्ध का ऐसा कोई चित्रण उपलब्ध नहीं है ।

---

§।§ डॉ. नामवरसिंह - नयी कहानी - अप्रैल ।966

बेकारी

निर्मल वर्मा ने "पिक्चर पोस्टुकार्ड", "लन्दन की एक रात", "माया के मर्म" आदि कहानियों में बेकारी की समस्या का चित्रण किया है । "पिक्चर पोस्टुकार्ड" का प्रारंभ समाचार-पत्र के "वेकन्सी कालम" पर पेन्सिल से निशान लगानेवाले सीडी के चित्रण से होता है । उसके भरे "अड्रेस बुक" से पता चलता है कि वह बहुत समय से यह काम करता आ रहा है । इस बार भी उसने प्रार्थना पत्र भेजने का निश्चय किया है । क्योंकि वह "ओवर एज" के कगार पर खडा है । परेश द्वारा भेजी गयी कहानी बिना छपे लौटा दी गयी है । परेश निकी से पूछता है कि - "तुम्हारी बीती हुई उम्र के पाँच साल तुम्हें लौटा दिया जाय तो तुम क्या करोगे ? वह उत्तर देता है - "मैं आरमी में चला जाता । मुझे एक बात का हमेशा दुख रहेगा पिछली लडाई में मै बहुत छोटा था, वरना मैं ज़रूर जाता ।"(1)

"लन्दन की एक रात" की शुरुआत सोडा फाक्टरी के बाहर अपनी बारी की प्रतीक्षा में खडे बेकार युवकों के दृश्य से होता है । वहाँ लंदन के कोने कोने से आये युवक जम गए थे । मैनेजर के बाहर आने पर "सब उसके पास घिसक आते हैं - चिडिया घर के उन मूक निरीह जन्तुओं की भाँति, जो कुछ भी पाने के लालच से यन्त्र-चालित गति में सीखचों के पास घिसटते आते है ।"(2) कथावाचक को ब्योरा

---

(1) निर्मल वर्मा - प्रतिनिधि कहानियाँ - पृ: 179

(2) निर्मल वर्मा - प्रतिनिधि कहानियाँ - पृ: 179

इस प्रकार है - हममें से बहुत से ऐसे थे, जो ट्यूब में तीन या चार शिलिंग का टिकट, लेकर लंदन के सुदूर कोनों से आये थे । हमें सब के हाथों में एक एक थैला था, जिसमें हमने रात की ड्यूटी के कपडे और खाने का सामान बाँध रखा था । हममें से किसी के लिए भी यह विश्वास करना कठिन था कि हमें अगली ट्यूब से वापस लौट जाना होगा । पाइप से निकलता गुनगुना पानी, चाँदनी में झिल-मिलाते कीचड के गढे यहाँ तक कि नाली में पडी एक खाली बोतल हमें काफी अप्रासंगिक और बेतुके से जान पडे चन्द लमहों पहले जो नौकरी न मिलने का दुःख था, अब वह सिर्फ एक बेडौल, विकृत बोझ सा हमारी ढाँगों के इर्द-गिर्द लिपट गया था, जिसे हम दुबारा घर तक घसीट ले जाना होगा ।" विली कहता है - "मेरा एक दोस्त जर्मन गया है । वहाँ नौकरियों की कमी नहीं ।"{1}

"माया के मर्म" का युवक बेकार है । उसे अपना अकेलापन बाँटने के लिए एक बच्ची मिलता है, जिसे उसने एक दिन "कीचड" से बचाया था । उससे बातें करते वक्त वह अपनी बेकारी का दुःख और उम्र का अहसास सब कुछ भूल जाता है । वह सोचता है - "मैं ने पहली बार बेरोज़गारी के इस लम्बे और उदास अर्से पर से दरिद्रता की शाख को बिना दर्द के कुरेद दिया । जो अभाव की रिक्तता अब तक चुभती थी, वह अब भी है, किन्तु जैसे वह अपनी न रहकर पराई बन गई है, जिसे मैं बाहर से तटस्थ भाव से देख सकता हूँ - जिसने अब छुट्टी का सहज भाव अपना लिया है ।"{2}

{1} निर्मल वर्मा - लन्दन की एक रात - पृ: 96

{2} निर्मल वर्मा - लन्दन की एक रात - पृ: 98

"सितम्बर की एक शाम" के बेकार को बेरोज़गारी का एहसास हर वक्त कुरेदता है । अपने घर से बाहर निकलते ही वह यों महसूस करता है - "उसके पाँव पीछे कोई निशान नहीं छोड गए हैं - जैसे - वह अभी जन्मा है । उसकी ज़िन्दगी की गांठ अतीत के किसी प्रेत से नहीं जुडी है, इसलिए वह मुक्त है और घास पर लेटा है ।"§1§ वह सत्ताईस वर्ष का हो गया है । तब भी वह बेकारी से मुक्ति के लिए लड रहा है । वह सोचता है कि "सारी दुनिया उसकी प्रतीक्षा कर रही है कि वह उसे अर्थ दें । यों यहाँ बेकारी एक व्यापक आयाम या रूप ले लेती है ।

"अमालिया" के तीनों युवक - ब्रसीलियन, अरब और इंडियन बेकारी से पीडित हैं । हर सुबह मिनिस्ट्री के दफ्तर में वे लोग प्रतीक्षा करते है । वहाँ के कर्मचारी उन से बता देते हैं कि कागज़ तैयार हो जाने पर उन्हें दूसरे शहर भेज दिया जायेगा । वे उसकी प्रतीक्षा में है । भारतीय युवक सोचता है - "उन दिनों हमें प्रतीक्षा करना अखरता नहीं था । हमारे पास बहुत सा खाली समय, था और वहाँ बैठकर हम बेंसमेंट की सर्दी और दुर्गन्ध से बच जाते थे । यों भी एक जाने-पहचाने दफ्तर में प्रतीक्षा करना हमें अजनबी शहर की गलियों में घूमने की अपेक्षा ज़्यादा सुखद प्रतीत होता था ।"§2§

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 130

§2§ निर्मल वर्मा - पिछली गर्मियों में - पृ: 42

यहाँ निर्मल वर्मा की पैनी दृष्टि भली-भाँति दिखायी पड़ती है । बेकारी एक ऐसी भीषण समस्या है, जिसके दुर्निवार परिणाम का सामना करने के लिए आज का प्रत्येक युवक अभिशप्त है । इस समस्या को निर्मल वर्मा ने विविध संदर्भों में गहराई से चित्रित किया है ।

हालांकि एम. टी. की रचनाओं में बेकारी एक समस्या के रूप में चित्रित नहीं है । फिर भी उससे उद्भूत गरीबी एवं भूख को उन्होंने मार्मिकता के साथ अभिव्यक्ति दी है ।

भूख एवं गरीबी

निर्मल वर्मा की रचनाओं में भूख एवं गरीबी को यद्यपि एक समस्या के रूप में चित्रित नहीं किया गया है, लेकिन उनकी कुछ रचनाओं में जैसे "लंदन की एक रात", "अमालिया" एवं "एक चिथडा सुख" में इसकी गहरी झलक नज़र आती है । "लन्दन की एक रात" का नायक काफी सस्ते दीखनेवाली एक रेस्तर्यां में आलू के चिप्स तथा टोस्ट का आर्डर देता है । तत्काल उसे जान पडता है कि इन चीज़ों का दाम उसकी जेब में पडे पैसों से कहीं अधिक है और वह बहाना बनाकर वहाँ से भाग जाता है । उसीप्रकार "अमालिया" में बेकार युवकों को बीच बीच में अपनी गरीबी का अहसास होता है । इस कहानी का "अरब" युवक कुछ शौकीन है । इसलिए उसे पैसों की ज़रूरत ज़्यादा होती है ।

"एक चिथडा सुख" में भारत की दरिद्रता का उल्लेख हुआ है । बिट्टी कनॉट प्लेस के एक ढाबे में तीन बच्चों को अपना पेट भरने केलिए जूठी तश्तरियों में से बची हुई हड्डियाँ और उनमें चिपके रह गये चावल चुराते हुए देखता है । यह दृश्य और वे छः आँखें बिट्टी को कई दिनों तक हॉन्ट करती हैं । वह चाहती है कि सब कुछ छोडकर गरीबों के बीच चली जाए, लेकिन ऐसा होता नहीं है । यों निर्मल वर्मा की रचनाओं में भूख और गरीबी का उतना मर्मस्पर्शी चित्रण तो नहीं है लेकिन उनका अहसास भर ज़रूर है ।

जैसे पहले ही बता चुके है, एम. टी. का जन्म मातृसत्तात्मक परिवार में हुआ था । यह पारिवारिक व्यवस्था विघटन के कगार पर थी । इसलिए हवेलियों में गरीबी और स्वाभिमान ही बच गए थे । उन्होंने अपने पारिवारिक अनुभवों की पृष्ठभूमि में ही अपनी अधिकांश रचनाएँ की हैं । इसीलिए उनमें स्वाभाविक रूप से भूख और गरीबी का चित्रण हुआ है । "आषाढ" नामक कहानी में भूख का दिलकश चित्रण हुआ है । एक स्कूली बच्चे के खयालों के माध्यम से कहानी लिखी गयी है । उण्णी सबेरे थोडा मॉड पीकर स्कूल रवाना होता है । फिर शाम को घर वापस आने के बाद ही उसे कुछ खाने को मिलता है । घर से स्कूल और वापस घर तक वह पैदल ही चलता है । दुपहर को भूखा रहते, होटल से आती भोजन और पकवानों की गंध उसकी भूख को भडका देता है । लेकिन न खाने की वजह भूख दब जाती है । पर शाम को घर पहुँचते ही तीव्र हो उठती है ।

एक दिन की बात है, खाने का सपना संजोए उण्णी घर पहुँचने पर मीनाक्षी दीदी बताती है कि आज खाना नहीं है, बिल्ली ने सारा चावल चाट लिया है । पर सच्ची बात यह है कि घर में पकाने केलिए एक दाना तक शेष नहीं रह गया है । संध्या के वक्त माँ पडोस से चावल उधार लाती है । इतने में माँ का रिस्तेदार भी आ टपकता है । माँ सारा खाना उसे परोस देती है । उण्णी को माँड ही मिल जाता है । रात देर तक भूख एक मशाल या गर्म हवा बनकर उसके पेट में भडकती रहती है । यों यह कहानी विघटित होते संयुक्त परिवार की गरीबी की सच्ची तस्वीर प्रस्तुत करती है ।

संयुक्त परिवार के माहौल में भूख को ही प्रस्तुत करनेवाली एक अन्य कहानी है - "एक जन्मदिन की याद में" । इस कहानी का प्रमुख पात्र भी सात वर्ष का एक बच्चा है । परिवार में बडे मामा और उसके बेटे की सालगिरह के अवसर में दावत होता है । उसके लालच में आकर वह बच्चा भी अपने जन्म दिन पर माँ से दावत आयोजित करने का ज़िद करता है । माँ उससे कहता है - "क्या तु पागल हो गया है ? हाथी की चाल पर खरगोश भी चलने लगे तो दामू बडे मामा का बेटा है ।"§।§

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ 182

घर की ज़रूरत के हिसाब से बडे मामा ही धान तौल कर देता है । बखार की चाबी उनके हाथ में है । बच्चों के ज़िद करने पर माँ फिर कहती है - "मुन्ना तकदीर अच्छी होनी चाहिए ।" फिर भी वह जन्मदिन के अवसर पर मंदिर में खीर की मनौती के लिए बडे मामा से चार सेर धान अधिक माँगती है । मामा धान देते नहीं इतना ही नहीं माँगने की वजह माँ की बुरी तरह पिटाई भी होती है ।

"तलवार और पायल" नामक कहानी में ईश्वर का प्रतिपुरुष "ओरेकल" बच्चों की भूख की खातिर अपने मान सम्मान को किनारा करते हुए चावल की भीख माँगता है । उसकी पत्नी एक मुसलमान की हविस की शिकार बनकर अपना ईमान बेचती है । खुद पति इसका गवाह बनता है । निस्सहाय हो अपनी गलती कबूल करती हुई पत्नी कहती है - "मेरे बच्चे भूख से बेहाल हो रहे है" । भूख के सामने ईश्वर, अभिमान व मान-सम्मान की कोई हैसियत नहीं है । इस कटु सत्य की बेबाक अभिव्यक्ति इस कहानी में हुई है ।

अन्य सामाजिक समस्याओं का चित्रण

एम. टी. ने अपने प्रथम उपन्यास "हवेली" (1958) में सामंतवादी सामाजिक व्यवस्था की खामियों और उनके परिणामों को प्रतीकात्मक ढंग से चित्रित किया है । विघटित मातृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था की पृष्ठभूमि में इस उपन्यास की रचना हुई है ।

व्यवस्था की दुर्नीतियों की वजह अप्पुण्णी को गहरा सदमा पहुँचा था । इसलिए उनके खिलाफ मन में प्रतिशोध की भावना जम गयी थी । धनवान बनने के बाद उस हवेली को वह खरीदता है, जिससे माँ और बेटे को निकाल दिया गया था । इस खरीद के पीछे प्रतिशोध की भावना ही कार्यरत है । दरअसल सामंतवादी व्यवस्था का पतन एवं व्यक्ति की इच्छाशक्ति की विजय की प्रस्तुति उपन्यास का मूलतत्व रहा है । इसलिए यह उपन्यास एक साथ व्यक्ति और समाज की गाथा बन गया है ।

सन्-1962 में "असुरबीज" का प्रकाशन हुआ था । इसकी पृष्ठभूमि भी नाशोन्मुख नायर जाति की मातृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था है । इसमें गोविन्दन कुट्टी के मानसिक संघर्षों के माध्यम से व्यक्ति-समष्टि के संघर्ष को कारगर ढंग से चित्रित किया गया है । जवानी में ही परिवार की परवरिश का सारा दायित्व उसके कन्धों पर आ जाता है । उसका बडा भाई कुमारन घर-जम्हाई बनकर ससुराल में ही रहता था । रिस्तेदारों से उसे कटु अनुभव ही मिलते हैं । इस कारण वह दोस्त कुञ्ञरक्कार की शरण में जाता है । अपनी बदहालत से विवश होकर कट्टर पंथी हिन्दुओं को चुनौती देने के लिए वह धर्म परिवर्तन तक करता है । यद्यपि कुञ्ञरक्कार को यह अच्छा नहीं लगता है, तो भी अन्य मुसलमान इसका सहर्ष स्वागत करते हैं । बाद में उसे लगता है कि ये सब आचरण निरर्थक है, नकली हैं । अंत में उसे इस यथार्थ का अहसास होता है कि मानव की असलियत धर्म या जाति नहीं है बल्कि इनसानियत है ।

इस उपन्यास में चित्रित हिन्दु-मुसलमान दुश्मनी की ओर इशारा करते हुए मलयालम का मशहूर उपन्यासकार श्री. पेरुंमडवं श्रीधरन ने कहा है - "अब तेक्कुंमुरी गाँव हमारे भारत का प्रतीक बन गया है । मानव धर्म की दुहाई देते हुए जो ज़्यादती और अत्याचार करते है, इसका त्रासद संकेत इस उपन्यास में है । सचमुच गोविन्दन कुट्टी यहाँ मानवीयता का प्रतीक बन गया है ।"§1§ उपन्यास के अंत में गाँव में महामारी फैलने का चित्रण है । विपदग्रस्त गाँववालों की रक्षा करने न कोई हिन्दू आता है और न कोई मुसलमान । केवल एक ही मानव रह जाता है - गोविन्दन कुट्टी । अपने अभिशप्त जन्म एवं पारिवारिक समस्याओं से परेशान गोविन्दन कुट्टी के मन में जो निंदा एवं द्वेष की चिनगारी सुप्त पडी थी, वही बाद में शोले बनकर भटक उठती है । मलयालम के महिला आलोचक लेखा नरेन्द्रन ने संकेत दिया है कि "असुरबीज" में सामाजिक आलोचना एवं आत्माविष्कार का संयोग एक साथ हुआ है ।"§2§ समाज की भलाई केलिए व्यक्ति की इच्छाएँ जिसप्रकार दबायी जाती है, या बलि पर चढाई जाती है, इसका बेबाक चित्रण इस उपन्यास में हुआ है ।

मातृसत्तात्मक व्यवस्था से पितृसत्तात्मकता की ओर

गुज़रते संक्रमण काल में, पुरुष शासन का बागडोर संभालने लगा, तो भी आर्थिक दायित्वों से चतुरतापूर्वक दूर भागने की कोशिश ज़ारी थी ।

---

§1§ श्री. पेरुंमडवं श्रीधरन - ग्रन्थालोकम - पृ: 3।

§2§ डॉ. लेखा नरेन्द्रन - ग्रन्थालोकम - पृ: 32

आर्थिक विषमता, असंतुष्ट दांपत्य एवं स्वाभिमान - तीनों ने मिलकर परिवार की स्त्रियों को असंतुष्ट एवं प्रतिक्रियात्मक बना दिया था। उनके इस असंतुष्ट मन के शासन से परिवार के जवान लोग भी असंतुष्ट हो जाते थे । इस सामाजिक स्थिति का परिच्छेद है - "कालम" ।

इसका नायक सेतु है । उपन्यास की शुरुआत यों चित्रित की गयी है कि सेतु स्कूल फाइनल पास होने के बाद कालेजी शिक्षा का स्वप्न संजोकर बैठा है । उसका पिता दूर "आनमला"§।§ के चाय के बाग में काम कर रहा है । माँ परिवार के संकट लिख भेजती है । पर पिता अपनी शारीरिक कमज़ोरी एवं बागों की विपन्न स्थिति का ब्योरा देते हुए जवाब देता है । स्कूल फाइनल पास पुत्र की खैरियत पूछता तक नहीं है । इस हालत में बडा भाई परमेश्वरन कालेज में भर्ती पाने और तद् जनित खर्च के लिए महीने तीस रुपये देने का वादा करता है । लेकिन इससे पूरी समस्याओं का समाधान नहीं होता । इसलिए जब माँ पिताजी को खत लिखती है, एक कागज़ का टुकडा भी रखता है, जिसमें सिर्फ रुपये की बात कही जाती है । पिता बेटे के सतही रिस्ते - जो मातृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था की खामी रही है की ओर ही यह हरकत संकेत करती है । इस उपन्यास का एक और प्रमुख पात्र है - छोटी माँ, जो सदैव समस्त संसार को कोसती रहती है । उसने अपने पति से संबन्ध विच्छेद कर दिया है । इस पात्र की सृष्टि द्वारा

---

§।§ "आनमला" - केरल के दक्षिण पूर्व सीमा में स्थित पहाडी - प्रदेश

एम. टी. ने पुराने नायर खानदानों में बरकरार स्त्री-पुरुष संबन्धों की अराजकता एवं स्त्री की दमित कामनाओं का ही चित्रण किया है ।

अपने अस्तित्व की चिंता से त्रस्त एवं भडकते एकाकियों से एम. टी. का कथा-संसार भरा पडा है । उनकी विख्यात कहानी "पालतू जानवर" इसका उज्वल उदाहरण है । सामान्य जनता के लिए अनजान "सरकस" के पात्रों के यातनाग्रस्त जीवन को पूरी ईमानदारी के साथ इसमें चित्रित किया गया है । दरअसल सरकस के कलाकार पालतू जानवरों से भी बदतर गुलाम एवं शोषित हैं । इनकी जवानी के जोश को तुच्छ वेतन से खरीदा जाता है और बुढापे में सूखे पत्तों के समान उन्हें छोड भी दिया जाता है । "रिड्. " में घटित दुर्घटना के कारण जानम्मा के जीवन की दिशा ही बदल जाती है । इस कहानी में जानम्मा के खयालों के माध्यम से खेमे में घिरे अर्थहीन ज़िन्दगी एवं स्त्रीत्व के खो गए सपनों का कलात्मक चित्रण हुआ है । कलाकारों का यह शोषण मात्र आर्थिक तल तक सीमित नहीं है, बल्कि शरीर भी उसकी गिरफ्त में आ जाता है ।

मानसिक तौर पर थोडा सा असंतुलित रोगियों के प्रति समाज कैसा रुख अख्तियार करता है, इसकी स्पष्ट अभिव्यक्ति -"छोटे छोटे भूकंप" एवं "अन्धेरे की आत्मा" जैसी कहानियों में हुई है । "छोटे छोटे भूकंप" में मंत्र-तंत्र से जानकी की बीमारी दूर करने की कोशिश बार बार की जाती है । कोई वैज्ञानिक या मनोवैज्ञानिक तरीका अपनाया नहीं जाता ।

ज्योतिषी को बुलाया जाता है और जन्मपत्री की गणना होती है । उनके द्वारा लकीरें खींचकर कौडी फैलाकर श्लोकों का उच्चारण होता है । जानकी कुट्टी जानती है कि उसे ऐसी कोई गंभीर बीमारी नहीं है । उसे बिठाकर जो तांत्रिक आचार किया जाता है, उसके प्रति और अपनी बीमारी के प्रति उसकी यही प्रतिक्रिया है - "रात को नींद नहीं आती ये लोग कहते हैं कि यह एक बीमारी है । लेकिन यह कोई बीमारी विमारी नहीं है । मुझे बिठाकर एक बूढे तांत्रिक ने पूजा पाठ शुरू किया । कई दिये जलाये गये । मुझे कुछ डर सा लगा ।"(1) "अँधेरे की आत्मा" में वेलायुधन को भीड इस तरह आक्रमण करती है जैसे कि वह एक पागल कुत्ता हो । इसलिए वेलायुधन चिल्लाकर कहता है - "मैं पागल हूँ, मुझे बेडियों में बाँध लो ।"(2) वेलायुधन से इसप्रकार कहलवाकर दरअसल एम. टी. यही कहना चाहते है कि सचमुच समाज ही पागल है वेलायुधन नहीं । इसके साथ साथ वे इसकी ओर भी इशारा करते है कि इसप्रकार के बीमारों को मानवीय आचरण, उपचार एवं प्यार की ही ज़रूरत है ।

"होरा" नामक कहानी में स्वातन्त्रोत्तर मध्यवर्गीय जीवन को चित्रित किया गया है । एम. टी. ने खुद यह स्वीकार भी किया है । इसमें कथावाचक सदैव अपने जुडवा भाई के बारे में सोचता रहता है, जो उसके भौतिक जीवन का बाधा बनकर अडिग खडा है । ज़िन्दगी के हर मोड पर वह उसे हरा कर विजयी बनता है ।

---

(1) एम. टी. वासुदेवन नायर - छोटे छोटे भूकंप - पृ: 38

(2) एम. टी. वासुदेवन नायर - छोटे छोटे भूकंप - पृ: 36

अंत में भाई को जीतने के लिए वह आत्महत्या कर लेता है । दरअसल वह आज के औसत भारतीय का प्रतीक है । यहाँ वर्तमान भारतीय परिवेश के प्रति जागरूक सृजनकर्मी के रूप में एम. टी. नज़र आता है ।

"हाथीबंध" नामक कहानी में कबनी नदी के किनारे हाथियों को गिराने बनाये गये गड्ढों में गिरते हाथियों को प्रतीकात्मक ढंग से चित्रित किया गया है । गिराये गए हाथियों के माध्यम से महानगरीय जीवन के धोखे में फँस जाते मानव की खोती अस्मिता एवं आत्मग्लानि को बहुत सुन्दर ढंग से चित्रित किया है । कहानी में नायक शंकरनकुट्टी का विवाह एक बडे घर की लडकी से हुआ है । इस कारण उसे लगता है कि उसका अपना अस्तित्व नष्ट हो गया है । वह अपनी ग्रामीण परम्परा से कट सा गया है । महानगरीय सभ्यता की यांत्रिकता एवं एकरसता का वह शिकार हो गया ।

"सूखे पत्तों से ढकी राहें" कहानी विभिन्न जातियों यानी नायर और नंपूतिरी के वैवाहिक संबन्धों से उद्भूत त्रासदी को चित्रित करती है । मातृसत्तात्मक पारिवारिक व्यवस्था में होनेवाली इस प्रथा के अनुसार इन लोगों को जो बच्चे होते है, उनकी परवरिश की जिम्मेदारी माँ की है । पिता का कोई विशेष दायित्व नहीं । प्रस्तुत कहानी में राघवन की हालत ऐसी ही है । पिता के होते हुए भी वह पितृविहीन बालक के बराबर है ।

ऐसी हालत में वह बडा होता है और नौकरीपेशा बनता है ।
फिर छुट्टियों में एक दिन अचानक वह अपने पिता के घर जाता है ।
उसी दिन वह पिताजी को पहली बार आँख भर देखता है ।
यहाँ पति, पत्नी और पुत्र एक विशेष पारिवारिक जीवन रीति के
संवेदन रहित एवं प्यारहीन परिवेश के शिकार हैं ।

स्वातन्त्रोत्तर मध्यवर्गीय समाज की विडम्बनाओं को
चित्रित करनेवाली कहानी है - "बीज" । "बीज" का उण्णि हर साल
माँ के पिण्डदान के बहाने गाँव पहुँचता है । दरअसल ऐसे रीति-
रिवाज़ों पर उसे तनिक भी विश्वास नहीं है । महानगरीय जीवन के
यांत्रिक दिनचर्या से राहत पाने की इच्छा से ही वह गाँव आता है ।

"जन्नत खुलने का वक्त" में केरल के एक गाँव को प्रतीक के
रूप में अपनाकर स्वातंत्रोत्तर परिस्थितियों में बदले सामाजिक परिवेश
का चित्रण किया गया है । गाँव के रहन-सहन में आये परिवर्तनों -
"गल्फ मणी" के कारण बनते अलीशान मकान, ज़मीन का बढ़ता मूल्य,
खेती के लिए मजूरों का अभाव आदि की ओर भी इशारा किया गया है ।
"सूखी नदी" का चित्रण करते हुए केरल की पारिस्थितिक यानी
प्राकृतिक समस्याओं की ओर भी कहानीकार ने संकेत किया है ।

जमावडा नागरिक जीवन की विशेषता है । आज केरल के
गाँव भी इस जमावट से ग्रस्त है । इसका स्पष्ट उल्लेख "शिलालेख" में है ।

कथा वाचक ने बेटी के साथ पैदल चलते बॉसों के झुरमुट की आड में किसी औरत को गिरते देखा । तडपने की आवाज़ भी सुनाई पडी । तब बच्ची कहती है,

"बाबूजी वह मचल रही है, हम देखेंगे ।

तब पिता कहता है "नहीं, तुम आजा, हम चलते है । मिरगी से कोई गिर पडा होगा ।"

फिर वे पास के ही अपने एक रिस्तेदार के घर चलते हैं और बातों में उलझते रहते है । वहाँ से निकलते वक्त उन्हें पता चलता है कि वह औरत मर गई है । तो पिता से बेटी पूछती है -

"बाबूजी हम डाक्टर को बुला सकते थे न ?"

"किसको"

"एक डाक्टर को" । चलते-चलते अचानक वह रुक गया और उसके मुँह से एक लफ्ज़ निकला - "मैं"- और कोई शब्द बाहर नहीं आया । फिर उसने तीखे स्वर में कहा - "तू छाया में चल । नहीं तो तू अभी छींकने लगेगी । जुकान हो जाएगा ।"(1)

---

(1) एम. टी. वासुदेवन नायर - प्रतिनिधि कहानियाँ - पृ: 102

"षेरलक" आधुनिकोत्तर कहानी के रूप में मूल्यांकित किया गया है । इसमें महानगरों में बसे प्रवासियों की अस्मिता के संघर्षों का चित्रण है । "षेरलक" एक पालतू बिल्ली है, और उसका नाखून ऑपरेशन से निकाल दिया गया है, ताकि महँगे फरनीचरों पर नाखून का निशान न पडे । अपने अकेलेपन से बचने के लिए बहिन उससे बातें करती है । उसके बारे में वह भाई बालू से कहती है - "कभी-कभी अपना स्वर भी सुनना है न ?" यह कथन दरअसल भौतिक जीवन की सुख सुविधाओं में खो जाती आत्मा का क्रन्दन है । बालू को लगता है कि बहिन के अकेलेपन को उभारने के लिए पति ने जानबूझकर एक प्रशिक्षित बिल्ली को पाल पोस रखा है । यानी उसका काम जासूस का है । वह बालू से इस तरह पेश आता है कि वह बहिन के खिलाफ कुछ भी न बोला यानी ऐसा आचरण करता है कि बहिन का बोडी गार्ड हो या प्रशिक्षित जासूस ।

एक बार बालू थाली में चावल परोसकर शेरलक के सामने रखकर कहता है - "खा लेना । भारत, चीन, जापान, थाइलेंड, बर्मा, अमरीका के बाहर कई देश हैं । उधर के लोग यही खाना खाते हैं । बिल्लियाँ भी । भारतीयों के पालतू बिल्लियाँ भी खा सकती है । चावल चावल मिलने के लिए भारत के लोग ईश्वर से प्रार्थना करते हैं । क्या तू जानती है ?"§।§ बालू पत्र लिखने के लिए बहिन का लेटर पाड ले लेता है । तब बिल्ली कागज़ के समीप इस तरह बैठ जाता है कि बालू क्या लिख रहा है, इसकी उत्कण्ठा हो ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - षेरलक - पृ: 38

बालू स्टूल से उतर कर सोफे के कोने पर बैठता है । फिर तिपाई पर रखकर लिखने लगता है तब भी बिल्ली कागज़ की ओर, घूरकर बैठ जाता है । बालू को इसपर गुस्सा आता है और बहुत भद्दा लगता है । यह देखकर बिल्ली उपहास के तौर पर मिमियाता है ।

बिल्ली की जासूसी हरकतों से बालू उससे रूठ जाता है । बिल्ली भी रूठ जाता है । लेकिन कहानी के अंत में ऐसा चित्रण हुआ है कि रूठे बिल्ली को बालू मनाने की कोशिश करता है । भौतिक एवं उपभोग संस्कृति से उद्भूत मानव की जानवरनुमा ज़िन्दगी और संस्कृति की खुली अभिव्यक्ति इसमें हुई है, जो एम. टी. के समाजोन्मुख व्यक्तित्व की ही खुली घोषणा है ।

निष्कर्षतः हम कह सकते हैं कि निर्मल वर्मा ने अपने निजी परिवेश के परिप्रेक्ष्य में ही सामाजिकता का अंकन किया है । उनकी सामाजिकता पर सवाल उठाती हुई कृष्णा सोबती ने लिखा है - "शाम भले कन्सर्ट पर जाओ, बीथोवान सुनो, रविशंकर, अली अखबर खँ । मगर जो तुम्हारी गली में थूथनी उठाए, सुअर घूम रहे हैं, उन्हें भी तो देखो, कुछ गौर करो । तुम्हारी लाजवाब कलम से कोई यथार्थ तो उभरे, कोई एक यथार्थ । ज़िन्दगी से ज़िन्दगी तक जुडा ।"§।§

---

§।§ कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत - पृः 224

पर निर्मल वर्मा ने खुल्लम खुल्ला लिखा हैं - "मैं ने अपनी कहानियों में जिस वर्ग को लिया था, वह कोई हवाई वर्ग नहीं था । वह भारतीय मध्यवर्ग के बुद्धिजीवियों की दुनिया थी । मैं उसे कम यथार्थ नहीं मानता और यह नहीं स्वीकार करता कि एक किसान की दुनिया ज़्यादा यथार्थवादी हैऔर मध्यवर्ग के बुद्धिजीवि की नकली । मैं ने अपने ही अनुभवों के माध्यम से सत्य को जानने की कोशिश की है । मेरेलिए यह अन्य ही इस सृष्टि या समाज के एक रूप का प्रतिनिधित्व करता है । इसलिए मेरी कहानियाँ मेरे और अन्य जगत के संबन्धों से उत्पन्न होती है । मैं यह जानती हूँ कि अपने को बाह्य जगत से अलग करके या बाह्य जगत को अपने से अलग करके कभी कोई कविता या कहानी नहीं लिखी जा सकती ।"(1)

एम. टी. की रचनाओं की सामाजिकता पर उनके लेखन की शुरुआत से ही आलोचकों ने शंका प्रकट की थी । पर एम. टी. के विचार में श्रेष्ठ साहित्य का ताल्लूकात सर्जनात्मकता की ईमानदारी से है । यानी ईमानदारी से ही साहित्य में श्रेष्ठता आ जाती है । उन्होंने अपनी पकड और पहचान के तथ्य व विषय के आधार पर ही लिखा है । उन्होंने कहा भी है - "रचना के क्षण में मैं ही अपने संसार का राजा तथा प्रजा हूँ । मैं अपनेलिए लिखता हूँ । इसका अर्थ है - मैं सबकेलिए लिखता हूँ । सार्वजनिकता की घोषणा के साथ लिखे तो भी वह रचना शायद ही लोगों तक पहुँचेगी । सचमुच श्रेष्ठ में सर्व सन्निहित है ।"(2) एम. टी. की रचनाओं पर श्री. ई. एम. श्रीधरन-

---

(1) निर्मल वर्मा - साक्षात्कार - नवंबर-दिसंबर, 1985

(2) एम. टी. वासुदेवन नायर - कलाकौमुदी-साप्ताहिक अंक-378 - पृ: 10-11

नंपूतिरिप्पाट ने लिखा है - "सामाजिक सुधार को लक्ष्य बनाकर यद्यपि एम. टी. ने रचनाएँ नहीं की है, तो भी सामाजिक सुधार की ज़रूरत पाठकों को सुझाने में उनकी रचनाएँ सहायक बनी है । दक्षिण मलबार के नायर खानदानों के सामाजिक, धार्मिक अधःपतन के विभिन्न पहलुओं को उन्होंने मार्मिक ढंग से चित्रित किया है । उनकी रचनाएँ केरल के नवोत्थान के लिए अमूल्य देन है ।"§।§

निष्कर्ष

सच तो यह है कि इन दोनों लेखकों ने कहीं भी परिवेश से टकराने या उन्हें अपने पक्ष में करने का जद्दोजहद प्रयास नहीं किया । लेकिन ये दोनों ही लेखक समाज के मझधार में रहे है, समाज के ऊँच-नीच को देखा-समझा भी है । बात यह है कि उन दोनों के साहित्य में सामाजिक समस्याओं का उल्लेख ज़रूर है । इसलिए सामाजिकता के आधार पर दोनों का लेखन सूक्ष्म पैठ की माँग करते है । सचमुच दोनों का एक एक शब्द सामाजिक अनुभव की गाढी चाशनी में लिपटा हुआ है ।

-0-

---

§।§ ई. एम. शंकरन नंपूतिरिप्पाट - एम. टी. विशेषांक - पृ: 67

पाँचवाँ अध्याय -

निर्मल वर्मा और एम. टी. के कथा साहित्य की

शिल्पगत विशिष्टताएँ

स्वातन्त्रोत्तर कथा साहित्य ने शिल्प-संबन्धी परंपरागत मानदण्डों को किनारे करके नए शिल्प की तलाश की थी । क्योंकि परम्परागत शिल्प नए कथ्य को अभिव्यक्त करने में अक्षम सिद्ध हो रहा था । आज कथा-साहित्य का उद्देश्य मात्र मनोरंजन नहीं है । इसे आरंभ, मध्य, चरम सीमा, कथानक, चरित्र, वातावरण, उद्देश्य आदि परम्परागत फार्मूले के अन्तर्गत रखकर मूल्यांकित नहीं किया जा सकता है । कमलेश्वर के अनुसार - "इस विभाजन और अंगभंग ने कहानी की आत्मा ही मार दी और उसके स्वतंत्र विकास का जो सिलसिला शुरू हुआ था, वह अवरुद्ध हो गया ।"§।§ रमेश बक्षी ने स्वातंत्रोत्तर कथा साहित्य को सार्थक अभिव्यक्ति का कलात्मक मोड मानते हुए कहा है - "स्वाधीनता के बाद की कहानियाँ आप देखें तो ऐसा लगेगा कि शिल्प के हज़ार मोड उनमें हैं - बारीकी है, बखिया है, कसीदा है, फुलवारी है । यहाँ तक संदेह होने लगा था कि कथ्य की बजाय इनमें शिल्प ही शिल्प है ।"§2§

शिल्प एक तरह से कला का ही हिस्सा है । हर कलाकार अपनी अभिव्यक्ति में कला का एक नवीन दर्शन प्रस्तुत करता है । चाहे वह शिल्पी हो, चित्रकार हो या कथाकार । कथाकार कई माध्यमों से उसका रूप सँवारता है, जिसमें उसकी रचना रीति, भाषा आदि मुख्य योगदान देते है ।

---

§।§ कमलेश्वर - नयी कहानी की भूमिका - पृ: 159

§2§ रमेश बक्षी - आज की कहानी के संदर्भ में - पृ: 107

कथानक ह्रास

आधुनिक साहित्य के कथा सूत्रों में विश्रृंखलता दिखाई पडती है । यानी इसमें क्रमबद्ध घटनाओं का अभाव है । इसका कारण शायद मानसिक जगत का विश्लेषण है । वर्तमान यांत्रिक जीवन की विघटनपूर्ण स्थितियों से प्रेरणा लेनेवाली इन रचनाओं में बिखराव आना स्वाभाविक ही है । एम. टी. से अधिक निर्मल वर्मा की रचनाओं में कथा सूत्रों की विश्रृंखलता देखने को मिलती है । कहानी हो या उपन्यास, स्मृतियों के माध्यम से ही वे आगे बढ़ते है । एक द्रष्टा के रूप में जब लेखक तटस्थ होकर सारी बातों का जिक्र करता है, तो घटना अपने मूल रूप में आती ही नहीं है ।

"वे दिन" का इन्टरप्रेटर, "लाल टीन की छत" की काया, "एक चिथडा सुख" का मुन्नू, "अंतिम अरण्य"का "मैं" आदि सभी रचनाओं के मुख्य पात्र अपनी स्मृतियों में जीनेवाले है । "डायरी का खेल" में बब्बू को बिट्टो के प्रति प्रेम है । इस संदर्भ में स्मृति, मौन, वेदना, संगीत, शून्यता आदि अनुभूतियों को गहराया गया है । "लवर्स" में कहानी सिर्फ इतनी ही है कि निन्दी ने पत्र द्वारा विवाह केलिए "प्रोपोस" किया है और उत्तर पाने केलिए पब आया है । यहाँ उत्तर पाने के पहले और बाद की निन्दी की

मनस्थितियों का चित्रण है - जैसे - "मैं कल रात यही सोचता रहा था कि वह "न" कह देगी, तो क्या होगा ? अब उसने कह दिया है, और मैं वैसा ही हूँ । कुछ भी नहीं बदला । जो बचा रह गया है, वह पहले भी था वह सिर्फ है, जो उम्र के संग बढ़ता जा रहा है बढ़ता जायेगा और खामोश रहेगा ..... बन्द दरवाज़ों की तरह, उड़ते पत्तों और पुराने पत्तों की तरह और मैं जीता रहूँगा ।"[1] "एक शुरुआत" में, लन्दन से प्राग जानेवाले स्टीमर में बैठे दो यात्रियों के मन के खयालों का चित्रण है । रुग्ण व्यक्ति के संत्रास, अजनबीपन, मौन, शून्यता आदि भावों को गहराया भी गया है । जैसे - "देयर इज़ डेथ - डेथ इन एयर आल एराउण्ड ? उसका मौन इतना निजी और व्यक्तिगत सा हो आया कि कुछ भी कहना निरर्थक सा जान पडा ।"[2] "वीक एण्ड" का कथानक मात्र इतना है कि नायिका उस व्यक्ति के साथ वीक एण्ड मनाया करती है, जिसके पास एक बंधी हुई बच्ची तथा छोडी हुई पत्नी है ।

निर्मल वर्मा का लक्ष्य मनस्थितियों का निरूपण, व्यक्तित्व का विश्लेषण एवं परिवेश का स्वरूप अंकन है । इसलिए कथानक को निचोड़कर रखा गया है ।

---

[1] निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: २०

[2] निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 50-51

यद्यपि एम. टी. ने भी स्मृतियों का कारगर इस्तेमाल किया है, तो भी उनकी रचनाओं में इस प्रकार के कथानक ह्रास नज़र नहीं आता है ।

बिंबात्मकता

बिंब आज भी साहित्य में कलात्मक अभिव्यक्ति के मूल उपकरण के रूप में स्वीकृत है । शिल्प के प्रति विशेष सजग होने के कारण निर्मल वर्मा की रचनाओं में बिंबों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है । डॉ. नामवर सिंह के अनुसार नये बिंब वस्तुतः नये कहानीकारों के विकसित इन्द्रियबोध के सूचक हैं और जो कहानीकार जितना ही संवेदनशील है, उसकी कहानी का वातावरण उतना ही मार्मिक और सजीव हुआ है । इस दृष्टि से निर्मल की कहानियाँ सबसे अधिक प्रभावशाली हैं ।"§1§

रूप एवं दृश्यबिंब

कमरे में एक शेल्फ से सिर टिकाकर अनजाने सोयी हुई "वे दिन" की रायना को उन्होंने यों प्रस्तुत किया है - उसके चेहरे पर अब भी जागे रहने का चौंका सा भाव था, जो अक्सर उन लोगों के चेहरे पर रहता है, जो बिना सोने का इरादा किये अनायास सो जाते है"।§2§

---

§1§ नामवर सिंह - कहानी - नई कहानी - पृः 44

§2§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृः 202

एक अन्य स्थान पर रायना के रूप की झलक यों प्रस्तुत की गयी है - "ट्राम का मद्धिम आलोक उसके रूखे बालों पर गिर रहा था । उसका निचला होठ थोडा-सा खुला रह गया था ..... उसने अपने दोनों हाथ भींचकर घुटनों पर रख लिये थे । हर सॉस के साथ कोन्याक की अर्ध मीठी सी गंध उभर चली आती थी ।"§1§ "जलती झाडी" में गिरजे की मीनारों को उन्होंने यों प्रस्तुत किया है - "गोथिक गिरजे की धूमिल मीनारें एक अधखुले स्वप्न की तरह हवा में टँगी है । उन्हें देखकर लगता है, जैसे कि एक विशालकाय पक्षी उडता हुआ अचानक ठिठक गया हो । पहाड और खुले आकाश के बीच उसके दोनों पंख उभर की ओर मुड गये हो, पथरा गये हो, खाली हवा पर ।"§2§ "परिन्दे" कहानी में उन्होंने "शाम" न कहकर उस समय का चित्रण प्रकृति के माध्यम से यों किया है - फिर हवा थमी, पत्ते खामोश हो रहे और घास जो दिन भर काँपती रहती थी, अलसायी सी सोने लगी । दिन भर पीली गर्म धूल हवा को झुलसाती हुई उडी थी । उसने कमरे की खिडकी से नालों में पत्तों का इकट्ठा होते देखा था, धूल में सने टूटे करारे, पत्ते जो सुनसान सडकों पर पागल से भटकते रहते थे ।"§3§ चाँदनी को यों मूर्तरूप दिया गया है - "अजीब भुतैली सी थकी थकी चाँदनी, जो ईंटों की टूटी दीवार पर गिर रही है, उसके बीच फँसे गौरैया के घोसले पर गिर रही है, चाची की छत पर

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 202

§2§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 89

§3§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 122

गिर रही है, बिट्टो के पलंग पर, बिट्टो के सारे शरीर पर, बिट्टो की आँखों, बाहों, बालों की लटों पर गिर रही है - मैं ने देखा ।"§1§ यों निर्मल वर्मा ने कवि सुलभ भावना के सहारे बिंबों को उभार कर रखा है ।

गंध बिंब

निर्मल वर्मा ने शब्दों के द्वारा गंधों को भी मूर्त किया है । जैसे - सिगार की धुएँ की गर्म-गर्म सी गन्ध, पेशाब और पसीने से अलग - देह की एक अलग कुलबुलाती दूधिया गंध, नसों से उडते हुए कपडों से आती हुई एक नशीली सी घेरती हुई गंध आदि । माया का मर्म में उन्होंने लिखा हैं - "सपनों की बासी गंध मानो तितली के रंगीन परों से बूँद-बूँद ढुरक कर विस्मृति की कब्रों पर उगी हुई पीली घास में खो गई है ।"§2§ "वे दिन" में टी. टी. के शराब पीने का वर्णन बहुत ही रोचक है - "हमारे पीने का एक ढंग अलग था । पहले स्लोवोवित्से का एक छोटा-सा घूँट लो, उसे जुबान पर थोडी देर तक घुमाते रहो - उस समय तक जब कि वहाँ एक छोटी सी आग न जलने लगे । जब जुबान के सब पडोसी दाँत, तालू अच्छी तरह अपने को इस आग में सेंक ले, तब उसे गले में ले जाओ और जब गले को भी गर्मी जाए, थोडा सा पानी पीकर उसे छाती के भीतर खींच लो -

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 29

§2§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 35

आग जलाने और बुझाने का यह प्रोसेस एक मिनट से ज़्यादा नहीं चलाना चाहिए ।"§1§ उनकी कहानियों में बियर, वोदका, ब्रॉडी, स्लीवोवित्से, कोन्याक, स्लीवाकियन शराब स्काच भी अपनी गेध के साथ उपस्थित हैं । इन सबके अलावा स्की हवा की बोझिल गंध, सूखते कपडों की गंध, उबलती कॉफी की गंध आदि का सुन्दर चित्रण भी मयस्सर है ।

स्वर बिंब

संगीत से दिलचस्प रहने के कारण ही होगा उनके रचना संसार में स्वर बिंबों का आधिक्य है । पियानो से निकलते संगीत को मूर्त कराते हुए उन्होंने लिखा है - "पीछे बहुत धीमे सिसकता सा पियानो का संगीत स्वर बहता सा जा रहा था - इतना धीमा, इतना दबा सा कि कभी कभी ऐसा लगता मानो बीच में ही कहीं बार-बार टूट जाता है, फिर आता है, और फिर कहीं अँधेरे में भटक जाता है ।"§2§ "परिन्दे" में एक और स्थान पर लतिका को अपनी आवाज़ यों महसूस होती है - "मुझे अपनी आवाज़ उस अकेली निस्तब्ध काटेज में गूँजती सी सुनायी देती है । लगता है, यह कोई अजनबी आवाज़ है, जो मेरी आवाज़ के पीछे-पीछे दौड रही है ।"§3§ "एक चिथडा सुख" का मुन्नु जब डैरी को वर्षों बाद इस तरह याद करता है - किन्तु आज जो चीज़ मुझे सबसे अच्छी तरह याद रह गई है, वह उनकी आवाज़ थी,

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 43

पतली और तीखी - जो पहले क्षणों में काफी चुभती थी, पर यदि उसे देर तक सुनते रहो, तो उसके कोने झर जाते थे और वह सिकुडकर एक लौ की तरह मेरे भीतर अपना रास्ता टटोल लेती थी ।"[1] बिट्टी की आवाज़ को उन्होंने इसप्रकार भी चित्रित किया है - तब उसने वह आवाज़ सुनी साफ़, तीखी । बिट्टी की आवाज़ - साफ और चमकीली चाकू की चमकीली धार की तरह किसी भीतर के मौन और अँधेरे को काटती हुई - स्वयं उसकी अपनी देह को काटती हुई"।[2] यों उनके कथा संसार में संगीत के सुर भी है, जंगल की कभी न चुप रहनेवाली खामोशी है, नीरवता के हल्के-झीने परदे पर सलवटें बिछाती हुई गहरी नींद में डूबी सपनों सी आवाज़ें हैं । इतना ही नहीं, वे ट्राम की खडखडाहट, टेलीफोन की घंटी, पैरों की आवाज़, आदि ध्वनियों को भी इन्होंने मूर्त किया है । उन्होंने नीरवता तक को इस प्रकार ध्वनित किया है -"तब सहसा मुझे वह आवाज़ सुनाई दी थी । आवाज़ भी नहीं, महज एक सरसराहट - बर्फ और धूप में दबी हुई । मुझे हमेशा यह आवाज़ अचानक अकेले में पकड लेती थी, या शायद जब मैं अकेला होता था, तभी उसे सुन पाता था ।"[3] यों निर्मल वर्मा ने रूप दृश्य, गंध एवं स्वर बिंबों को बहुत ही बारीकी से प्रस्तुत किया है ।

---

[1] निर्मल वर्मा, एक चिथडा सुख - पृ: 78

[2] निर्मल वर्मा, एक चिथडा सुख - पृ: 92

[3] निर्मल वर्मा, अंतिम अरण्य - पृ: 122

एम. टी. की रचनाओं में बिंबात्मकता

एम. टी. की अधिकांश रचनाओं का विषय सूक्ष्म और तरल संवेदना का है, जिनका वर्णन भी तरल भाषा की अपेक्षा करता है । इन भावों की अभिव्यक्ति केलिए उन्होंने अनुरूप तकनीकों का प्रयोग भी किया है । एम. टी. के संवेदनशील निगाह से कोई भी चीज़ छूटती नहीं है । वे हर चीज़ को न सिर्फ देख ही लेते हैं, बल्कि उसे हू-ब-हू अपनी रचनाओं में उतार भी देते हैं । उनकी रचनाओं में भी रूप एवं दृश्य, गंध एवं स्वर बिंब देखने को मिलते है ।

रूप एवं दृश्य बिंब

"कालम" में सेतु की स्मृतियों के माध्यम से तंकमणी को यों प्रस्तुत किया गया है - "सफेद ब्लाउस तथा हल्के रंग का लहंगा पहने दुबली लडकी । गले की स्फटिक माला चबाती हुई दिये की द्युतिमान पीली ज्योति में उसके माथे पर भस्म का तिलक दिखाई दिया"[1] "कालम" की नलिनी दीदी का चित्रण इस प्रकार है - "सिन्दूर का बडा तिलक लगाए तथा हाथों में कई चूडियाँ पहने सदा हो हल्ला मचाती चलनेवाली नलिनी दीदी लडकों के समान सदा सीट्टी बजाती थी ।"[2]

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 86, 87

[2] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 82

इसीप्रकार माधवन मामा को देखिए - "माधवन मामा साँवले रंग के थे । नारियल के रेशे के समान इधर उधर बिखरे पडे बालों से खोपडी का श्वेत-रंग प्रकट हो जाता था । वे विरले ही हँसते थे । बात करते वक्त बडे चौडे दाँतों के बीच से हवा की सी ध्वनि निकलती थी ।"§1§ "काला चाँदनी" नामक कहानी में एक दृश्य को यों चित्रित किया है - "धुंधली पडी दीवारों पर इधर-उधर लटके शीशे के पुराने चित्र ही सबसे पहले उसकी नज़रों में आए । इधर-उधर छेद पडे फटे सैटिन के बने खिडकियों के पर्दे, मैली दरी । बिछे बिस्तर पर नाटे पलंग पर बैठे, तो पुराने स्प्रिंग कराह उठे ।"§2§ यहाँ घर की स्थिति को एक मूर्त दृश्य से उन्होंने सजीव कर दिया है ।

संध्यकालीन शोभा को उन्होंने यों चित्रित किया है - सांध्यकालीन धूप में केरवृक्षों के बीच सफेद बालू चमक रहे थे । उत्तरी सीमा के आम्रवृक्ष के तले, कौए बिखर पडे फलों पर टूट पड थे । नारियल के पत्तों से छनकर मंद पवन बह रहा था । दूर समुद्र का अव्यक्त गर्जन सुनाई दे रहा था । अमर बरामदे की घडी बज उठी तो ध्यान आया कि छह बजे है ।§3§

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 59

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ: 110

§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 109

गंध बिंब

एम. टी. के कथा संसार में प्रत्येक वस्तु की अपनी गंध है । जैसे गीली मिट्टी, बकरी का दूध, चन्दन के साबुन, कपूर जलाकर बनायी विभूति आदि । इन सबके अलावा और भी कई गंध उनकी रचनाओं में हैं । "कालम" में सेतु अपने रिस्तेदार के घर रात बिताते वक्त महसूस करता है - "अंधेरे से भरे इस कमरे में भीगे कपडा तथा डेटोल की गन्ध भरी हुई है ।"§।§ यहाँ वे दोनों गन्धों को अलग अलग पहचानता है । अपनी गरीबी को स्पष्ट करते हुए वह सोचता है - "पाँच रुपये के शुभ्र नोट की सुगन्ध आज स्मृति मात्र रह गयी है ।"§2§ "कालम" में सुमित्रा को पास पाकर सेतु साबुन के टिकिए से धोए ब्लाऊस और लुंगी की हल्की गंध महसूस करता है । "मृत्यु" नामक कहानी में मृत्यु के वातावरण को बिंबों के माध्यम से यों चित्रित किया है - "उसने सोचा कि मृत्यु की गंध वातावरण में तैर रही होगी ।..... नहीं । सिसकियों और चीख चिलहट्टों की आवाज़ नहीं । बरामदे के पास छाया में जा खडा हुआ तो युवक ने कान लगाया । कोई रामायण पढ़ रहा है । अगर बत्तियों की तीखी गंध ....." ।§3§

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 83

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: ।3

§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ: 9।

स्वर बिंब

एम. टी. ने अपने विख्यात उपन्यास "कालम" का प्रारंभ तक इसप्रकार किया है - "नई वर्षा से नवजीवन पाकर दूब पर सोए पडे झींगुर पैरों की आहट सुन, भीगे खेतों की मेडों के ऊपर चौक्कर फुदकने लगे । पाँवों से टकराकर उछलते समय वे आवाज़ करते । वह आवाज़ किसी की याद दिला रही थी ।" बाद में वे लिखते हैं - खेत की मेडों को पार कर गाँव की राह पर आते ही नदी की झरझराहट नज़दीक सुनाई देने लगी । झाडी से उलझा रखी नौका के तले अपना राग आलापनेवाले प्रवाह की गुदगुदी सुनकर हम रुक गए । अंधकार की नदी, धुंधलके की अनंतता । उस पार लौहपुल को कंपित करते हुए गाडी के पहिए उड़क रहे थे ।" खेत की मेडों पर इधर-उधर उछल कूद करते झींगुरों की बारीक आवाज़ तब सहसा स्मृति में आई - नीले फूलोंवाले ब्लाऊस के प्रेस बटनों के टूटने के जैसे ।"[1] एक स्थान पर हवा की आवाज़ को उन्होंने यों चित्रित किया है - "सुपारी के पौधों के बीच से सीटियाँ बजाती आती हवा में वर्षा की हल्की मर्मर ध्वनि निहित थी ।"[2] उसीप्रकार "दूर मंदिर से सुनाई पडनेवाला घोष हृदय की धडकन के समान बुलंद होता जा रहा था ।"[3]

यों एम. टी. का रचना संसार जीवन्त बिंबों से भरा पडा है । एम. टी. की कलापारखी दृष्टि हर चीज़ की तह में जाकर उसकी विशिष्टता को ऊपर खींच ले आती है और उसे मूर्त रूप देता है, चाहे वह भाव, गंध या दृश्य हो ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 1-2
[2] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 29
[3] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 91

प्रतीकात्मकता

रचना में कलात्मक संयम लाने की दृष्टि से प्रतीकात्मकता आज साहित्य का एक अभिन्न अंग बन गया है । निर्मल वर्मा का, किसी भी संवेदना को चित्रित करने का, अपना अनूठा ढंग है । उनका प्रथम कहानी का शीर्षक "परिन्दे" एक प्रतीक है । यह मानव की नश्वरता का प्रतीक है । यह इस कहानी के मुख्य पात्रों - लतिका, डाक्टर और मि. ह्यूवर्ट पर लागू होने के साथ साथ मानव नियति को भी संकेतित करता है । डॉ. कृष्ण भावुक के शब्दों में - "परिन्दे मरणधर्मा मनुष्यों के प्रतीक हैं और कहानी के अन्त में बुझता हुआ लैम्प मरणासन्न ह्यूवर्ट का संकेत देता है" ।§1§

"वे दिन" की मारिया दो सालों से वीसा की कोशिश कर रही है । क्योंकि वह फ्रांस के साथ जाना चाहती है । लेकिन फ्रांस अब और ज़्यादा इन्तज़ार नहीं कर सकता । मारिया के माध्यम से लेखक ने मनुष्य की नियति को यों प्रस्तुत किया है - "यह शायद वही सीमा थी, जिसके आगे कोई किसी की मदद नहीं कर सकता था । लगता था, कोई बाहर का फन्दा है, जिसकी सब गाँठें, सब सिरे दूसरे के हाथों में हैं जिन्हें हम नहीं देख सकते ।"§2§

---

§1§ डॉ. कृष्ण भावुक - हिन्दी कहानी दो दशक की यात्रा - पृ: 258

§2§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 67

"लवर्स" कहानी में प्रेमियों का मिलन स्थान हुमायूं का मकबरा है, जो प्रेम की मृत्यु का प्रतीक है । "मायादर्पण" में इंजिनीयर बाबू सीढ़ियाँ उतरते हैं तो सारा घर हिल जाता है । यहाँ घर हिलना तरन के मन का हिलना है । उसीप्रकार तरन के आस-पास के वातावरण यों चित्रित है - "दूर दूर तक रेतीली ज़मीन फैली थी । अस्त होने से पहले सूरज की पीली किरणें कच्चे सोने की सी रेत पर बिखर गई थीं । नई सडक के दोनों ओर रोड़ी पत्थरों के ढेर छोटे-छोटे पिरमिड जैसे खडे थे" ।§1§

"कुत्ते की मौत" में मृत्यु का प्रतीक इस तरह आया है - पैताने पर सिर्फ दो पाँव उठे रहते हैं, जैसे किसी ने दो ईंटें उलटी खडी कर दी हो । चादर के भीतर लगता है, जैसे ये पाँव उनके अपने न हो । सपेन्द चादर में अपनी देह को देखते हैं - नन्हें - सांस रोके । खुद अपने को सपेन्द चादर में लिपटे हुए देखना साँस रुक जाती है देखो एक दिन इसी तरह" ।§2§ "इतनी बडी - आकांक्षा" नामक कहानी में नायक नायिका के मृत संबन्ध जो उम्र से जीवन्त दिखाई देता है, वास्तव में मृत है-को यों प्रस्तुत किया गया है - "मैं एक ठंडी कब्र के नीचे लेटी हूँ उपर पत्थर है, घास है और हवा है" ।§3§ यों निर्मल वर्मा के रचना संसार में प्रतीकों का प्रयोग शिल्पगत एवं भाषागत सौन्दर्य का अभिवर्द्धन करता है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 37

§2§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृ: 60

§3§ निर्मल वर्मा - पिछली गर्मियों में - 113

एम. टी. की रचनाओं में प्रतीकात्मकता

एम. टी. ने सामयिक जीवन की जटिलताओं एवं मन की गुत्थियों को व्यक्त करने केलिए विविध प्रकार के प्रतीकों का सहारा लिया है । प्रतीक विधान से शिल्प निखर उठा है और व्यंजना-शक्ति का विस्तार भी हुआ है । प्रतीकों द्वारा अन्तर्भाव एवं मनःस्थिति को आसानी से व्यक्त किया जा सकता है । मलयालम के मशहूर आलोचक एम. के. सानु के अनुसार "एम. टी. की शैली में प्रतीकात्मकता का बहुत ही सचेत पुट दिखाई पडता है" ।§1§ "कालम", "तुषार", "विलापयात्रा", "मृत्यु", "बन्धनं", "हाथी-बंध", "अंधेरे की आत्मा", "पालतू जानवर" आदि रचनाओं में प्रतीकों का सफल प्रयोग दर्शनीय है ।

"कालम" शीर्षक ही जमे हुए जीवन का प्रतीकवत रूप है । काल या समय अनंत व असीम है । इसलिए समझ से परे भी है । "नदी" और "नाव" के प्रतीक उनके प्रायः सभी रचनाओं में मिलते हैं । कॉलेजी शिक्षा केलिए छात्रावास जाते वक्त सेतु देखता है - "नई वर्षा से नवजीवन पाकर दूब पर सोए पडे झींगुर, पैरों की आहट सुन भीगे खेतों की मेडों के पर फुदकते है । पाँवों से टकराकर उछलते समय वे आवाज़ भी करते हैं ।"§2§ कॉलेजी शिक्षा के बाद पालक्काटु से आते वक्त वही नदी का रूप इस प्रकार है - "नदी दूर तक सूखी पडी थी । प्रवाह रुकने से गंदा पानी इधर-उधर गड्ढों में भरा पड़ा था" ।§3§

---

§1§ प्रो. एम. के. सानु - एम. टी. के सर्गप्रपंचं - पृः 103

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृः 7

§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर -कालम - पृः 143

घर छोडकर जाते वक्त घाट पर नौके के अभाव में सेतु सोचता है - "जितनी भी यात्राओं का स्मरण किया जा सकता है, उन सबके प्रारंभ में नौका उस पार ही रही । रेलवे स्टेशन पर उतरकर दोपहर की धूप में चलते हुए उस पार पहुँचने पर तो नौका घाट के खूँटे में विश्राम ले रही होगी । यह क्या मात्र मेरा अनुभव है ? पूरब की तरफ जाती गाडी की प्रतीक्षा करते कुली कहता है - "पूरब की तरफ की गाडी का ही ब्लॉक हुआ है । थैला लिए, भीड से टकराकर चढने की तैयारी में खडा था कि गाडी आकर ठहर जाती है - दूसरी पटरी पर । मेरी नाव उस पार है । मेरी गाडी दूसरी पटरी पर"..[1] इन प्रतीकों से सेतु के मन की घोर निराशा, और व्यर्थता जाहिर होती है । सेतु के सख्त मन के समान ही अन्त में नदी भी सूखा पडा नज़र आता है । इससे सेतु के यन्त्रवत् नागरिक जीवन एवं उसकी निरर्थकता व्यक्त होती है । प्रो. एम. के. सानु के अनुसार "कालम" की नदियाँ, नौका एवं बालू तट ही नहीं, कुछ पात्र भी प्रतीक हैं । जैसे - सुमित्रा भूमि, तंकमणी एवं ललिता श्रीनिवासन कृत्रिम आडंबर के प्रतीक हैं" ।[2]

"तुषार" में सभी जैविक आर्द्रताओं के बगैर कुमयूण पहाडियों के माध्यम से विमला की मानसिकता को उन्मीलित किया गया । विमला की मानसिकता को मूर्त रूप देने में यह प्रतीक सफल बन गया है । "झील" दरअसल विमला के गतिहीन जीवन का ही प्रतीक है ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 146

[2] प्रो. एम. के. सानु - कालम - एक अध्ययन - पृ: 104

"मृत्यु" नामक कहानी में रेलवे लाइन यदि जीवन का प्रतीक है, तो उसपर चलनेवाली गाडी मृत्यु का प्रतीक है । इस कहानी में यमदूत के बारे में यों कहा गया है - "दाढीवाले चेहरे पर तभी कहीं से रोशनी पडी थी । उस चेहरे पर शांत चैतन्य छाया था । काले और सफेद बाल उग आये थे । आँखों में परमहंस की सी हँसी थी" ।[1]

"अभय खोजकर फिर से" में जर्जर किराये घर की तुलना नश्वर मानव जीवन एवं शरीर से की गयी है । कहानी का कारिन्दा कहता है - "खाली करना ही ठीक होगा । अगर मालिक ऐसा चाहता है तो और क्या किया जा सकता है ? मालिक की बात कोई ठुकरा नहीं सकता" ।[2] यहाँ मृत्यु की अनिवार्यता एवं आकस्मिकता की ओर ही संकेत हैं । उनका एक और कहानी है "बन्धनं" यानी स्वतन्त्रता का निषेध । पत्नी और प्रेमिका की गिरफ्त में पडे व्यक्ति का चित्रण इस कहानी में हुआ है । घर में सीसर नामी कुत्ता है जो हमेशा उसे शंका की दृष्टि से देखता रहता है । उसे लगता है कि उस घर में मुझे ठीक समझनेवाला सीसर ही होगा । "सान्ध्य प्रकाश" नामक कहानी का बूढा मधुशाला में एक कुत्ते को देखता है, जो चलने में असमर्थ है । अपने पास फेंके गये चिप्स को जीभ से लेने तक केलिए वह असमर्थ है । दूसरे दिन आने पर वह कुत्ता वहाँ नहीं था । टूटा प्याला और जंजीर मात्र पडे थे । दरअसल वह कुत्ता बूढे के मृत्युभय को उजागरित करता प्रतीक है । "हाथीबंध" नाम स्वयं एक प्रतीक है, जिसने पूरी कथा को

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ: 9।

[2] एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृ: 134

अपने में निहित किया हैं । अमीर पत्नी के सम्मुख अपने व्यक्तित्व से वंचित नायक का दयनीय पतन और उससे बचने का असफल प्रयास ही इस प्रतीक से व्यक्त होता है ।

यों एम. टी. के रचना-संसार में प्रतीकों का बहुत सार्थक प्रयोग देखने को मिलता है, जो सूक्ष्म संवेदनों को मूर्त करने में सक्षम बन गए हैं ।

संगीतात्मकता

निर्मल वर्मा का संपूर्ण साहित्य संगीत से सराबोर है । उपन्यास हो या कहानी, वे अनुभूतियों को लयात्मक तौर पर ही अभिव्यक्त करते हैं । उन्होंने खुद कहा भी है - "मैं संगीत के हर "मूवमेंट" को अपने ही अंतर्मुखी लैडस्केप के परिदृश्यों में अनुदित कर लेता था, हर स्वर संघात कोई स्मृति जगा देता था और इस तरह जो मेरे भीतर पहले से ही सुप्त अवस्था में मौजूद था, संगीत उसे उन्मेषित करने का साधन बन गया था" ।§1§

"वे दिन" का मेलन्कोविच हमेशा एकोर्डियन बजाता रहता है । वह द्वितीय विश्वयुद्ध के दौरान अपने देश से निर्वासित हो गया था ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - धुंध से उठती धुन - पृ: 21

वह अपने देश वापस नहीं जा सकता । उसकी वेदना और मजबूरी को निर्मल वर्मा ने एकोर्डियन के सुरों के द्वारा प्रस्तुत किया है । इसके अलावा इन्दी और रायना के प्रणय-प्रसंगों में भी संगीत का उल्लेख है - "मैं ने धीरे से अपना हाथ उसके कन्धे पर रख दिया । अँधेरे में संगीत दो - व्यक्तियों को जितना पास खींच लाता है, यह उस रात पहली बार पता चला । उसने मेरी ओर देखा फिर मेरे हाथ को कन्धे से उठाकर अपनी हथेलियों के बीच भर लिया" । वियन्ना का युद्धोत्तर परिवेश भी संगीत्मक है - फिर सब शान्त हो जाता था और मूल स्तब्ध ऑरकेस्ट्रा के जंगल से सिर्फ एक वायलिन की साँस उठती थी, घास पर हिलती हुई, एक चौंकी सी चीख, सरसरातें पानी के नीचे एक चमकीले पत्थर की तरह भीगी, कठोर और चमकीली, जिसे तुम छू सकते थे, फिर वह मरने लगी थी । और यह जानते हुए भी कि वह मर रही है तुम कुछ नहीं कर सकते थे ।"§।§

"परिन्दे" कहानी पूर्णत: लयबद्ध है । इसमें लतिका की मानसिकता के चित्रण केलिए संगीत का सहारा लिया गया है । जैसे - "उसी क्षण पियानो पर शीपां का नोक्टर्न ह्यूबर्ट की उंगलियों के नीचे से पिघलता हुआ धीरे-धीरे छत के अँधेरे में घुलने लगा - मानो जल पर कोमल स्वप्निल उर्मियाँ भँवरों का झिलमिलाता जाल बुनती हुई दूर दूर किनारों तक फैलती जा रही हो ।

---

§।§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 177

लतिका को लगा कि जैसे कहीं बहुत दूर बर्फ की चोटियों से परिन्दों के झुण्ड नीचे अनजान देशों की ओर उडे जा रहे हैं ।"§1§
बिछुड गए प्रेमी गिरीश नेगी की प्रतीक्षा को ही जीवन माननेवाली लतिका के मन की पर्तों के उन्मीलन केलिए यह वर्णन बहुत ही सफल बन गया है । "दहलीज" कहानी के मूलभाव - प्रेम और वेदना का चित्रण भी संगीत से सना है । "ग्रामफोन के घूमते हुए तवे पर फूल पत्तियाँ उठ आती हैं, एक आवाज़ उन्हें अपने नरम नंगे हाथों से पकडकर हवा में बिखर देती है । संगीत के सुर झाडियों में हवा से खेलते हैं, घास के नीचे सोई भूरी मिट्टी पर तितली का नन्हा-सा दिल धडकता है ..... मिट्टी और घास के बीच हवा का घोंसला काँपता है काँपता है और ताश के पत्तों पर जेली और शम्मी भाई के सिर झुकते हैं ।"§2§ नामवर सिंह के मुताबिक "निर्मल ने संगीत का चित्रण, केवल वातावरण चित्रण केलिए ही नहीं किया है, बल्कि संगत के उस सारधर्म को भी व्यक्त किया है, जिसके द्वारा विविध वस्तुएँ पिघलकर अपनी पृथक् सत्ता खोती हुई एक भावधारा में बदल जाती है" उन्होंने परिन्दे का उदाहरण देकर और स्पष्ट किया हैं - "लतिका को चैपल में संगीत सुनकर ऐसा लगा कि जैसे मोमबत्तियों के धूमिल आलोक में कुछ भी ठोस, वास्तविक न रहा हो - चैपल की छत, दीवारें, डेस्क पर रखा हुआ डॉक्टर का सुघड, सुडौल हाथ, और पियानो के सुर अतीत की धुंध को भेदते हुए स्वयं उस धुंध का भाग बनते जा रहे हो ।"§3§

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृः 32
§2§ निर्मल वर्मा - जलती झाडी - पृः 97
§3§ नामवर सिंह - कहानी नई कहानी - पृः 72

एम. टी. की रचनाओं में संगीतात्मकता

एम. टी. की रचनाओं में एक प्रकार का गीतात्मक लय अन्तः सलिला के रूप में अनवरत बहती रहती है । उनका,अनुभूति का चित्रण लयात्मक है । लय के माध्यम से वे शब्दों को पारदर्शी बना देते हैं । जैसे - पीठ के बल लेटते हुए जंगल का संगीत सुनकर जब उसने उज्वल आकाश तथा उसके तले फैले सघन जंगल की तरफ नज़र दौडाया तो हल्की सी बेचैनी मन में घुस आई - झरने की भांति ।§।§ उसीप्रकार - "नई वर्षा का आरव सुनकर धीरे-धीरे उसका मन संतुलित होता गया । झाडों के पत्तों तथा घास-फूस से आच्छादित घरों की छतों पर पानी की भारी बूँदें पडने लगी । हज़ारों कंपनों से मिलकर एक संगीत की सृष्टि होती है । दूर से उमड-घुमड आए मेघों की घोर गर्जना सीधे ऊपर आकर बिखर गई तो पुरानी दीवारें काँप उठीं" ।§2§

दरअसल संगीतात्मकता संगीत से ही उत्पन्न हो, ऐसी बात नहीं है । लेकिन कृति के समूचे गठन पर, विशेष किस्म का लचीलापन और लय, खास प्रभाव पैदा करते हैं । इस दृष्टि से देखें तो एम. टी. की अधिकांश रचनाएँ संगीतात्मक हैं । उनका उपन्यास "तुषार" संपूर्ण रूप से लय बद्ध है । इसमें नायिका विमला की मनस्थिति का चित्रण करने केलिए लेखक ने संगीत का सुन्दर प्रयोग किया है । इसका मूल संवेदन यही है कि मनुष्य की नियति में सिर्फ प्रतीक्षा है, कब, कहाँ जाना है -

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृः 60

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृः 60

कुछ भी किसी को पता नहीं है । वह सोचती है - "एक दिन ज़रूर आयेगा । युगों से हम सब प्रतीक्षा कर रहे है । समय के चट्टानों पर तुषार टपकते है, गलते है । और फिर कोहरे जम जाते है । हम सब प्रतीक्षा करते रहते है ।"§1§

चेतना - प्रवाह शैली

हिन्दी कथा साहित्य में चेतना प्रवाह शैली पश्चिम के प्रभाव से आयी है, हैनरी जेम्स, मेरिडिथ, मिस डोरोथी रिचार्डसन, जेम्स ज्वायस तथा वर्जिनिया वुल्फ आदि ने सबसे पहले इस शैली का प्रयोग किया था । दरअसल चेतना प्रवाह शैली का प्रयोग मानव चेतना की गहराईयों में पैंठकर अंतरंग विचार-तरंगों को पकडने की आकांक्षा से किया जाता है । इस शैली में परम्परागत कथ्य की तर्ज पर आदि, मध्य और अवसान नहीं हैं । जो कथा-सूत्र विचार प्रवाह में तैरते हैं, वे अनैच्छिक एवं अनियंत्रित स्मृति पर आधारित हैं । ऐसी रचनाओं में बाह्य वातावरण के साथ साथ पात्र की मनस्थिति के अनुरूप वातावरण भी, पात्र की चेतना द्वारा विवृत होता है । डॉ. मोहनलाल कपूर के अनुसार - चेतनात्मक उपन्यासों में उपन्यासकार अपने निजी अस्तित्व से कटकर पात्र के साथ पूर्ण तादात्मय स्थापित कर उसकी चेतना के गहनतम स्तरों में प्रवेश करने का प्रयास करता है, जहाँ प्रवाहमान सूक्ष्म से सूक्ष्म विचार तथा अनुभूति अपनी समग्रता में प्रतिफलित होती है" ।§2§ निर्मल वर्मा की रचनाओं में ये विशेषताएँ स्पष्टत: दिखायी पडती हैं ।

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - तुषार - पृ: 27

§2§ डॉ. मोहनलाल कपूर - चेतना प्रवाह - पृ: 132

निर्मल वर्मा को स्मृतियों से गहरा लगाव है । उनकेलिए "स्मृति केवल एक "टेकनिक" नहीं है बल्कि एक आत्मिक अंतरंग मानसिकता है । उन्होंने लिखा भी है - "पहाडों को देखते हुए मुझे अक्सर प्रूस्त की दो दुनियायें याद आती थीं । एक वह दुनिया है, जिसमें सबकुछ शाश्वत हैं - कालातीत सौन्दर्य, शाँति और स्वतन्त्रता की दुनिया; हमारे सामान्य अनुभव की दुनिया में होते है, लेकिन ध्यान और स्मृति के क्षणों में दूसरी दुनिया की ही झलक मिल जाती है" ।§1§

आम तौर पर हिन्दी की ज़्यादातर कहानियों में स्मृतियों का सफल प्रयोग हुआ है । लेकिन निर्मल की अलग खासियत है । इसकी ओर इशारा करते हुए प्रभात कुमार ने लिखा है - "निर्मल के यहाँ स्मृति को जीने की कोशिश - "रिकलेक्शन नहीं "मेमोरी" है । इसलिए कहना मुश्किल है कि निर्मल की कहानियों में उनके पात्र महत्वपूर्ण हैं या वे दृश्य जिनमें रोज़मर्रा की ज़िन्दगी की बहुत छोटी-छोटी चीजें एक आत्मीय लय के साथ मन के भीतर खुलती हैं" ।§2§ सचमुच इसी कारण से ही निर्मल वर्मा की रचनाएँ सघन अनुभूति की मूर्त रूप बन गयी हैं ।

"वे दिन" की शुरुआत ही स्मृतियों से होती है । जैसे - "यही समय होता था, यही घडी । मैं कुर्सी पर बैठा रहा करता था और उसके कानों में नायिका रायना की आवाज़ गूँजती है - तुम विश्वास करते हो ? सच बताओ ।§3§ कुल तीन दिन की कथा ही इस उपन्यास में कही गयी है । वह भी स्मृतियों की चिंदियों के माध्यम से ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - शब्द और स्मृति - पृ: 127
§2§ डॉ. प्रभात कुमार -
§3§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 3

"एक चिथडा सुख" कहानी डायरी की शैली में लिखी गयी है । डायरी के खोलते ही कहानी स्मृति के माध्यम से अनावृत हो जाती है - "और वह स्मृति सपेद पन्ने पर अचानक सबसे अलग हो गई है, वह अपने में अकेली है, समूचे दुनिया से अलग, कागज़ पर चिपकी हुई तितली की तरह लेकिन वह मरी हुई तितली है, उडते हुए रंग की निर्जीव लोथ । वह एक तरह का सौदा है देखने मरने और याद करने के बीच । हम स्मृति में उसे पकडते हैं, जो मृत और मुरदा है, जब वह जीवित थी, हम उसे ओझल कर देते है भूल जाते है" ।§1§ यों स्मृति चित्रों के माध्यम से निर्मल वर्मा ने वर्तमान में भूत को समेट लिया है ।

"लाल टीन की छत" की काया वयसन्धि पार करती हुए युवती बन रही है । काया के जीवन की अतीत घटनाओं को निर्मल वर्मा ने स्मृति के प्रेम में यों दर्ज किया है । काया कहती है - "आज इतने बरसों बाद भी जब मैं किसी प्लाटफोर्म या वेटिंग रूम में अकेली बैठी होती हूँ, तो मुझे यह विचित्र सा भ्रम होता है कि अचानक बाबूजी घडी हिलाते हुए दिखाई देंगे और मैं अपना सूटकेस उठाकर उनके साथ चल दूँगी । बिना एक क्षण प्रतीक्षा किए, बिना यह सोचे विचारे कि उन्हें कहीं और जाना है, मुझे कहीं और" ।§2§

---

§1§ निर्मल वर्मा - लाल टीन की छत - पृ: 164

§2§ निर्मल वर्मा - लाल टीन की छत - पृ: 185

उपन्यास में लामा नामक पात्र का प्रसंग स्मृतिचित्रों के द्वारा प्रस्तुत किया गया है । छोटे और काया के मन में लामा को लेकर जो यादें बनी रहती हैं, उन्हीं के चित्रण के द्वारा लामा का चित्र एवं चरित्र अनावृत होता है - "इन्हीं हड्डियों के बीच लामा थी - बुआ की लडकी जो कुछ महीने रहकर अचानक चली गयी थी वह इतना कुछ उन लोगों केलिए छोड गयी थी कि यह सोचना असंभव लगता कि वह उनके बीच नहीं है" ।§1§

कहानियों में "डायरी का खेल" और "तीसरा गवाह" विशिष्ट रूप से चेतना प्रवाह पद्धति पर आधारित है । "डायरी का खेल" में बिट्टो के चले जाने पर बब्बू को उसकी बहुत सी बातें एक के बाद एक बेसिलसिलेवार ढंग से एक दूसरे को छीलती हुई याद आती हैं । "तीसरा गवाह" के रोहतगी साहब क्लब में स्काच पीते-पीते अपनी कहानी सुनाने लगते है । "परिन्दे" की लतिका को जीवित रखनेवाले तत्व ही गिरीश नेगी की स्मृतियाँ हैं । जीवन के किसी काल के अनमोल क्षण की स्वर्णिम अनुभूति उसके मानस में जीवन भर का पाथेय बनकर रह गया है । यह वाक्य कि - "ह्यूबर्ट ही क्यों, वह क्या किसी को भी चाह सकेगी, उस अनुभूति के संग, जो अब नहीं रही, जो छाया सी उस पर मँडराती है, न स्वयं मिटती है, न उसे मुक्ति दे पाती है" ।§2§ "धागे" कहानी तो स्मृतियों का ढेर है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 13

§2§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 139

नायिका का कथन - "हम उस क्षण भूल गए कि इन बरसों के दौरान ढेर सारी उम्र हम पर लद गयी है कि बरसों पहले उसका विवाह हुआ था और मैं एक बच्चे की माँ हूँ । हम दरवाज़े पर खडे-खडे देर तक एक - दूसरे को वे बातें याद दिलाते रहे जो हम दोनों को मालूम थीं, जिन्हें हमने कितनी बार दुहराया था, किन्तु हर बार लगता था कि हम उन्हें भूल गए हो । हर बार हम उन्हें दुबारा याद करने का बहाना करता था" ।§।§

एम. टी. की रचनाओं में चेतना प्रवाह शैली

एम. टी. वासुदेवन नायर ने उपन्यास एवं कहानी दोनों विधाओं केलिए इस तकनीक का सफल प्रयोग किया है । सामान्यतः एम. टी. - वासुदेवन नायर व्यक्ति के दृष्टिकोण से कथा कहते है । पात्र की चेतना को किसी विशेष काल में स्थिर रखा जाता है । फिर समय के अनुसार चेतना आगे या पीछे जाती है । उनका उपन्यास "मञ्ज" इसका सफल उदाहरण है । उपन्यास के प्रारंभ में ऐसा चित्रण है कि विमला को कोई काम नही है । इसलिए हाथ लगी पुस्तक लेकर पन्ना पलटती रहती है । दूर कहीं से सुनाई पडती झींगुरों की आवाज़ उसे कालेज के जन्तुविज्ञान क्लास की ओर ले जाती है । तब उसका "स्टूडेन्ट" रश्मी वाजपेयी आती है । उसके आगमन से वह वर्तमान की ओर वापस लौटती है । रसिडन्ट ट्यूटर के रूप में अपने दायित्व के प्रति वह सचेत हो जाती है । रश्मी के साथ आए जवान लडका उसे अपने अतीत के बारे में सोचने को बाध्य करता है । वह झरोखे से बाहर देखती है तो उसकी चेतना में

---

§।§ निर्मल वर्मा - धागे - पिछली गर्मियों में - पृः ।।

वहाँ से दिखाई देती प्रकृति और उसका अपना कमरा भी प्रतिफलित होते हैं । ये तो, उस कमरे में उसके पहले रहे लोगों और उनके करतूतों की स्मृति के भंवर में उसे धकेल देते हैं । इसप्रकार विमला नामक पात्र के दृष्टिकोण से, यानी कि उसके चेतना के माध्यम से देश और काल की सीमाओं का अतिक्रमण कर कथा-सूत्र को पिरोया गया है । 85 पृष्ठवाले इस लघु उपन्यास में वर्तमान काल सिर्फ नौ दिनों तक सीमित है । यह शैली वास्तव में कहानी में मीलित तमाम अनुभूतियों को संवहन करने में बहुत ही सफल हुआ है ।

"विलापयात्रा" नामक उपन्यास में चार पात्रों की स्मृति के माध्यम से कथ्य की परतें उघाडी गयी हैं। पिताजी की मृत्यु की खबर पाकर चारों पुत्र घर पहुँचते है और शव-क्रिया के समाप्त होने तक वहाँ ठहरते है । पुत्रों के बर्ताव एवं वार्तालापों से खानदान की पृष्ठभूमि एवं सदस्यों की जानकारी प्राप्त होती है । राजन, अप्पु, उण्णि - इन तीनों के ख्यालों के रूप में भिन्न भिन्न अध्यायों की रचना हुई है । इस उपन्यास में वर्तमान सिर्फ एक दिन का है - पिता की मृत्यु का दिन । मृत्यु का वातावरण एवं उसकी वजह उभर आती स्मृतियों को जगाने में स्मृति की शैली सफल हो गयी है । उण्णि के असफल प्रणय, नौकरी की खोज में राजन की सिलोन यात्रा, पिताजी के करतूतें - ये सब इन स्मृतियों के द्वारा ही उभर आये हैं ।

"दूसरी बारी" उपन्यास में इतिहास में उपेक्षित भीम सेन को उभारने के लक्ष्य से लिखा गया है । उपन्यास का प्रारंभ दूर से

दिखाई पडनेवाले नील सागर से होता है, जो द्वारका को निगलने के बाद भी भुभुक्षा के मारे क्रुद्ध है । पाण्डव सागर तट पर बिखरे भग्नावशेषों पर दृष्टि लगाये पांत में खडे हैं । पहले युधिष्ठिर, फिर अर्जुन, उसके बाद नकुल और सहदेव, इसके पीछे द्रौपदी और अन्त में भीमसेन ।
फिर महाप्रस्थान की शुरुआत होती है । सब को अपने मन में उभरती स्मृतियों को माँजकर उत्तर दिशा की ओर चलना है । इस यात्रा के दौरान सबसे पहले द्रौपदी थककर गिर जाती है । पाण्डवों को पता चलता है कि द्रौपदी गिर गयी । लेकिन वह महाप्रस्थान के अनुशासन में रहना चाहते है । लेकिन कोशिश करने के बावजूद भीम ऐसा कर नहीं पाता । धराशायित द्रौपदी को निहारते हुए भीमसेन की स्मृतियाँ जागरित हो जाती हैं और उनके माध्यम से महाभारत कथा का पुनराख्यान होता है । यहाँ भीमसेन मात्र एक साक्षी नहीं है ।
वे पूरी कथा को नयी दिशा एवं मोड प्रदान कर देते हैं, स्मृतियों के माध्यम से । इसलिए इस स्मृत्यावलोकन शैली की खास विशिष्टता है ।

उन्होंने अपनी प्रारंभकालीन कहानियों में भी इस शैली को अपनाया है जैसे "पालतू जानवर", "एक जन्मदिन की याद में", "नीला कागज़", "तेरी याद में", "पटाखे" आदि । रिङ्‌. में हुई दुर्घटना के कारण शय्यावलंबी जानम्मा की स्मृतियों के माध्यम से "पालतू जानवर" का प्रारंभ होता है । जानम्मा शय्या में निश्चल लेटी है । आधी रात हुई होगी । फिर भी उसे नींद नहीं आयी । नीरवता के ठिठुर शरीर को चीरकर, दूर सरकस टेन्ट से बान्ट का संगीत बहती आ रही है :-

दूसरा शो समाप्त होनेवाला है"§1§ - यों जानम्मा की स्मृतियाँ वर्तमान से अतीत की ओर जाती हैं और पूरी कहानी हमारे सम्मुख प्रस्तुत हो जाती है । "एक जन्म दिन की याद में" में कथावाचक अपने जन्मदिन में बीस साल पहले का एक जन्मदिन और उस दिन को हुई दुर्घटना का स्मृति चित्र उकेरा गया है - "कई बातें याद आई बचपन की । बीस साल पहले के एक जन्मदिवस की आज ठीक याद आ रही है । उस जन्मदिवस से जुडी कई दुःखद स्मृतियाँ हैं" ।§2§ "नीला कागज़" में कथावाचक अपने स्कूली दिनों में किये नटखट को याद करते है । अपने को पुरस्कार स्वरूप मिले "लेटर पाड" के नीले कागज़ पर वह क्लास की एक लडकी को उसने प्रेम पत्र लिखा था ।

यों एम. टी. का अधिकांश साहित्य, स्मृतियों को पुनर्जीवित करने की कोशिश है । ऐसा लगता है कि अतीत एक जादू है, जो स्मृति बनकर उन पर छाया हुआ है ।

शिल्प - कुछ विशिष्ट प्रयोग

निर्मल वर्मा अक्सर वस्तु के अनुरूप शिल्प-गठन में विश्वास रखते हैं । उन्होंने अपने उपन्यासों एवं कहानियों के माध्यम से इसका हूबहू परिचय दिया है । उनके प्रथम उपन्यास "वे दिन" में घटनाओं का समय यानी कथा की अवधि कुल तीन दिन की है ।

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृः 32

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृः 73

आत्मकथात्मक शैली में लिखा गया यह, हिन्दी उपन्यास रचना का एक नया मोड रहा था । हिन्दी उपन्यास क्षेत्र में आधुनिक संवेदना की शुरुआत सचमुच "वे दिन" से होती है । इसलिए समीक्षकों ने समकालीन उपन्यास का प्रारंभ "वे दिन" से माना है ।"§।§ "लाल टीन की छत" को तीन खण्डों में विभक्त किया गया है - "एक साँस में", "शहर से अमर" और "तसल्ली से परे" । काया के अपनी बात कहने का हिस्सा कुछ अलग गहरे और काले अक्षरों में है, बाकी सब सामान्य हैं । काया युवती है । उसके युवती होने के पहले की घटनाओं को उपन्यास में दर्ज किया गया है, जिनका वह याद कर रही है । "एक चिथडा सुख" डायरी शैली में लिखा गया है । पूरे उपन्यास में मुन्नू एक साथ समय के तीन खण्डों को जी रहा है । एक जहाँ वह उपन्यास की घटनाओं का दर्शक है । दूसरा जिसमें वह इन घटनाओं को अपनी डायरी में लिखता है, और तीसरा इनकी यादें हैं जिनका वह बहुत समय के बाद याद करता है । लेकिन तीनों खण्ड इतने घुलमिल गये है कि उन्हें अलग नहीं किया जा सकता ।

---

§।§ इन्दनाथ मदान - आलोचना - अंक 39 - पृ: 20

"वीक एण्ड" नामक कहानी को निर्मल ने दो तरह से लिखा है - "बीच बहस में" नामक संग्रह में वह प्रथम पुरुष यानी आत्मकथात्मक कथा के रूप में है और "दूसरी दुनिया" संग्रह में इसे रंगमंच के अनुकूल यानी नाटक के रूप में प्रस्तुत किया है । हालाँकि पात्र इसमें एक ही है - सिर्फ नायिका ।
"इतनी बडी आकांक्षा" नामक कहानी में तीन कथाएँ एक साथ चलती हैं - एक - पति-पत्नी की, दूसरी एक फौजी और एक अधेड औरत की, और तीसरी एक फौजी और जिप्सी लडकी की । सभी एक दूसरे के माध्यम से जीवन में व्याप्त ऊब को दूर करना चाहते है । यों निर्मल वर्मा ठोस निरूपण में विश्वास नहीं रखते है । वे मानते हैं कि यथार्थ झाडी में दुबका रहता है, झांककर जितना दीख सके उतना ठीक । यही उनकी कृतियों में भी होता है, कोई ठोस चित्रण नहीं; संकेतों से जितना समझा जाए, वही ठीक है । इसकेलिए वे शिल्प के नये नये प्रयोगों को अपनाते हैं ।

एम. टी. ने अपनी रचना को एकाग्र एवं समग्र बनाने केलिए अनुरूप तकनीकों का प्रयोग किया है । महाभारत पर आधारित "दूसरी बारी" को उन्होंने आठ खण्डों में विभक्त किया है । जैसे "यात्रा खंड", "आँधी का मर्मर", "वनवीथियाँ", "अक्षहृदयम्", "पाँच रंगों के फूल", "विराट", "जीर्ण कपडे", एवं "पैतृक" । जीवन को, बदलते परिवेश में नये ढंग से देखने का प्रयास इसमें अपनाया गया है । "दीदी", "एक जन्मदिन की याद में" आदि कई कहानियाँ उन्होंने बच्चों के दृष्टिकोण से लिखा है । "दीदी" कहानी नायिका

या बुढ़िया के दृष्टिकोण से रचा सकता था लेकिन उन्होंने बाल-मनोविज्ञान के आधार पर उसका चित्रण किया है । इसलिए कहानी हर एक पाठक का अपना अनुभव बन जाती है । एम. टी. ने खुद कहा है - "सिर्फ एक कहानी कहना मेरा उद्देश्य नहीं है । कहानी अनुभव का हिस्सा बनें । कहानी कहने के अनेक तरीके हो सकते हैं । दुःखी दोस्त पास आकर कहानी कह सकता हैं । एक लम्बी चिट्ठी के रूप में भी कहानी का चित्रण संभव है । रेलगाडी के डिब्बे में/खुडे भिखारी अपनी रामकहानी कह सकता है । किन्तु कहानी को पाठक के अनुभव का हिस्सा बनाने केलिए ये तरीके ठीक नहीं होंगे । पात्रों के भाव व विचारों के प्रवाह में कहानीकार को डूबना और उडना पडेगा । मन में क्रम हीन आते प्रतिरूपों का सहारा लेना पडेगा । एक विकार, एक भाव, एक स्पन्दन, हृदय को छूता एक चित्र, कथा का यही मक्सद है । यदि हम मानते हैं कि उपन्यास या कहानी केलिए अमुक तत्व अनिवार्य हैं तो सबकुछ गडबड हो जायेगी । क्या रचना कहानीकार के हृदय से उद्भूत होकर पाठक के हृदय की ओर बह निकलती है ? हमें सिर्फ इसी बात पर ध्यान देना है ।"§।§ यों निर्मल वर्मा की तरह एम. टी. भी अपने कथा-साहित्य केलिए नवीन प्रयोगों का आग्रह रखते हैं । सचमुच उनकी रचनाओं का यह कलात्मक साहस ही सबसे अधिक हमारा ध्यान खींचता है । वे अज्ञात पलों में छलांग लगाकर अतल को तल पर लाने का जोखिम उठाते हैं । उस प्रक्रिया के दौरान पूरी कथा पलभर में चमकते भावों की छटा में परिणत हो जाती है । यह सिद्धि उन्हें फिल्म क्षेत्र के अनुभव से प्राप्त हुई है ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कहानीकार की कार्यशाला - पृ: 22

भाषा

शिल्प के तहत आते विभिन्न तत्वों में भाषा का महत्व सर्वाधिक हैं, क्योंकि अन्यों की सक्षम अभिव्यक्ति तक भाषा के माध्यम से ही संभव होती है । युगीन परिवेश के मुताबिक भाषा में परिवर्तन होता है । डॉ. गोरधन सिंह शेखावत ने कहा है - "प्रत्येक युग की भाषा के अपने रचना-संस्कार एवं उसकी भाषिक मान्यताएँ रही हैं । युग की बदलती परिस्थितियों और जीवनबोध के अनुकूल भाषा में भी परिवर्तन उपस्थित होता है और यह परिवर्तन युग विशेष के व्यक्ति मन की आन्तरिक अभिव्यक्ति की माँग होता है, और मानव जीवन की संभावनाओं को प्रकट करते हुए कहानी की भाषा ने रचनात्मक स्तर पर अपना विकास किया है ।"§1§ राजेन्द्र यादव ने भी लिखा हैं - "आज अनुभव केलिए भाषा नहीं तलाशी जाती । अनुभव स्वयं अपने अनुरूप भाषा संस्कार करने लगा है ।"§2§ यों कथा साहित्य की भाषा सामाजिक जीवन के परिवर्तित रूपों को अपनाती हुई ज़िन्दगी की धडकन बनकर आगे चली है ।

---

§1§ डॉ. गोरधन सिंह शेखावत - नयी कहानी उपलब्धि और सीमाएँ - पृ: 204

§2§ राजेन्द्र यादव - कहानी स्वरूप और संवेदना - पृ: 191

निर्मल वर्मा और एम. टी. की भाषा चेतना बहुत ही सजग हैं । भाव, अनुभूति, स्थान, परिवेश आदि के अनुसार उनकी भाषा ने विभिन्न रूप अपनाए हैं । इस विभिन्नता के आधार पर उनकी सर्जनात्मक भाषा को भावानुकूल, काव्यात्मक, अलंकृत एवं परिवेशगत जैसे खेमों में बाँटा जा सकते हैं ।

भावानुकूल भाषा

निर्मल वर्मा की भाषा, कथावस्तु की गति एवं दिशा, पात्रों का सूक्ष्म चरित्र एवं वातावरण की गहनता को उजागर करने में अत्यन्त समर्थ हैं । वह प्रत्येक पात्र की छोटी सी अनुभूति तक को प्रस्तुत करने में कुशल है । उनकी प्रत्येक रचना में यह विशेषता देखने को मिलती है । "वे दिन" में सुखद अनुभूति और डर की मिली-जुली मानसिकता को इसप्रकार चित्रित किया है - "एक उलझा हुआ सुख, सुख भी नहीं, उसके पहले का क्षण, जो चित्र जिप्सी ट्यून का आवारा अंतहीन आतंक है । जो डर नहीं है - डर के परे की कातरता होती है - पाने और छोडने की-एक बच्चे की झूले की तरह, जो जब नीचे जाता है, तो दिल बैठने सा लगता है, ऊपर उठते ही एक चीख सी निकल जाती है, जिसने गिरने के डर को झपेट दिया है, लेकिन उठने के सुख को अभी नहीं पकडा है ।"§1§ उन्होंने अकेलेपन को इसप्रकार मूर्तरूप दिया है -

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 7।

"हम दोनों सहसा अँधेरे में अकेले हो गए थे ..... अकेलापन, जो दुःख, पीडा, और आँसुओं से बाहर है - जो महज जीने के नंगे आतंक से जुडा हुआ है, जिसे कोई दूसरा व्यक्ति निचोडकर बहा नहीं सकता ।"§1§ दरअसल इस एक ही वाक्य से "वे दिन" की मूल मानसिकता अकेलापन का उजागर करने में निर्मल वर्मा सफल हो गये हैं । इसीप्रकार "एक चिथडा सुख" का यह वाक्य पात्र की मनस्थिति को जाहिर करने में बहुत ही सक्षम है - "अब कोई आवाज़ नहीं थी । टाक्सी की चुप्पी कितनी अलग थी, और चुप्पियों से बिल्कुल अलग, वह चलती हुई चुप्पी थी, ठहरकर भी ठहर नहीं थी, जैसे वे बैठकर भी बैठे नहीं थे, कहीं जा रहे थे, इंजन की गडहडाहट, भागते हुए पेड, कटता हुआ रास्ता ।"§2§

"डायरी का खेल" में अजनबीपन एवं रूमानियत की अनुभूति को उन्होंने इसप्रकार चित्रित किया है - "आज रह रहकर क्यों मुझे लगता है कि बिट्टो की उस तरल, स्निग्ध खिलाखिलाहट के पीछे भी कोई शब्दातीत रहस्य था, जो वह कहती नहीं, किन्तु जो उसके शब्दों के आगे-पीछे निरन्तर मँडराता रहता था । सब दूरियों को एक संग लांघ जानेवाली आत्मीयता, जो मानो हमें भिगो कर सूखी रह जाती है ।"§3§

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृः 211

§2§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृः 138

§3§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृः 15

स्मानियत की अनुभूति "दहलीज" में इसप्रकार अंकित है - "ग्रामफोन के घूमते तवे पर फूल-पत्तियाँ उग आती है, एक आवाज़ उन्हें अपने नरम-नंगे हाथों से पकड कर हवा में बिखेर देती है, संगीत के सुर झाडियों में हवा से खेलते है, घास के नीचे सोई हुई भूरी मिट्टी पर तितली का नन्हा सा दिल धडकता है मिट्टी और घास के नीचे हवा का घोंसला काँपता है काँपता है और ताश के पत्तों पर जेली और शम्मी भाई के सिर झुकते है, उठते है, मानों ये दोनों चार आँखों से घिरी सांवली झील में एक दूसरे की छायाएँ देख रहे हो ।"[1] "डायरी का खेल" में बिट्टो की वेदना बहुत ही मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त है - "उनका स्वर इतना सहज, इतना शान्त था कि कितनी ही देर तक मैं जान भी नहीं सका कि बिट्टो रो रही है, अपने ही में, धीमे-धीमे आँसू जो बिल्कुल ठंडे, वेदना रहित होते है, जिनके बहाते से रोना नहीं होता, दुःख से छुटकारा नहीं मिलता, जो हृदय को एक मर्मान्तक, घनीभूत पीडा में निचोडते हुए चुपचाप बूँद-बूँद गिरते रहते हैं ।"[2]

यों निर्मल वर्मा अपने संवेदनशील एवं पैनी दृष्टि के द्वारा अपने गद्य को जीवन्त बना दिया है । कृष्णा सोबती के अनुसार -

---

[1] निर्मल वर्मा - जलती झाडी - दहलीज - पृः 97

[2] निर्मल वर्मा - प्रतिनिधि कहानियाँ - पृः 31

"निर्मल ने अपने पात्रों को, ऋतुओं को और मौसम को, धूप-छाँह को, बरखा-बर्फ को, बादलों को, पहाडों की चोटी को, अन्दर और बाहर की स्मृतियों के "अपारचर" में से उजागर किया है । एक साथ जो भी कलम ढेरों धूप, हवाएँ, चाँदनी, रुई सी बर्फ, बर्फों के टीले, फूलों के - मुखडे, ऐसे आँक सके जैसे निर्मल ने आँके हैं, उन्हें स्वर और संज्ञा दे सके - यकीनन एक बडी कलम है ।"§1§ यों निर्मल वर्मा की भाषा का अंतरंग अवश्य परिवेश और कथ्य के अनुरूप है ।

एम. टी. की रचनाओं में भावानुकूल भाषा

एम. टी. वासुदेवन नायर अपनी भाषा की सूक्ष्मता से मनोभावों के अंकन में बहुत ही माहिर है । वे अपने संवेदनाओं को उतारते वक्त अत्यन्त सावधानी एवं कलात्मकता से काम लेते हैं । "कालम्" के प्रारंभ में सुन्दर भविष्य की आकांक्षा से कॉलेज जाते सेतु की मानसिकता को व्यक्त करता निम्न लिखित यह वाक्य बहुत ही सार्थक एवं कलात्मक है - नई वर्षा से उत्फुल्लित होकर दूब पर सो पडे झींगुर पैरों की आहट सुन चौककर भीगे खेतों की मेडों पुद्कने लगे । पाँवों से टकराकर उछलते वक्त वे आवाज़ भी करते ।"§2§

---

§1§ कृष्णा सोबती - सोबती एक सोहबत - पृ: 298

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृ: 7

कॉलेजी शिक्षा के बाद जब सेतु गाँव वापस आता है, उस समय के माहौल को चित्रित भाषा एकदम यथार्थोन्मुख है । "नदी दूर तक सूखी पडी थी । प्रवाह रुकने से गंदा मानी इधर-उधर गड्ढों में भरा पडा था ।"§1§ "तुषार" की विमला के अकेलापन और प्रतीक्षा को प्रकट करता यह वाक्य देखिए -

"हम सब प्रतीक्षा कर रहे है ।
समय की पहाडी पर खडे होकर बरसों का, पीढ़ियों का-
पर्दा हटाकर देख सकें तो "§2§

यों अविनाड्डा व अमिट प्रतीक्षा को एम. टी. ने कविता के भावुक शैली में प्रस्तुत किया है । कहानीकार की कला में एम. टी. ने लिखा है - "शब्द सोने की सिक्कों की तरह है । कथाकार यही प्रार्थना करता है कि ऐन शब्द, ऐन वक्त पर अपने वश में आ जाय । शब्द अपने वश में आ जाने पर उस पर उस तरह नज़र रखना चाहिए, जिस तरह एक कंजूस अपने सिक्कों की थैली पर रखता है ।"§3§ सृजन के वक्त उन्होंने इस बात का हूबहू अनुसरण किया है ।

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम - पृः 143
§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - तुषार - पृः 89
§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कहानीकार की कला - पृः 18

भाषा के नये नये प्रयोग के सिलसिले में उन्होंने शब्द के अभेद्य दीवार को लाँघकर शब्द के परे के मौन जगत में प्रवेश करने का प्रयत्न भी किया है । "अँधेरे की आत्मा" का बीमार वेलायुधन कुट्टी अम्मुकुट्टी के सामीप्य से शान्त हो जाता है -

"कुट्टीदा की तबीयत ठीक हो जायेगी
ऊँ
अच्चु नायर का कहना मानना होगा
ऊँ
नहीं तो मार खाना पडेगा न ?
ऊँ
कल रात क्यों रोया था ?
हूँ - ऊँ

अम्मुकुट्टी के खिडकी से हाथ वापस लेने पर वेलायुधन को दुःख हुआ । अम्मु ने पीछे मुडकर अपनी धोती ठीक करके फिर खिडकी पर हाथ रखा । तब उसे अच्छा लगा । फिर सहमकर धीमे स्वर में उसने पूछा - "ज़रा छू लूँ ?"§।§ यों संक्षिप्त संवादों से मानसिकता को व्यक्त करने लायक शब्द व वातावरण की सृष्टि करने में वे बहुत ही सफल हुए हैं । इसीप्रकार "वानप्रस्थम" नामक कहानी में मास्टरजी

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - चुनी हुई कहानियाँ - पृः 68

और विनोदिनी की बातचीत भी गौर करने लायक है - "विनोदिनी ने बत्ती नीची कर दी । मास्टर आँखें मूँदे लेटे थे । दूसरी तरफ विनोदिनी धीरे से "माँ भगवती" कहकर लेट गयी ।

"चादर नहीं ली" ?
"ऊँ"
"ठंड उतनी नहीं, जितनी सोचा था, है न" ?
उसका विनोदिनी ने जवाब नहीं दिया । बाहर बरामदे की आवाज़ भी थम गयी ।
"सर"
"ऊँ"
"सो गए" ?
नहीं ।
उन्होंने और कुछ समझकर ही पूजा की थी । है न ?
ऊँ
"कुछ देर बाद उसने कहा - लगता है कि वह दंपती-पूजा ही थी ।"
ऊँ । मास्टर मुस्कुराए ।
पूर्व जन्म का भाग्य रहा होगा । विनोदिनी बुदबुदाई" ।[1]
यहाँ हल्के शब्द और स्वर के माध्यम से अनायास पात्रों के अर्न्तद्वन्द्व को प्रकट करने में समर्थ हो गये है ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - वानप्रस्थम् - पृ: 32

काव्यात्मक भाषा

निर्मल वर्मा का संपूर्ण कथ्य कविता की तरह प्रवाहशील है । इन्होंने सचमुच गद्य को कविता में तब्दील किया है । कई बार गद्य इतने काव्यमय और लचीला हो जाता है कि उसमें कविता की गति और लय आ जाते है । "लाल टीन की छत" में कविता की ही संवेदना है । काया की मानसिकता एवं प्रकृति को काव्यात्मक तर्ज पर यों चित्रित किया गया है - "दिन बुझने लगे । सूरज कहीं दिखाई नहीं देता था, कुछ घंटों केलिए एक पीली छाया शहर पर उतर आती न पूरा अँधेरा, न पूरी रोशनी - एक कमज़ोर सा झिलमिल हवा में तैरता रहता । खुद हवा अदृश्य हो गयी थी । दूर से देखने पर लगता जैसे कोढ के निशान पत्थरों पर निकल आए हो दिन भर चिमनियों से धुआँ निकलता रहता, छतों पर टेढे-मेढे साँप से लहराते रहते" ।[1] इसीप्रकार "परिन्दे" में अपने अतीत प्रेम की सुखद स्मृति में खो गए लतिका के विरही मन का भी चित्रण काव्यात्मक हुआ है - "किन्तु जंगल की खामोशी शायद कभी चुप नहीं रहती । गहरी नींद में डूबी सपनों सी कुछ आवाज़ें नीरवता के हल्के सोने परदे पर सलवटें बिछा देती है मूक लहरों सी हवा में तिरती है मानो कोई दबे पाँव झुक कर हवा में अदृश्य संकेत कर जाता है **देखो**, मैं यहाँ हूँ ।[2] "अंतिम अरण्य" में मेहरा साहब की दूसरी पत्नी दीवा की हँसी को उन्होंने यों उकेरा है - "अचानक मुझे वह हँसी सुनायी देती है सफेद दाँतों की चमकीली

---

[1] निर्मल वर्मा - लाल टीन की छत - पृ: 138

[2] निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 163

पाँत से पहाडी झरने की तरह कल कल करती हुई उनकी हँसी जिन्हें दपन्नाया जा रहा था । वह यों हँसा करती थी जैसे बच्चे आँख मिचौनी खेलते हुए छिपे कोने से हँसते हैं, जब खोजनेवाला अनदेखा कर पास से गुज़र जाता है ।"§1§ मेहरा साहब के पिण्ड समर्पण के दौरान पहुँचे कौओं को उन्होंने यों चित्रित किया है - "काले पंख फड़फड़ाता हुआ वह धीरे-धीरे नदी के किनारे चौकोर पत्थर पर रखे चावल के उन सपेन्द पिंडों की तरह आ रहा था । देखते-देखते उसके पीछे एक दूसरा कौआ फिर तीसरा और चौथा एक काले बवंडर सा बहते आये और पत्थर के चारों ओर गोलबन्द हो गए । सपेन्द गीले पिंडों पर उनकी लम्बी चमकती चोंच डिबिया सी खुलती, बंद हो जाती शहरी कौओं की तरह न सतर्क, न चौकस, बल्कि निरासक्त आत्मलीन ।"§2§ "बुखार" में कथावाचक ने धूप में खडी नायिका को यों चित्रित किया है- "धूप जाली से छनकर उनके माथे पर गिर रही थी, जहाँ पसीने की बूँदे मोतियों सी दिप-दिप कर रही थीं । उन्होंने उन्हें पोछा नहीं, वे चमकती रही ।" इसीप्रकार दूसरे के स्वर या प्यार भरे बुलावे को यों चित्रित किया गया है - "हम अपने स्वर नहीं सुन पाते, दूसरों के सुनते हैं । उनकेलिए वह सिर्फ स्वर नहीं होता, वह एक अधीरता सी होती है, एक आतुर सी प्रार्थना होती हैं - जो पैरों को रोक लेती है । वह उठते उठते बैठ गयी, कुर्सी के सिरे पर अधर सी, जैसे अभी बैठी है अभी उठ जाएगी ।"§3§

---

§1§ निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृ: 12

§2§ निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृ: 278

§3§ निर्मल वर्मा - सूखा तथा अन्य कहानी - पृ: 172

एम. टी. की रचनाओं की काव्यात्मक भाषा

एम. टी. की सर्जनात्मकता का एक प्रबल पक्ष स्मानी है । उनकी रचनाओं में ऐसे अनेक पात्र हैं जो गाँव से शहर के भीड-भाड में पहुँच जाते हैं । उनके स्वप्नों में सदैव अपने गाँव की सुखद स्मृतियाँ सजीव रहती है । गाँव की प्रकृति से कटा उनका कोई सपना नहीं है । पात्रों की स्मानी स्मृति, प्रतीक्षा, वेदना, आदि को प्रस्तुत करने केलिए एम. टी. ने काव्यात्मक भाषा का सहारा लिया है । "कालम्" में प्रकृति का काव्यात्मक वर्णन यों किया गया है - "आकाश में हज़ारों पुष्प अपने नेत्र खोल रहे थे । सुपारी के वृक्षों पर स्वप्न के मंद हास सा ज्योत्स्ना फैल रही थी । एकान्त खलिहान में डरावना सौन्दर्य नाच रहा था । कदली के पत्तों से छनकर चाँदनी नीचे छिटक रही थी । उसे इसका दुःख हुआ कि नदी के सूखे पुलिनों पर फैलती चाँदनी उस खिडकी से नहीं दिखायी दे रही है । "इल्लम" की ओर जाती राह पर लताएँ एवं बेल बूटियाँ छायी हुई थी, उनमें रात्रि अपना मुख छिपाए बैठी थी । हवा के झोंकों में हिलते डुलते पत्तों, बेलों, लताओं में, बिखरी जटाओंवाली राक्षसी का रूप प्रकट हो रहा था ।"§।§
एक और जगह उन्होंने प्रकृति का सुहावना चित्रण इसप्रकार किया है - सांध्यकालीन धूप में, केरवृक्षों के बीच सफेद बालू चमक रही थी । उत्तरी सीमा के आम्रवृक्ष के तले कौए उसके फलों पर टूट पड रहे थे ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृः 250

नारियल के पत्तों से छनककर मंद पवन चल पडा था । दूर समुद्र का अव्यक्त गर्जन सुनाई दे रहा था । मन में एक मधुर पीडा अपना मस्तक उठा रही थी । अमर बरामदे की घडी बज उठी तो ध्यान आया छह बजे है ।"§1§ यहाँ सन्ध्या को उन्होंने बहुत ही कलात्मक ढंग से चित्रित किया है ।

"असुरीबीज" के गोविन्दन कुट्टी के दृष्टिकोण से वर्तमान की बदतर स्थिति को इसप्रकार चित्रित किया गया है । यहाँ से शुरु होते हैं चरागाह । छोटे छोटे नाले, बच्चों को तितर बितर करने लायक पानी से सने घास, चरते मवेशी ये सब अब भी शेष रहे गये है । राहियों के पदाघात से पले दूब से बनी पगडंडी भी सपाट पड़ी है ।" "तुषार" में वातावरण का चित्रण भी काव्यात्मक है - धुंधला पीला आकाश दुपहर की हल्की धूप से हिम के गलते आँसू के झील से बहाव नज़र आते हैं । घूँटों में बँधे बोट सो पडे है । विजन बस अड्डे पर काले कपडे पहन कालदूत के समान कुली बैठे हैं । दीपस्तंभ का दिया दूर के सितारे सा टिमटिमाता है । राक्षस की खोपडी के समान पडे पत्थरों का अंबार, पेटियों और गाँठों के अंबार के चारों ओर गीध के समान झपट पड़ते भोटिया कूली

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ: 88

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - तुषार - पृ:

"वानप्रस्थम" में प्रकृति सुषमा को सहज काव्यात्मक भाषा में यों चित्रित कर दिया है - "कोहरे की परतों ने तराई के पेडों की टहनियों को छिपाया था । जंगली आग की लपटे उठ रही थी मानो कोई लाल रेशम पैन्ना रहा हो । आश्चर्य नहीं कि कोल्लूर से एकांत की खोज में आचार्य इन पहाडों में आ गए । अब हवा भी थम सी गई है । निश्चल । शांत । डरावना एकांत नहीं । लगता है मानो कोई पास आकर मौन उपदेश दे रहा हो कि "तू कुछ नहीं" - एक अदृश्य उपस्थिति । विनोदिनी भी न जाने कुछ सोचकर नीचे की तरफ देखती हुई खडी थी ।"[1]

"हवेली" में संध्या का चित्रण इस प्रकार हुआ है - "बाहर संध्या हो रही है । खलिहान के परे, सुपारी के पेडों के बीच से, पूने कनेर सा/थोडी सी चिंदीं नज़र आ रही है ।"[2]

यहाँ एम. टी. की गद्य शैली का जादू बुलन्द हो उठा है । काव्यमयी भाषा में परिवेश को सजीव करने की दक्षता सचमुच एम. टी. की ही नहीं समूची मलयालम भाषा की ही अन्यतम उपलब्धी है ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - वानप्रस्थम - पृ: 22

[2] एम. टी. वासुदेवन नायर - हवेली - पृ: 46

अलंकृत भाषा

कवि न होने के बावजूद निर्मल वर्मा की रचनाएँ अपनी भाषा के इकहरेपन की दृष्टि से कविता के अधिक निकट है । इसी कारण से उनकी भाषा अलंकरणों से सज धज कर प्रस्तुत होती है । अपने चारों ओर की प्रकृति को इन्होंने यों चित्रित किया है - "धुंध सचमुच छंट गयी थी, हर पहाडी से अलग सिर उठाये खडी थी । अन्नाजी की काटेज अंधेरे में टिमटिमा रही थी, जैसे कोई तारा अंतरिक्ष से गिरता हुआ टीले पर जा अटका था । उसके ऊपर पहाडी की बाजू पर कहीं निरंजन बाबू का बगीचा धुंध में लिपटा था ..... और उन दोनों के बीच कहीं मेहरा साहब का घर था जो मेरी कोठरी से इतनी विशालकाय जान पड़ती थी किन्तु यहाँ से सिर्फ माचिस की तीलियों सी दिखाई देती थी, जिन्हें हवा का झौंका अपने साथ कभी भी उडा कर ले जा सकता था ।" अपने अकेलेपन को नवंबर की प्रकृति से जोडकर उन्होंने यों प्रस्तुत किया है - "बाहर निस्पंद सी धूप फैली थी । नवंबर की रोशनी में एक नीली सी धुंध झील पर घिर आयी थी । कहीं बहुत दूर रेगिस्तान था, जहाँ रजत धूल-धूसरित गाँवों में घूमता होगा एक रूआँसी आकांक्षा उठी, वह यहाँ होता, मेरे पास, हम किसी ढाबें में बैठकर चाय पीते होते, वह मुझे एक दिलासा सी देता था.",[2] "परिन्दे" में मि. ह्यूबर्ट के पियानो वादन और

---

[1] निर्मल वर्मा - अंतिम अरण्य - पृ: 103

[2] निर्मल वर्मा - सूखा तथा अन्य कहानियाँ - पृ: 54

लतिका के मन को यों उकेरा है - "उसी क्षण पियानो पर शोपां का नॉक्टर्न ह्यूबर्ट की उँगलियों से फिसलता हुआ धीरे-धीरे छत के अन्धेरे में घुलने लगा - मानो जल पर कोमल स्वप्निल ऊर्मियाँ भँवरों का झिल - मिलाता जाल बुनती हुई दूर दूर किनारों तक फैली जा रही हो । लतिका को लगा कि जैसे कहीं बहुत दूर बर्फ की चोटियों से परिन्दों के झुंड नीचे अनजान देशों की ओर उडे जा रहे है" ।§1§ इस प्रकार निर्मल वर्मा की भाषा बहुत ही बिंबात्मक एवं आकर्षणीय है ।

एम. टी. की अलंकृत भाषा

अपनी बात को असरदार एवं मोहक बनाने केलिए एम. टी. ने भी अलंकृत भाषा का प्रयोग किया है । उनके द्वारा प्रयुक्त अलंकार, दृश्यों को विशिष्ट भंगिमा प्रदान करते है । उनका उपन्यास "तुषार" इसका उज्वल उदाहरण है । प्रकृति को चित्रित करते वक्त उनकी भाषा सचमुच कविता बन जाती है । जैसे - "झील और नगर के ऊपर अप्रैल का कुहरा, अरसों पहले दिन की नींद में देखे सपने सा उडता रहा" ।§2§ उसीप्रकार - "पश्चिमी ढलान में स्थित जर्जर मंदिर के नीचे के पोखरे के निकट चोंच मारते बतखों का झुंड, ऐसा लग रहा था मानो नीलिमा में बहते झाग हो" ।§3§ कुमाऊँ के छात्रावास में अकेले रहती विमला को "बिस्तर किसी उरग की देह सा ठंडा एवं लचीला लगती है ।

---

§1§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 163

"कालम्" के उण्णि नंपूतिरी व्यक्तित्व के बारे में यों लिखा गया है - "उण्णि नंपूतिरी के मुँह से कोई बात निकलने की प्रतीक्षा में बैठा रहा । सोचा कि कुछ न कुछ बोलकर ज़ोर की हँसी हँस देगा । पर धुंधले प्रकाश में श्मशान भूमि के ठूँठ के समान बिना हिले-डुले, बिना बोले वह बैठा रहा" ।§1§ एक और स्थान पर शब्द की उन्होंने ऐसी विशेषता दी है - "अब शब्द खास-खास अवसरों पर व्यवहार में आने योग्य, जल्दी टूट पडनेवाले, मंजूषा में सुरक्षित रखे जानेवाले आनंदप्रद पदार्थ में बदल गए" ।§2§ माधवन मामा का रेखा चित्र यों खींचा गया है - "माधवन मामा साँवले रंग के थे । नारियल के रेशे के समान इधर-उधर बिखरे पडे बालों से खोपडी का श्वेत रंग प्रकट होता था । वे विरले ही हँसते थे । बात करते समय बडे चौडे दाँतों के बीच से हवा की सी ध्वनि निकलती थी" ।§3§

"दूसरी बारी" में मल्लयुद्ध के दौरान भीम का हिडुंबन पर आक्रमण इस प्रकार चित्रित है - "आखिर कुश्ती के दरमियान जब वह उसके बाल उखाडने लगा तो, हिडुंबन की रीढ़ की हड्डियों के टूटने की आवाज़ मैं ने साफ सुन ली - बहेडा फल - दबने के समान" ।§4§

---

§1§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ: 36

§2§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ: 81

§3§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ: 112

§4§ एम. टी. वासुदेवन नायर - दूसरी बारी - पृ: 132

रात का चित्रण बहुत ही आकर्षक है - "नील आसमान में हज़ारों फूल टिमटिमा रहे हैं । बाल पसारकर ऊँघते पेडों के सिराओं पर सपनीली मुस्कान सी चाँदनी झिलमिलाती है । खाली खलिहान के अहाते में डरावना सौन्दर्य बह रहा है । केले की बगिया की छाया चिंदियों के चारों ओर चाँदनी की लटें लुढ़क रही हैं" ।[1]

निर्मल वर्मा की रचनाओं में परिवेशगत भाषा

निर्मल वर्मा परिवेशगत भाषा के प्रयोग के पक्षधर है । स्थान, पात्र एवं परिवेश के अनुसार उनकी भाषा के अनेक आयाम हैं । डॉ. देवराज उपाध्याय के अनुसार - "प्राचीन रचनाओं की तरह भाषा अब भावाभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं रह गई है । अब वह पात्रों की तरह सक्रिय भाग लेने लगती है । भाषा स्वयं एक पात्र बन गयी है और उसके जीवन की सक्रियता रचना को प्रभावित करने लगी है"[2] ऐसे संदर्भों में भाषा शुद्ध नहीं रहती । यह भी नहीं, आधुनिक रचनाकारों केलिए विशेषकर जो नगरों एवं महानगरों में रहते हैं, अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग सहज ही होता है । इसके साथ ही साथ अन्य प्रान्तीय भाषाओं का प्रयोग भी आधुनिक रचनाकारों में देखने को मिलते है । निर्मल वर्मा की भी इसप्रकार की भाषागत विशिष्टताएँ हैं जैसे - अंग्रेज़ी एवं उर्दू शब्दों का धडल्ले से प्रयोग ।

---

[1] एम. टी. वासुदेवन नायर - कालम् - पृ:
[2] डॉ. देवराज उपाध्याय - कथा-साहित्य - मेरी मान्यताएँ - पृ: 762

अंग्रेज़ी शब्दों का प्रयोग

निर्मल वर्मा ने अपनी रचनाओं के शीर्षक से लेकर नाम, गीत यहाँ तक कि बातचीत के दौरान भावावेग की अभिव्यक्ति केलिए भी अंग्रेज़ी का प्रयोग किया है । "रात का रिपोर्टर", "पिक्चर पोस्टकार्ड", "अमालिया", "लवर्स", "वीकएण्ड" आदि उनके प्रमुख शीर्षक है ।

इनके अधिकांश पात्रों का अंग्रेज़ी नाम है । जैसे - रायना, फ्रांज, मि. ह्यूबर्ट, जूली, फादर एलमंड, मिस वुड, मिस. जोसुआ, लूसी, जेली, जोर्ज, विली । कई रचनाओं में पात्र विदेशी होने के कारण विदेशी नगरों का जिक्र सहज ही आ जाता है । जैसे - "प्राग", "वियन्ना", "लंदन", "वेनिस", "बर्लिन", "ड्रेसडन", "बासल", "न्यूरमबर्ग" आदि । उन्होंने पात्रों की मानसिक हालत एवं भाव की कारगर प्रस्तुति केलिए कई अंग्रेज़ी वाक्यों का भी प्रयोग किया है - "वे दिन" की रायना अपने अतीत के बारे में कहती है - "हम सिर्फ उसमें रहकर जी सकते थे । लेकिन मैं नहीं रह सकी । एक दिन मैं बाहर आ गयी यह जानते हुए भी कि बाहर मैं किसी काबिल नहीं रह गयी हूँ ..... । नाट ईवन फार लव । पीस किल्ड इट इट किल्ड अस" ।§।§ इन्टरप्रेटर और रायना जब विदा लेते है,

---

§।§ निर्मल वर्मा - वे दिन - पृ: 21।

इन्टरप्रेटर
तब ∠ स्टेशन तक साथ चलने का इरादा रखता है, तो रायना कहती है - "इट वुडन्ट हेल्प, इट वुडन्ट हेल्प" ।§1§
"एक चिथडा सुख" की बिट्टी अपने प्रेमी से रूढकर बेकाबू चिल्लाती है - "गेट आऊट ऑफ हियर । गेट आऊट ऑफ माय हाऊस । गेट आऊट, गेट आऊट डोन्ट टच मी, डोन्ट यू एवर डैर टू टच मी" ।§2§

सभी छात्रों के घर जाने के कारण लतिका छात्रावास में अकेली हो जाती है । अकेलेपन से बचाने केलिए डॉ. साहब उसे अपने घर बुलाते है - "मेरे कमरे में एक छोटा सा "कन्सर्ट" होगा, जिसमें मि. ह्यूबर्ट, "शोपां" और चाइकोवस्की" के कंपोज़ीशन बनायेंगे और फिर "क्रीमकोफी" पी जाएगी और उसके बाद अगर समय रहा तो पिछले साल हमने जो गुनाह किए है, उन्हें हम सब मिलकर "कंफैस" करेंगे" ।§3§ और ह्यूबर्ट का कथन - कैन वी डू नत्थिंग फार द डेड एण्ड फार ए लांग टाइम द आनसर हैड बिन नत्थिंग" ।§4§
इसी संदर्भ में मि. ह्यूबर्ट यह भी कहता है - "जीसस सैड, आई आम द लाइफ, द वर्ल्ड, ही दैर फालोएथ मी शाल नाट वाक इन डार्कनैस, बट शैल हैव द लाइफ आफ लाइफ" ।§5§

---

§1§ निर्मल वर्मा - वे दिन - 202
§2§ निर्मल वर्मा - एक चिथडा सुख - पृ: 119
§3§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 132
§4§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 133
§5§ निर्मल वर्मा - परिन्दे - पृ: 147

अंग्रेज़ी शब्दों एवं वाक्यों के अलावा गीतों का प्रयोग भी उन्होंने किया है ।

"परिन्दे" में - "इन ए बैंक लेन आफ द सिटी देयर इज़ ए गर्ल, हू लव्ज़ मी" ।[1]

"पिक्चर पोस्टुकार्ड" में - "थ्री कायन्ज़ इन द फाउंटेन" ।[2]

सितंबर की एक शाम" में -"हवाई डोंट यू बिलीव मी, आई लव यू सो मच" ।[3]

इन सबके अलावा ओडियन, सिनेमा, लैम्पोस्ट, आर्डर, वेटर, एडवेंचर, पासपोर्ट, कज़िन, लैम्प, ट्रेन, स्कायर, चैपल, पोर्च, सैंडविच, लाइब्रेरी, मेट्रन, किन्टरगार्डन, कैटीन, पिक्चर, यूनिवेर्सिटी, डाइवर, कम्पीटीशन, अफ्यर, एयरकण्डीशण्ड, ओवरस्ज, बिलियर्ड, द लास्ट सोल आदि अनेक शब्दों का प्रयोग किया है । इनके अलावा "वे दिन" में कई चेक शब्दों का भी इस्तेमाल हुआ है ।

---

[1] निर्मल वर्मा - बीच बहस में - पृ: 114
[2] निर्मल वर्मा - बीच बहस में - पृ: 124
[3] निर्मल वर्मा - प्रतिनिधि कहानियाँ - पृ: 82

निर्मल वर्मा की अंग्रेज़ी बहुलता में कोई अस्वाभाविकता नहीं है । क्योंकि वे अपने कथा-संसार में जिस दुनिया और परिवेश को चित्रित करते है, उसकेलिए यह उचित ही नहीं, अनिवार्य भी हैं ।

उर्दू का प्रयोग

हिन्दी की साहित्यिक भाषा में उर्दू शब्दों की भरमार ज़रूर है । सभी ने धडल्ले से उर्दू शब्दों का प्रयोग किया है । लेकिन निर्मल वर्मा ने ऐसे शब्दों का प्रयोग किया है, जो अप्रचलित है । "परिन्दे", "तीसरा गवाह", "एक शुरुआत", "दहलीज" आदि उनके प्रमुख शीर्षक है । "पिक्चर पोस्टुकार्ड" में "लफ्ज़", "तब्दीलिया", "लश्कर", "खामखाह", "अलबला" आदि शब्दों का प्रयोग किया है । "सितम्बर की एक शाम" में "फिलहाल","आईना", "जिम्मेदारी", "अरसा", "खुमारी", "लापरवाही", "खौफ़नाकं", "बेफिक्री", "उम्मीद", "मुलाकात" आदि शब्दों का प्रयोग किया है । "लवर्स" में "जर्द", "निगाह", "जिक्र", "लमहा", "शिकायत", "गिला", "धागे" में "इज़ाज़त", "इश्तहार", "इतनी बडी आकांक्षा" में "हरकत", "गमगीन", "लापरवाही", "मुश्किल" आदि शब्दों का प्रयोग किया है ।

एम. टी. की अधिकांश रचनाओं की पृष्ठभूमि उनका जन्म - गाँव कूटल्लूर है । इसलिए केरल के मलबार की आँचलिक भाषा का प्रयोग ही उन्होंने ज़्यादातर किया है । इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि उन्होंने शहरी परिवेश का चित्रण किया नहीं है । कुछ रचनाएँ शहरी परिवेश की भी है । लेकिन इनमें अंग्रेज़ी या अन्य विदेशी शब्दों की भरमार नहीं है ।

निष्कर्ष

यों निर्मल वर्मा और एम. टी. दोनों के कथा साहित्य की शिल्पगत विशिष्टताओं के मूल्यांकन से पता चलता है कि दोनों रचनाकारों की शिल्प एवं संवेदन के क्षेत्र में मौलिक एवं नई दृष्टि है । दोनों ने कथा-साहित्य के परम्परागत ढाँचे को तोडते हूए मौलिक सर्जन प्रतिभा का परिचय दिया है । निर्मल वर्मा ने परम्परागत शैली का विरोध करते हुए लिखा भी है - "बीसवीं शताब्दी में साहित्य की जो विधा सबसे पहले अन्तिम छोर पर आ कर खत्म हो गई, वह कहानी थी । चेखोव की कहानी, कहानी का अन्त है - यों दूसरे शब्दों में कहें, उसके बाद कहानी वह नहीं रह सकेंगी, जिसे आज तक हम कहानी की संज्ञा देते आए हैं । आज प्रश्न चेखोव की परम्परा को आगे बढाने का नहीं है, उससे मुक्ति पाने का है । इसीलिए जब हम नयी कहानी की बात करते हैं, तो हमें कहानी की मृत्यु से चर्चा प्रारंभ करनी चाहिए नयी कहानी अपने में ही एक विरोधाभास है । बीसवीं शताब्दी की सबसे महान कहानी "डैथ इन वेनिस" सिर्फ एक पेम्फल है - या फोकनर की कोई भी कहानी गद्य के टेक्स्चर पर है । एक काव्य खण्ड चट्टान पर खींचे गए भित्तिचित्रों सी जादुई है" ।[11] कथा लेखन के बारे में

एम. टी. ने भी यों लिखा है - "सबसे पहले मन में वातावरण की सृष्टि करता हूँ । वहाँ का घर, प्रकृति या मनुष्य जो भी हो, क्रम से मेरे सामने साफ हो जाता है । फोकसिंग ठीक होते ही उस दीवार का मकडी जाल या पद चिह्न या उस मनुष्य के चेहरे की सूक्ष्म रेखा, कुछ भी साफ हो जाती है । इस प्रकार लिखते वक्त "कुट्टीदीदी" के धोने के बाद सुखाने केलिए डाले गए कपडे की गंध और अम्मुक्कुट्टी के सिर के तेल और केवडे के फूल की गन्ध प्राप्त होती है । हर कहानी वैसे जीवन का टुकडा होती है, साथ ही उससे अलग भी होती है । झाड-झंखाड के बीच से झाँकती कली है, कहानी का बीज । झाड-झंखाड हटाकर, पृष्ठभूमि केलिए ज़रूरी पौधों को रखकर कली का विकास करना ही रचना होती है" ।§।§

यों यह बात स्पष्ट जाहिर है कि शिल्प के क्षेत्र में भी निर्मल वर्मा और एम. टी. ने मौलिकता के अनेक आयाम अपनी रचनाओं के माध्यम से अभिव्यक्त किये है जो आगामी पीढी केलिए अवश्य मार्ग दर्शक बने हैं ।

---

§।§ एम. टी. वासुदेवन नायर - कहानीकार की कार्यशाला - पृ: 22

-0-

उपसंहार

हालांकि सरसरी नज़र से हिन्दी के साहित्यकार निर्मल वर्मा और मलयालम के साहित्यकार एम. टी. वासुदेवन नायर की रचनाएँ तुलना करने योग्य नहीं लगती है; लेकिन इन दोनों की रचनाओं की तह तक पहुँचने पर हमें लगेगा कि एक समान्तर अनुभव संसार उभर कर सामने आ रहा है । दोनों रचनाकार द्वितीय विश्वयुद्धोत्तर परिस्थिति की उपज है । द्वितीय विश्वयुद्ध और स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद की परिवर्तित सामाजिक स्थितियाँ, राजनीतिक विसंगतियाँ, विभाजन की विभीषिकाएँ, मूल्यों में आये बदलाव, नई आस्था की आकांक्षा, व्यक्ति की अस्मिता आदि जीवन के विभिन्न आयाम इन दोनों की सर्जनात्मकता के विषय रहे हैं । इन दोनों लेखकों ने समाज के स्थूल यथार्थ से हटकर व्यक्ति के अन्तर्मन की अनुभूतियों और वैयक्तिक यथार्थ को ही अधिक महत्व दिया है । समाज के स्थूल और बहिर्मुख यथार्थ के चित्रण के विपरीत दोनों की चेतना आधुनिक संदर्भ में निरन्तर अकेले होते जा रहे व्यक्ति के अन्तर्मन की अनुभूतियों की ओर मुडी है। इस संदर्भ में निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर के अपने अनुभव किसप्रकार एक समानान्तर अनुभव संसार का रूप ले लेते हैं, यह तुलना के ज़रिए हम समझ सकते हैं ।

साहित्यकार एक हद तक अपने परिवेश की उपज है । पारिवारिक माहौल ही नहीं, अपने गाँव, कस्बे, देश के सामाजिक,

आर्थिक एवं राजनीतिक परिस्थितियाँ साहित्यकार के सर्जनात्मक रूपायन में भूमिका निभाती हैं । किसी भी रचनाकार की सर्वांगीण आलोचना एवं उनकी सर्जनात्मक हैसियत के मूल्यांकन केलिए इन परिस्थितियों की अपनी भूमिका है । पर निर्मल वर्मा के संदर्भ में यह गौर करने की बात है कि उनकी सर्जनात्मक रचनाओं में राजनीतिक एवं सामाजिक घटनाओं का सीधा प्रभाव पडा नहीं है । उनकी दृष्टि व्यक्ति और व्यक्ति मानस की गहराई में गडी हुई है । बहुत सालों तक वे प्रवासी रहे थे । इसलिए भारतीय परिवेश से निरपेक्ष रहना उनकी मज़बूरी थी । लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि वे राजनीतिक घटनाओं से बिल्कुल परहेज रहे हैं । भारत का आपात्काल, जो भारतीय इतिहास पर पडा काला धब्बा रहा है - का प्रखर प्रभाव "रात का रिपोर्टर" में हुआ है । रिपोर्टर, जो सदमा झेलता है, वह सचमुच प्रत्येक भारतीय नागरिक का ही तजुरबा रहा है । स्वतन्त्रता के बाद भारत के सामाजिक जीवन में जो परिवर्तन आए, संबन्धों में जो विघटन हुए, व्यक्ति जो अयाचित स्थिति से गुज़रने के लिए मज़बूर हो गया, इन सबका अप्रत्यक्ष प्रभाव निर्मल वर्मा की सर्जनात्मकता पर पडी है । स्वतन्त्रता के पूर्व भारतवासी ने जिस स्वर्णिम सामाजिक व्यवस्था का सपना संजोया था, वह सपना ही रह गया । समाज की राहें हिपोक्रसी की धुंध से गुमराह हो गयीं । तकनीकी आन्दोलन और औद्योगीकरण के कारण विदेशी नगर सभ्यता से मिलती जुलती एक यंत्रवत् समाज और ज़िन्दगी का प्रस्फुटन हुआ । व्यक्ति का अस्तित्व तक खतरे में पड गया । दैनिक जीवन की बोरियत उसे व्यक्तित्वहीन बनाने में सहायक सिद्ध हो गयी ।

सब अलग होकर अपने अपने दायरे में दम घुटने लगे । इसलिए वे मिसफिट या असंगत होने के भाव से संत्रस्त भी रहने लगे । फालतूपन का अहसास व्यक्ति निगलता है और अपने को कहीं भागीदार न बन पाने की बेबसी में वह सबसे "एलिनेटड" भी हो जाता है । निर्मल वर्मा की अधिकांश रचनाओं में यही भाव उदात्त दशा तक पहुँचा गया है ।

एम. टी. भी आत्मोन्मुख कलाकार है। अपने पारिवारिक परिवेश ने ही उन्हें गहराई से प्रभावित किया था । सृजन के संदर्भ में वे सामाजिक नज़रिए से ज़्यादा अपने वैयक्तिक दृष्टिकोण को ही महत्व देते हैं । संयुक्त पारिवारिक व्यवस्था और उसके परिवर्तन से जुडी सभी आयामों का बारीकी वाङ्मय एम. टी. के कथा-संसार का अनिवार्य हिस्सा है । संयुक्त परिवार की अधिनायक मनोवृत्ति का आघात युवा-पीढ़ी पर किस प्रकार पडता है, इसका ज्वलंत सबूत है एम. टी. की रचनाएँ । "हवेली", "असुर-बीज", "कालम", "विलापयात्रा" आदि उपन्यासों में चित्रित पारिवारिक वातावरण से तत्कालीन यथार्थ परिवेश बिल्कुल भिन्न नहीं है । दूसरे विश्वयुद्ध के पहले ही केरल की आर्थिक स्थिति बहुत दयनीय थी । उस वक्त "कोची सरकार" द्वारा किये आर्थिक सर्वे के अनुसार अधिकांश लोगों की आय प्रतिवर्ष सौ रुपए से कम थी । समाज का उच्चवर्ग ही मानव की बुनियादी ज़रूरतों का निर्वाह कर सकता था । इसी विपन्न माहौल में द्वितीय विश्वयुद्ध, अकाल एवं महामारी का भीषण आक्रमण हुआ था ।

इन सबके अलावा अंग्रेज़ों ने बडी तादाद में सैनिकों को नौकरी से निकाल भी दिया । निष्कासित अपने देश लौटकर इधर-उधर भटकने लगे । इस हालात से मध्यवर्ग बुरी तरह घबरा गया । ज़िन्दगी गुज़ारने के वास्ते नौकरी की तलाश में लोग सिंगपूर और श्रीलंका की ओर निकल पडे । एम. टी. के कथा-संसार के पिताजी, जो श्रीलंका में कार्यरत हैं, दरअसल इसी आर्थिक परिस्थिति की उपज एवं ऐसे हज़ारों नौकरी पेश लोगों के प्रतिनिधि है ।

दोनों के रचना-संसार में व्याप्त दार्शनिक आयामों पर विचार करते वक्त एक अन्तर्धारा के रूप में अस्तित्ववादी दर्शन ही प्रमुख रूप में नज़र आता है । प्रवासी होने के कारण निर्मल वर्मा पर इसका प्रभाव बहुत गहरा पडा है । प्रवासी जीवन के अकेलापन एवं महायुद्ध के बाद के संत्रस्त परिवेश को उन्होंने स्पष्टतः चित्रित किया है । निर्मल वर्मा के "वे दिन", "लाल टीन की छत" एवं "अन्तिम अरण्य" आदि उपन्यासों में "अकेलापन" एक प्रवृत्ति के रूप में दिखलाई पडती है । "एक चिथडा सुख", "रात का रिपोर्टर" आदि उपन्यासों में भी यह भाव आया है । "परिन्दे", "धागे", "डेढ़ इंच ऊपर", "एक और शुरुआत" आदि कहानियों का नीवाधार भी यही भाव है ।

एम. टी. के सृजनकाल में केरल की सामाजिक व्यवस्था सामन्तवादी थी । पारिवारिक व्यवस्था का अधिष्ठान

संयुक्त-परिवार का ताना-बाना रहा था । समाज और परिवार में व्यक्ति के स्वकीय अधिकारों का कोई महत्व नहीं था । उन्होंने संयुक्त परिवार के रूढ़िगत एवं संकुचित विचारों, एवं उसकी अधिनायक वृत्ति के खिलाफ विद्रोह का स्वर बुलन्द किया है । साथ ही खानदान के परिवेश से अंतर्मुखी एवं संत्रस्त बने पात्रों के अकेलेपन को भी रचनाओं में ज़हिर किया है । इनके "तुषार", "असुरबीज", "दूसरी बारी" आदि उपन्यासों एवं "सियार के ब्याह", "कुट्टी दीदी" जैसे सभी रचनाओं के केन्द्र में अकेलापन ही मौजूद है ।

निर्मल वर्मा और एम. टी. वासुदेवन नायर दोनों की रचनाएँ व्यक्ति की स्वतंत्रता को बुलन्द करती हैं । निर्मल वर्मा की अधिकतर रचनाओं की पृष्ठभूमि विदेशी है । उनकी रचनाओं के तमाम पात्र अपनी नियति या जीवन को खुद चुननेवाले हैं । उनके प्रथम उपन्यास "वे दिन" की नायिका रायना विवाहिता और एक बच्चे की माँ है । लेकिन वह अपने अकेलेपन की मायूसी से बचने केलिए घर छोडकर शहर-दर शहर भटकती रहती है । उपन्यास के अन्य पात्रों में फ्रांज और मारिया दोनों शादी के बगैर साथ जी रहे है । इन्टरप्रेटर, टी. टी., मेलन्कोविच - सब अपनी अपनी ज़िन्दगी गुज़ार रहे हैं । "एक चिथडा सुख" के डैरी, इरा, नित्ती भाई - सब बोहेमियन जीवन बितानेवाले कलाकार हैं । वे बिल्कुल स्वतन्त्र हैं, उनके रहने का अपना अलग ढंग है, उनके अपने अलग दोस्त हैं । यह बात निर्मल वर्मा के सभी पात्रों पर हावी है ।

एम. टी. के सभी पात्र निर्मल वर्मा के पात्रों सा उतना स्वतन्त्र नहीं हैं । विशेषकर स्त्री-पात्र । शायद इसका कारण केरल की विशेष सामाजिक परिस्थिति ही होगी । फिर भी "हवेली" के अप्पुण्णी एवं पारुक्कुट्टी, "कालम" का सेतु, "विलापयात्रा" का उण्णिमाधवन, "कुट्टीदीदी" की कुट्टीदीदी आदि सब स्वतन्त्र पात्र हैं ।

दोनों के कथा-साहित्य में अभिव्यक्त मृत्युबोध पर विचार करते वक्त ज़ाहिर हो जाता है कि दोनों ने सूक्ष्म संवेदना के चित्रण के द्वारा मृत्युबोध को पाठकों तक पहुँचा दिया है । निर्मल वर्मा ने "मृत्यु" और "मरने में" भेद व्यक्त किया है । इनके "अंतिम अरण्य", "परिन्दे", "कुत्ते की मौत", "बीच बहस में", "डेढ इंच ऊपर" आदि रचनाओं में तीव्र संवेदना के साथ मृत्युबोध का चित्रण हुआ है । "बीच बहस में", "डायरी का खेल" आदि में मृत्युबोध के साथ-साथ जिजीविषा भी प्रकट है । एम. टी. की रचनाओं में भी मृत्यु चेतना की सर्वांगीण अभिव्यक्ति हुई है । उन्होंने मृत्यु को विभिन्न कोणों से देखा-परखा है । "विलापयात्रा" में मृत्यु की भूमिका पृष्ठभूमि की है, तो "तुषार" में वह मानव जीवन का अनिवार्य सत्य बन गया है । "असुरबीज" में महामारी से उत्पन्न मृत्यु के तांडव-नृत्य का चित्रण है । "मृत्यु" और "वे" में मृत्यु का प्रतीकात्मक चित्रण हुआ है । "छोटे-छोटे भूकंप" एवं "जन्नत के खुलने का वक्त" में मृत्युभय की पृष्ठभूमि में संबन्धों के अजनबीपन एवं सतहीपन का पर्दाफाश किया गया है ।

परिस्थितियों के दबाव ने व्यक्ति को एक समय अनेक स्तरों पर जीने केलिए विवश कर दिया है । आदमी जहाँ है, अपने को अकेला और फालतू महसूस करता है । इन संदर्भों में मानव व्यर्थता-बोध से भर जाता है । निर्मल वर्मा और एम. टी. दोनों के पात्र निराशा एवं व्यर्थताबोध से लैस हैं । निर्मल वर्मा की "लाल टीन की छत" की काया, "रात का रिपोर्टर" का रिशी, "अंतिम अरण्य" का मेहरा साहब, "परिन्दे" की लतिका, "मायादर्पण" की तरन - ये सभी पात्र अपने बीते जीवन की स्वर्णिम स्मृतियों का पुनःसृजन करते हुए वर्तमान को सह रहे हैं । वर्तमान यथार्थ से उनके जीवन का रंग फीका पड गया है । एम. टी. के पात्र भी इसी कोटि में आते हैं । बचपन और किशोरावस्था में जीवन की जो हरितिमा उन्हें नष्ट हुई थी, यौवन में उसे पाकर वे उनकी निरर्थकता को पहचानते है । "हवेली" का अप्पुण्णी, "कालम" का सेतु, "तुषार" की विमला सब विसंगति एवं व्यर्थताबोध से लैस हैं । उनके पात्र इस सत्य को अवगत कराते हैं कि वस्तु के बजाय उसकी अप्राप्य अवस्था ही मानव को ज़्यादा मुग्ध बनाती है ।

यों यह ज़ाहिर है कि दोनों साहित्यकार अस्तिवादी-विचारधारा से प्रभावित हैं । प्रवासी होने के कारण निर्मल वर्मा पर इसका प्रभाव गहरा है । एम. टी. ने आधुनिक जीवन परिवेश का सर्वांगीण चित्रण किया है, जिसमें आज़ादी के बाद के मोहभंग का स्वर बुलन्द है । यह एम. टी. के दर्शन का एक स्पष्ट परिणाम है ।

"हवेली" में यह आसक्ति के रूप में है, तो "विलापयात्रा" में निस्संगता में परिणत हो गया है । इसप्रकार उनका दर्शन आसक्ति से आलस्य की ओर अग्रसर है । एम. टी. यहाँ अस्तित्व दर्शन के इस घोषणा के स्तर तक पहुँच जाते हैं कि "मानव कुछ भी नहीं है, वह कुछ बन जाता है ।" बारीकी से यह निर्धारित नहीं किया जा सकता है कि सृजन के अमुक-अमुक मुकाम अस्तित्ववाद के प्रभाव से स्वरूप ग्रहण कर सका है । लेकिन उनमें चित्रित अकेलापन, स्वतन्त्रताबोध, विसंगति, व्यर्थताबोध एवं मृत्युबोध अवश्य अस्तित्ववादी दर्शन के प्रभाव से ही घनीभूत पडे हैं ।

दोनों रचनाकारों के कथा साहित्य में प्रेम एक महत्वपूर्ण मूल्य बनकर आया है । प्रेम के संदर्भ में दोनों ही उसके अनेक आयामों की अभिव्यक्ति दी है । कहीं प्रेम एक समस्या है, तो कहीं मुक्त-भोग का माध्यम, तो कहीं संबन्ध बनाने की ललक के तौर पर ज़ाहिर हुआ है । मात्र आकर्षण से उत्पन्न अस्थिर प्रेम से लेकर पति पत्नी के विवाहेतर संबन्ध तथा शुद्ध भावात्मक प्रेम तक का चित्रण दोनों के रचना-संसार में उपलब्ध हैं । दोनों का कथा-संसार मुख्यत: अतीत स्मृतियों का लेखा -जोखा है । परिवार की सुविधा एवं पारिवारिक संबन्धों की ऊष्मा से कटे लोगों से इन लोगों का कथा-संसार भरा पडा है । निर्मल वर्मा के "दो दिन" का नायक कल्कत्ता के घर की स्मृतियों में जीता है । "स्वदेशी के मुस्कान की गर्मी" उसे अपनी देश की याद दिलाती है । विदेश में उसका अपना घर है,

पत्नी है, बच्चे हैं । पर वह हमेशा कल्कत्ता जाने केलिए तडपता रहता है । "बीच बहस में" के पिताजी, "मायादर्पण" के दिवान साहब, "परिन्दे" की लतिका सब अतीत की स्मृतियों में जीनेवाले पात्र हैं ।

एम. टी. के पात्र भी अतीत-प्रेमी हैं । उनके पात्रों के मन में बीच बीच में संयुक्त परिवार की ज़िन्दगी की स्मृतियाँ जाग उत्ती हैं । गाँव से निकलकर मज़बूरन शहर में बसे कोई भी अमूमन गाँव की भंगिमा एवं भलाई की न याद करते हैं और वहाँ लौट जाने के स्वप्न भी देखते हैं ।

स्वच्छन्द यानी रोमांटिक वृत्ति के साहित्यकारों ने मानव के रागात्मक संबन्धों के साथ प्रकृति और मानव के आपसी अटूट रिस्ते को भी महत्व दिया है । निर्मल के कथा-संसार में प्रकृति के अनेक मोहक लघु चित्र मिलते हैं । यह कहीं पात्रों के मनोभूमि के अंग के रूप में आए हैं, तो कहीं स्वतन्त्र भी हैं । एम. टी. द्वारा प्रयुक्त चिह्न, प्रतीक एवं कल्पना प्रकृति की गोद के हैं । वे अपने गाँव की प्रकृति से बहुत ही मुग्ध हैं । वे अपने गाँव की नदी 'निला' से प्रगाढ़ रागात्मक संबन्ध रखते हैं ।

निर्मल वर्मा और एम. टी. दोनों रचनाकारों ने कहीं भी परिवेश से टकराने या उन्हें अपने पक्ष में करने का हत्पूर्वक प्रयास नहीं किया है । लेकिन ये दोनों ही समाज के मझधार में रहे हैं,

दोनों ने
समाज के सभी आयामों को देखा समझा भी है । निर्मल वर्मा की रचनाओं में बदलते सामाजिक परिवेश का चित्रण, भूख एवं गरीबी बेकारी, युद्ध आदि सामाजिक सच्चाईयों का विश्लेषण मिलता है । इनके "एक चिथडा सुख", "अमालिया","लंदन की एक रात", आदि रचनाओं में भूख एवं गरीबी का चित्रण है । इनके "पिक्चर पोस्टुकार्ड", "लन्दन की एक रात", "माया का मर्म" आदि कहानियों में बेकारी की समस्या का चित्रण है । विदेशी मिट्टी से लेखक का अनुभूत्यात्मक संबन्ध रहा है । इसीलिए ही उन्होंने द्वितीय विश्व-युद्धोत्तर ज़िन्दगी की पीडा और त्रास को संवेदनात्मक धरातल पर प्रभावी ढंग से उभारा है । जैसे पहले ही बता चुके है, एम. टी. का जन्म मातृसत्तात्मक परिवार में हुआ था । वह पारिवारिक व्यवस्था विघटन के कगार पर थी । इसलिए हवेलियों में गरीबी और स्वाभिमान ही बच गये थे । एम. टी. की सभी रचनाओं में इसका उल्लेख है । इनका एक एक शब्द सामाजिक अनुभव की गाढ़ी चाशनी में लिपटा हुआ है ।

दोनों रचनाकारों ने शिल्प के क्षेत्र में नये तकनीक को अपनाया था । दोनों ने कृति के समग्र गठन एवं उसकी कलात्मक बुनावट पर अधिक बल दिया है । दोनों ही चेतना-प्रवाह पद्धति, काव्यात्मक एवं भावानुकूल भाषा, बिंब एवं प्रतीक आदि का प्रचुर मात्रा में प्रयोग किया है । दोनों ने अधिकतर आत्मकथात्मक शैली का प्रयोग किया है, जहाँ लेखक कथावाचक ही रहता है ।

"वे दिन", "एक चिथडा सुख", "लाल टीन की छत", "अंतिम अरण्य" - चारों उपन्यास पात्रों की यादों के तौर पर लिखे गये हैं । इनकी अधिकांश कहानियाँ भी इसप्रकार की हैं जैसे "परिन्दे", "डायरी का खेल", "खोज" आदि । एम. टी. ने भी उपन्यास एवं कहानी संरचना में इस तकनीक का सफल प्रयोग किया है । यह पद्धति दरअसल कथा-सूत्र के तमाम अनुभूतियों को संवहन करने में बहुत ही सफल सिद्ध हुआ है । उनके उपन्यास "तुषार" और "विलापयात्रा" इसका ज्वलंत उदाहरण हैं । उन्होंने "पालतू जानवर", "एक जन्मदिन की याद में", "नीला कागज़", "तेरी याद में", "पटाखे", आदि में भी इस पद्धति को अपनाया है ।

निर्मल वर्मा और एम. टी. के कथा साहित्य के उपरोक्त सभी आयामों को समेटते हुए निष्कर्ष के तौर पर हम यह कह सकते हैं कि दोनों की जीवन दृष्टि और सर्जनात्मकता में बहुत कुछ समानताएँ हैं । लेकिन यह भी गौरतलब बात है कि वे अपना रचना-संसार जिन परिवेशों से बुनते हैं, उनकी ज़मीन अलग-अलग किस्म की है । फिर भी दोनों को एक दायरे में बाँधते हुए हम कह सकते हैं कि ये दोनों महान साहित्यकार "रोमांटिक ह्यूमनिस्ट" हैं ।

-0-

संदर्भ ग्रन्थ सूची

निर्मल वर्मा की रचनाएँ

उपन्यास

1. वे दिन — राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, पाँचवाँ संस्करण, 1989.

2. लाल टीन की छत — राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1989.

3. एक चिथडा सुख — राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1979.

4. रात का रिपोर्टर — राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1992.

5. अंतिम अरण्य — राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 2000.

कहानी संग्रह

6.	परिन्दे	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
7.	जलती झाडी	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, चतुर्थ संस्करण, 1979.
8.	पिछली गर्मियों में	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1968.
9.	बीच बहस में	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1991.
10.	कव्वे और कालापानी	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1989.
11.	प्रतिनिधी कहानियाँ	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, तृतीय संस्करण, 1990.
12.	सूखा तथा अन्य कहानियाँ	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1995.

यात्रा संस्मरण व डायरी

13.	चीडों पर चाँदनी	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1963.
14.	हर बारिश में	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1970.
15.	धुंध से उठती धुन	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1997.

निबन्ध

16.	शब्द और स्मृति	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1976.
17.	कला का जोखिम	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1981.
18.	ढलान से उतरते हुए	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1985.

19.	भारत और यूरोप प्रतिश्रुति के क्षेत्र में	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण, 1995.
20.	इतिहास स्मृति आकांक्षा	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1991.
21.	शताब्दी के ढलते वर्षों में	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1995.
22.	आदि, अन्त और आरंभ	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2001.

नाटक

23.	तीन एकांत	राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली,

संचयन

24.	दूसरी दुनिया	संभावना प्रकाशन, हापुड, 1978.

एम. टी. की रचनाएँ

उपन्यास

1.	नालुकेट्ट	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, प्रथम संस्करण, 1954.
2.	पातिरावुं पकलवेलिच्चवुं	पी. के. ब्रदेर्स, कालिकट, प्रथम संस्करण, 1958.
3.	अरबिपोन्नु (एन. पी. मुहम्मद से मिलकर)	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, प्रथम संस्करण, 1960.
4.	असुरवित्तु	करन्ट बुक्स, तृश्शूर. प्रथम संस्करण, 1962.
5.	मञ्ञु	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, प्रथम संस्करण, 1964.
6.	कालम्	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, प्रथम संस्करण, 1969.

7.	विलापयात्रा	साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघ, कोट्टयम्. प्रथम संस्करण, 1978.
8.	रन्टामूष़म्	साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघ, कोट्टयम्, प्रथम संस्करण, 1984.

कहानी संग्रह

9.	रक्तम पुरन्ट - मणलत्तरिकल्	
10.	वेयिलुम निलावुम	जनता पब्लीशिंग हाऊस, मद्रास, 1954.
11.	वेदनयुटे पूक्कल	समदर्शी, पालक्काड, 1955.
12.	निन्टे ओरमक्कु	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1956.
13.	ओलवुम तीरवुम	जनता बुक्स, तृश्शूर, 1957.
14.	इरुट्टिन्टे आत्मावु	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1957.

15.	कुट्टियेटत्ति	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1959.
16.	नष्टप्पेट्ट दिनङ्. गल्	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1960.
17.	बन्धनम्	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1963.
18.	पतनम्	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1966.
19.	कलिवीडु	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1966.
20.	वारिक्कुऴी	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1967.
21.	एम्. टी. युटे तिरन्ञेडुत्त कथकल्	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1968.
22.	दार-ए-सलाम	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1972.
23.	अज्ञातन्टे उयरात्त स्मारकम	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1972.
24.	अभयम तेडि वीन्टुम	साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघ, कोट्टयम, 1978.

25.	स्वर्गं तुरक्कुन्न समयं	पूर्णा पब्लीकेशन्स, कालिकट्, 1980.
26.	वानप्रस्थम	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1992.
27.	षेरलक	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1998.

यात्रा संस्मरण

28.	मनुष्यरू ; निष़्लुकल्	पूर्णा पब्लीकेशन्स, कालिकट, 1960.
29.	आलक्कूट्टत्तिल तनिये	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1972.
30.	वनकरयिले तुष़वल्लक्कार	करन्ट बुक्स, तृश्शूर

निबन्ध संग्रह

31.	काथिकन्टे पणिप्पुरा	करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1963.

32. हेमिङ्.वे - ओरु मुखवुरा — करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1968.

33. काथिकन्टे कला — डी.सी. बुक्स, कोट्टयम, 1984.

34. किलिवातिलिलूडे — ओगस्त बुक्स, वलप्पाड्, 1992.

35. एकाकिकलुटे शब्दं — डी.सी. बुक्स, कोट्टयम, 1994.

36. रमणीयं ओरु कालम् — ओलीव पब्लिकेशन्स, 1998.

नाटक

37. गोपुरनटयिल् — पूर्णा पब्लीकेशन्स, कालिकट्, 1980.

बाल साहित्य

38. माणिक्य कल्ल् — करन्ट बुक्स, तृश्शूर, 1957.

39. दया एन्ना पेणकुट्टी — मलयालम पब्लीकेशन्स, कालिकट, 1987.

1.	अधूरे साक्षात्कार	नेमीचन्द्र जैन, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली द्वि:सं: 1989.
2.	अस्तित्ववाद	महावीर दधीच, शब्द लेखा प्रकाशन, बीकानेर 1968.
3.	अस्तित्ववाद और द्वितीय समरोत्तर हिन्दी साहित्य	शिवकुमार मिश्र, विद्या प्रकाशन मंदिर, सं: 1971.
4.	अस्तित्ववाद और शिक्षा	कुसुमलता राठौर, अनु बुक्स, शिवाजी मार्ग, मेरठ - 1997.
5.	अस्तित्ववाद और साहित्य	डॉ. श्यामसुन्दर मिश्र, विद्या प्रकाशन मंदिर - 1971.
6.	आज और आज से पहले	कुँवर नारायण, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रं: सं: 1998.
7.	आधुनिक कहानी का परिपार्श्व	डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, साहित्य भवन, इलाहाबाद, सं: 1966.

8.	आधुनिक परिवेश और अस्तित्ववाद	डॉ. शिवप्रसाद सिंह, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र: सं: 1970.
9.	आधुनिक भावबोध की संज्ञा	अमृतराय, हंस प्रकाशन, इलाहाबाद, सं: 1977.
10.	आधुनिक हिन्दी कहानी	गंगाप्रसाद विमल, दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, प्र: सं: 1978.
11.	आधुनिक हिन्दी उपन्यास	नरेन्द्र मोहन, दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, प्र: सं: 1975.
12.	आधुनिक हिन्दी उपन्यासों में प्रेम की परिकल्पना	डॉ. विजयमोहन सिंह, रचना प्रकाशन, इलाहाबाद, 1972.
13.	आधुनिक हिन्दी साहित्य	सच्चिदानन्द वात्स्यायन "अज्ञेय", राजपाल एण्ड सन्ज़, दिल्ली, प्र: सं: 1976.
14.	आधुनिक साहित्य और इतिहासबोध	डॉ. नित्यानन्द तिवारी, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र: सं: 1982

15.	आधुनिकता और सृजनात्मक साहित्य	इन्दनाथ मदान, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, सं: 1978.
16.	आधुनिकता बोध और आधुनिकीकरण	रमेश कुंतन मेघ, अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली, 1975.
17.	आधुनिकता और सर्जनशीलता	रघुवंश, मैकमिलन इंडिया लिमिटेड, दिल्ली, 1980.
18.	आधुनिकता और समकालीन रचना संदर्भ	नरेन्द्र मोहन, आदर्श साहित्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 1972.
19.	आधुनिकता के पहलू	विपिन कुमार अग्रवाल, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र: सं: 1972.
20.	आधुनिकता के संदर्भ में आज का हिन्दी साहित्य	अतुलवीर अरोडा, पब्लिकेशन ब्यूरो, पंजाब यूनिवेर्सिटी, 1974.
21.	आधुनिकता साहित्य के संदर्भ में	गंगाप्रसाद विमल, दि मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, सं: 1978.

22.	आस्वादन के धरातल	धनंजय वर्मा, विद्या प्रकाशन मंदिर, दिल्ली, प्र: सं: 1969.
23.	उपन्यास का पुनर्जन्म	परमानन्द श्रीवास्तव, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र: सं: 1995.
24.	उपन्यास का यथार्थ और रचनात्मक भाषा	परमानन्द श्रीवास्तव, नाशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1974.
25.	उपन्यास का शिल्प	गोपाल राय, बिहार हिन्दी अकाडमी, पटना, सं: 1973.
26.	उपन्यास तत्व एवं स्वविधान	नारायण अग्निहोत्री, साधना सदन, कानपुर, 1962.
27.	उपन्यास स्थिति और गति	डॉ. चन्द्रकांत बोदिवडेकर, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, सं: 1993.
28.	कथा साहित्य मेरी मान्यताएँ	डॉ. देवराज उपाध्याय, सौभाग्य प्रकाशन, इलाहाबाद, 1975.

29.	कहानी अनुभव और शिल्प	जैनेन्द्र कुमार, पूर्वोदय प्रकाशन, नई दिल्ली, सं: 1967.
30.	कहानी का रचनाविधान	जगन्नाथ प्रसाद शर्मा, हिन्दी प्रचारक पुस्तकालय, वाराणासी, सं: 1963.
31.	कहानी की समाजशास्त्रीय समीक्षा	रमेश उपाध्याय, नमन प्रकाशन, नई दिल्ली, सं: 1999.
32.	कहानी की संवेदनशीलता - सिद्धान्त और प्रयोग	डॉ. भगवान दास शर्मा, ग्रन्थम, कानपुर, 1972.
33.	कहानी के इर्द-गिर्द	उपेन्द्रनाथ अश्क, निलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, सं: 1971.
34.	कहानी नयी कहानी	डॉ. नामवर सिंह, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, द्वि: सं: 1973.
35.	कहानी संवाद का तीसरा आयाम	नटरोही, नाशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, प्र: सं: 1983

36.	कहानी :स्वरूप और संवेदना	राजेन्द्र यादव, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली.
37.	कहानीकार निर्मल वर्मा	मधु सन्धु, दिनमान प्रकाशन,
38.	गद्य की सत्ता	रामस्वरूप चतुर्वेदी, दि मैकमिलन कंपनी, नई दिल्ली, सं: 1966.
39.	चेतना प्रवाह पद्धति	डॉ. मोहनलाल कपूर, साकेत समीर प्रकाशन, नई दिल्ली, सं: 1988.
40.	तुलनात्मक अध्ययन	कृष्णचन्द्र शर्मा, देवी शरण दस्तोगी,
41.	तुलनात्मक अध्ययन भारतीय भाषाएँ और साहित्य	राजू रमण, राजकमल वोरा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.
42.	तुलनात्मक अध्ययन स्वरूप और समस्याएँ	भ. ह. राजू रकर, राजकल वोरा, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली.

43.	तुलनात्मक अनुसन्धान और आलोचना	के. रामनाथन, प्रगति प्रकाशन, आग्रा, सं: 1974.
44.	तुलनात्मक शोध और समीक्षा	पी. आदेश्वर राव, प्रगति प्रकाशन, आग्रा, सं: 1972.
45.	तुलनात्मक साहित्य	डॉ. नगेन्द्र, नाशनल पब्लिशिंग हाऊस, नई दिल्ली, 1985.
46.	तुलनात्मक साहित्य की भूमिका	इन्द्रनाथ चौधरी, दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास, सं: 1983.
47.	तुलनात्मक साहित्य शास्त्र इतिहास और समीक्षा	विष्णुदत्त राकेश, साहित्य सदन, देहरादूर, सं: 1968.
48.	द्वितीय महायुद्धोत्तर हिन्दी साहित्य का इतिहास	डॉ. लक्ष्मी सागर वार्ष्णेय, राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली.
49.	नया साहित्य नए प्रश्न	नन्ददुलारे वाजपेयी, द मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1978.

50.	नयी कहानी उपलब्धि और सीमाएँ	डॉ. गोरधन सिंह शेखावत,
51.	नई कहानी की भूमिका	कमलेश्वर, शाब्दकार प्रकाशन, दिल्ली, 1978.
52.	नयी कहानी की मूल संवेदना	डॉ. सुरेश सिन्हा, भारतीय ग्रन्थ निकेतन, दिल्ली, 1966.
53.	नयी कहानी दशा, दिशा, संभावना	(सं) श्री. सुरेन्द्र, अपोलो पब्लिकेशन, जयपुर, 1966.
54.	नयी कहानी प्रकृति और पाठ	(सं) श्री. सुरेन्द्र, परिवेश प्रकाशन, जयपुर, प्र:सं: 1968.
55.	नयी कहानी संदर्भ और प्रकृति	देवीशंकर अवस्थी, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1966.
56.	निर्मल वर्मा	(सं) अशोक वाजपेयी, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्र: सं: 1990.

57.	निर्मल वर्मा सृजन और चिंतन	डॉ. प्रेम सिंह, साहित्य सहकार, दिल्ली, प्र: सं: 1995.
58.	रचना और आलोचना	देवीशंकर अवस्थी, द मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1979.
59.	राष्ट्रीय नवजागरण और साहित्य - कुछ प्रसंग कुछ प्रवृत्तियाँ	वीरभारत तलवार, हिमाचल पुस्तक भण्डार, दिल्ली, 1993.
60.	विषादयोग	कुबेरनाथ राय, नैशनल पब्लिशिंग हाउस, प्र: सं: 1973.
61.	व्यक्ति चेतना और स्वातंत्रोत्तर हिन्दी उपन्यास	पुरुषोत्तम दुबे, अनुपमा प्रकाशन, बंबई, 1973.
62.	समकालीन कहानी दिशा और दृष्टि	अभिव्यक्ति प्रकाशन, इलाहाबाद, 1970
63.	समकालीन सिद्धान्त और साहित्य	विश्वंभर नाथ उपाध्याय, द मैकमिलन कंपनी आफ इंडिया लिमिटेड, नई दिल्ली, 1976.

64.	समकालीन हिन्दी उपन्यास	डॉ. विवेकी राँय, राजीव प्रकाशन, इलाहाबाद, प्र: सं: 1987.
65.	समकालीन हिन्दी उपन्यास की भूमिका	डॉ. रणवीर रांग्रा, जगतराम एण्ड सन्स, दिल्ली, 1986.
66.	समकालीन हिन्दी कहानी, स्त्री-पुरुष संबन्ध	डॉ. सुनंत कौर, अभिव्यंजना प्रकाशन, नई दिल्ली.
67.	समानान्तर	रमेश चन्द्र शाह, सरस्वती प्रेस, इलाहाबाद, 1977.
68.	स्वातंत्रोत्तर हिन्दी उपन्यास का शिल्प	माधुरी खोसला, विजयन्त प्रकाशन,
69.	साहित्य और समकालीन संदर्भ	शिवकुमार मिश्र, विद्या प्रकाशन मंदिर,
70.	सोबती एक सोहबत	कृष्णा सोबती, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 1989.

71.	हस्तक्षेप	धनंजय वर्मा, विद्या प्रकाशन मंदिर,
72.	हिन्दी उपन्यास	डॉ. सुरेश सिन्हा, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1972.
73.	हिन्दी उपन्यास एक अन्तर्यात्रा	रामदरश मिश्र, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 1992.
74.	हिन्दी उपन्यास एक सर्वेक्षण	महेन्द्र चतुर्वेदी, नाशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1962.
75.	हिन्दी उपन्यास उपलब्धियाँ	डॉ. लक्ष्मीसागर वार्ष्णेय, राधाकृष्ण प्रकाशन, दिल्ली, 1970.
76.	हिन्दी उपन्यास कला	प्रतापनारायण टंडन, हिन्दी समिति, लखनऊ, 1965.
77.	हिन्दी उपन्यास की प्रवृत्तियाँ	डॉ. शशिभूषण सिंहल, विनोद पुस्तक मंदिर, आगरा, 1988.

78. हिन्दी उपन्यास की शिल्पविधि का विकास — नागकृष्णा, लोकचेतना प्रकाशन, जबलपुर, 1962.

79. हिन्दी उपन्यास सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और स्वरूप — प्रभा वर्मा, क्लासिकल पब्लिशिंग कंपनी, नई दिल्ली, 1990.

80. हिन्दी के लघु उपन्यासों का शिल्प — माधुरी खोसला, विजयन्त प्रकाशन, नई दिल्ली.

81. हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव — भरतभूषण अग्रवाल, ऋषभ चरण एवं संतति, दिल्ली, 1971.

82. हिन्दी उपन्यास युग चेतना और पाठकीय संवेदना — मुकुन्द द्विवेदी, लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद, 1970.

83. हिन्दी उपन्यास शिल्प और प्रयोग — त्रिभुवन सिंह, हिन्दी प्रचारक, वारणासी.

84. हिन्दी उपन्यास सृजन और चिन्तन — नरेन्द्र कोहली, सौरभ प्रकाशन, दिल्ली, 1977.

85. हिन्दी की रचना प्रक्रिया — डॉ. परमानन्द श्रीवास्तव, ग्रन्थं प्रकाशन, कानपुर, 1965.

86. हिन्दी कहानी एक अन्तरंग पहचान — रामदरश मिश्र, नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, प्रथम संस्करण, 1977.

87. हिन्दी कहानी उद्भव और विकास — डॉ. सुरेश सिन्हा, अशोक प्रकाशन, दिल्ली, 1967.

88. हिन्दी कहानी की पहचान और परख — डॉ. इन्दनाथ मदान, लिपि प्रकाशन, दिल्ली, 1973.

89. हिन्दी कहानी में जीवन-मूल्य — डॉ. रमेश चन्द्र लवानिया,

90. हिन्दी कहानी में प्रेम एवं सौन्दर्य तत्व का निरूपण — डॉ. देवक पूरिया, आशा प्रकाशन गृह, नई दिल्ली.

91. हिन्दी कहानी समाज-शास्त्रीय दृष्टि — रघुवीर सिन्हा, अक्षर प्रकाशन प्राइवेट लिमिटेड, 1977.

92.	हिन्दी कहानियाँ और पैशान	उपेन्द्रनाथ अश्क, नीलाभ प्रकाशन, इलाहाबाद, 1964.
93.	हिन्दी कहानियों की शिल्पविधि का विकास	लक्ष्मीनारायण लाल, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1974.
94.	हिन्दी के स्वच्छन्दतावादी उपन्यास	डॉ. कमल कुमारी जौहरी, ग्रन्थम्, रामबाग, कानपुर.
95.	हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास	डॉ. बच्चन सिंह, राधाकृष्ण प्रकाशन, नई दिल्ली, 1970.
96.	हिन्दी साहित्य संवेदना का विकास	रामस्वरूप चतुर्वेदी, लोक भारती प्रकाशन, इलाहाबाद.

-0-

मलयालम

1.	अस्तित्ववादवुम मलयालम साहित्यवुम	डॉ. के. राघवन पिल्लै, डी. सी. बुक्स, कोट्टयम, 1987.
2.	एन्ताण् आधुनिकता	एम. मुकुन्दन,
3.	एम. टी. कथयुम पोरुलुम	(सं) डॉ. एम. एम. बषीर, करन्ट बुक्स, कोट्टयम, 1996.
4.	एम. टी. युटे सर्गप्रपञ्चम	संपादित केरला भाषा इंस्टीट्यूट, तिरुवनन्तपुरम.
5.	कथयुम परिस्थितियुम	जी. मधुसूदनन, करन्ट बुक्स, त्रिश्शूर.
6.	कथयुटे नूट्टान्ट 1, 2	एम. एन. विजयन, एन. बी. एस. कोट्टयम, 2000

7. कथयुटे पिन्निले कथा — टी. एन. जयचन्द्रन, साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघम, 1975.

8. कथा आधुनिकता के बाद — एम. के. हरिकुमार, प्रभात बुक हाउस,

9. केरलत्तिन्टे समूहघटनयुम स्थान्तरणवुम — डॉ. ई. जे. थॉमस, डी. सी. बुक्स, कोट्टयम, 1997.

10. केरलत्तिन्टे सांस्कारिका चरित्रं — पी. के. गोपालकृष्णन, केरल भाषा इन्स्टीटूट, 1994

11. चेरुकथा प्रस्थानं — एम. पी. पोल, पूर्णा पब्लिकेशन्स, कालिकट.

12. तारतम्य साहित्यं;तत्ववुं — प्रो. पी. ओ. पुरुषोत्तमन भाषा इन्स्टीटूट, 1988

13. तारतम्य साहित्य परिचयं — (सं) चात्तनात्त अच्चुतनुण्णी, करन्ट बुक्स, तृश्शूर.

14. तारतम्य साहित्य प्रमाणड्. गल — प्रो. पी. ओ. पुरुषोत्तमन, डी. सी. बुक्स, कोट्टयम, 1997.

15. तारतम्य साहित्य विचारं — (सं) एम. एन. कारश्शेरी, करन्ट बुक्स, कोट्टयम, 1997.

16. नोवलुकलिलूटे — के. पी. शरतचन्द्रन, एन. बी. एस., 1973.

17. नोवल प्रस्थानन्ड्. ल — ए. बालकृष्ण पिल्लै, साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघं, 1965

18. नोवल मलयालत्तिल — के. अशोकन, एन. बी. एस.

19. नोवल साहित्यं — एम. पी. पोल, साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघं, कोट्टयम, 1963.

20. नोवल साहित्य पठनन्ड्. ल — डॉ. टी. बन्ज़मिन, डी. सी. बुक्स, 1994

21.	नोवल; सिद्धियुं साधनयुं	पी. के. बालकृष्णन, एन. बी. एस. कोट्टयम, 1968.
22.	नोवल स्वरूपं	के. सुरेन्द्रन, साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघं, 1968.
23.	नोवलिस्टिन्टे शिल्पशाला	टी. एन. जयचन्द्रन, साहित्य प्रवर्तक सहकरण संघं, कोट्टयम.
24.	भारतीय साहित्य समीक्षा	डॉ. के. एम. जार्ज, केरल भाषा इन्स्टीट्यूट, 1994
25.	मलयाल नोवल साहित्य चरित्रं	प्रो. के. एम. तरकन, साहित्य अकाडमी, केरल.
26.	मलयाल साहित्य चरित्रङ्. गल	पी. के. परमेश्वर नायर स्मारक ट्रेस्ट, एन. बी. एस., कोट्टयम.

-0-

ENGLISH REFERENCE BOOKS

1.	Being and Nothingness	Jean Paul Sartre, Methuen And Co. Ltd., London, 1957
2.	Being and Time	Martin Heidegger, (Tr) J.Stambaugh Harper and Row, New York, 1972.
3.	Comparative Literature Studies - An Introduction	S.S. Prawer, Gerald Duck Worth & Co. Ltd., London, 1973.
4.	Comparative - Literature	R.K.Dhawan, Bahri Publications, 1991.
5.	Existentialism and Human Emotions	Jean Paul Sartre, A Divisional of Philosophical Library, New York, 1957.
6.	Modernity and Contemporary Indian Literature	Indian Institute of Advanced Study, Shimla, 1968.

पत्र-पत्रिकाएँ

हिन्दी

1. आजकल — फरवरी, जून 1980, जुलाई 2000
2. कथा देश — सितंबर 2000
3. तत्भव
4. नई कहानी — मई, सितंबर 1961, मई 1963, सितंबर 1964, अप्रैल 1965.
5. पूर्वग्रह — जुलाई, अक्तूबर 1978, मार्च-अप्रैल 1990 (अंक 97)
6. प्रकर — मई-जून 1973 (अंक 3)
7. मधुमती — सितंबर 2000
8. माया — 15 मई 2000
9. सारिका — जून 1978
10. साक्षात्कार — नवंबर-दिसंबर 1985 (अंक 191, 192)
11. हंस — जुलाई 2000

मलयालम

1.	कलाकौमुदी	5 दिसंबर 1982 (अंक 378), 23 जुलाई 2000
2.	देशाभिमानी	
3.	भाषा पोषिणी	अक्तूबर 1995 (अंक 5), दिसंबर 1999
4.	भाषा साहिती	22 अप्रैल-जून 1982 (अंक 2)
5.	मातृभूमि	14-20 सितंबर 1986, 4-10 फरवीर 1996
6.	समकालिक कथा	जुलाई-आगस्त 1999
7.	समकालिक मलयालम	5 मार्च 1999, जनवरी, मार्च 2000
8.	साहित्य लोकम	सितंबर-दिसंबर 1993